हिन्दी लेखिकाओं की कहानियों में नारी के बदलते स्वरूप की संकल्पना (1960-'80)

Changing Concept of Womanhood in the Short Stories of Hindi Women Writers (1960-'80)

Thesis Submitted

to the Cochin University of Science and Technology

for the Degree of

DOCTOR OF PHILOSOPHY

By

Sudha Balakrishnan
सुधा बालकृष्णन

Prof. and Head of the Dept.
Dept. of Hindi
Dr. N. Raman Nair

Supervisor
Dr. S. Shajahan

Dept. of Hindi

Cochin University of Science and Technology

1986

CERTIFICATE

This is to certify that this THESIS is a bonafide record of work carried out by SUDHA BALAKRISHNAN, under my supervision for PH.D. degree and no part of this thesis has hitherto been submitted for a degree in any University.

Department of Hindi,
Cochin University of
Science & Technology,
Cochin Pin 682022
Date : 25 June 1986.

DR. S. SHAJAHAN
(supervising teacher)

ACKNOWLEDGEMENT

This work was carried out in the Department of Hindi, Cochin University of Science & Technology, Cochin-22 during the tenure of fellowship awarded to me by the Cochin University of Science & Technology. I sincerely express my gratitude to the Cochin University for this help and encouragement.

Cochin-22,
25 June 1986

SUDHA BALAKRISHNAN

[illegible]

प्राक्कथन

सर्जना के क्षेत्र में पुरुष से अधिक नारी का योगदान [illegible] है । प्रकृति द्वारा प्रदत्त इस सर्जनात्मक वरदान से अभिषिक्त नारी अपनी संवेदनाओं को लिपिबद्ध करने में किसी से पीछे नहीं है । नारी की चिरनवीन और कभी न समाप्त होने वाली संवेदनात्मकता को जिस ढंग से स्वातन्त्र्योत्तर कालीन लेखिकाओं ने प्रस्तुत किया है, उसी के आधार पर नारी के बदलते स्वरूप को आंकना इस प्रबन्ध का प्रमुख उद्देश्य रहा है ।

नारी के शारीरिक सौन्दर्य को देखकर उसे उपभोग की वस्तु मानने की प्रवृत्ति आदिम काल से आधुनिक काल तक चली आ रही है और शायद चलती रहेगी । हमें समाज के इस दृष्टिकोण को बदलना है । साथ-साथ नारी संबन्धी पुरानी परिभाषा को संशोधित भी करना है । नारी के बाह्य सौन्दर्य को देखे और उसके आन्तरिक सौन्दर्य को परख कर उसके अस्तित्व और अस्मिता की गहराई को आंकने का प्रयास इस शोध प्रबन्ध में हुआ है ।

वैसे लेखिकाओं की कहानियों पर विचार-विमर्श उतना नहीं हो पाया है जितना होना चाहिए था । इस लिए लेखिकाओं की कहानियों में नारी के बदलते स्वरूप को आँकना अधिक महत्वपूर्ण विषय बन जाता है । इस शोध प्रबन्ध में मेरा उद्देश्य लेखिकाओं की साठोत्तरी कहानियों का अध्ययन करना था, परन्तु उचित सामग्री के अभाव में और कहानी संग्रह अनुपलब्ध होने के कारण मैं ने काल में थोड़ा परिवर्तन किया है और 1955-75 के बीच लिखी कहानियों को ही चुना है । इस विषय से सम्बन्धित आलोचनात्मक ग्रन्थों की कमी के कारण प्राय: सभी अध्यायों में मैं ने मौलिक दृष्टि को अपनाते हुए अपनी ओर से आलोचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया है ।

प्रथम अध्याय में नारी जागरण की संचेतना को आँकने का प्रयास किया गया है । यह अध्याय नारी की उभरती हुई मानसिकता की पार्श्व भूमि को समझाने में सहायक भी है । भारतीय नारी की चेतना को जागरूक बनाने में जिन तथ्यों का सहयोग प्रमुख माना जाता है उन पर इस अध्याय में प्रकाश डाला गया है । शिक्षा की प्राप्ति, सामाजिक अधिकारों की उपलब्धि आर्थिक सुरक्षा की माँग आदि के आधार पर नारी का जो नया स्वरूप उभरता है वह इस अध्ययन की पृष्ठभूमि को सही मायने में आँकने में सहायक हो सकते हैं ।

दूसरे अध्याय में लेखिकाओं की सर्जना शक्ति को स्थापित करनेवाली अन्तर्बाह्य प्रेरणाओं को खोजने का प्रयास हुआ है । संरचना के सन्दर्भों को राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय प्रेरणास्रोतों से जोड़ कर देखते समय लगता है कि पाश्चात्य नारी आन्दोलनों का और नारी मुक्ति की माँग का प्रभाव यहाँ की लेखिकाओं पर एक सीमा तक पड़ा है । इस कारण रचना के आयाम प्रत्यक्ष और परोक्ष प्रभावों से उभरते संवरते लगते हैं । समय के बदलते प्रभाव में राष्ट्रीय मंच पर होनेवाले नैतिक मूल्य विघटन का और सामाजिक परिवर्तन का स्वरूप मन्नू भण्डारी, उषा प्रियम्वदा, कृष्णा सोबती, दीप्ति खण्डेलवाल आदि की रचनाओं में भली-भाँति प्रतिबिम्बित हुआ है ।

पात्र संकल्पना के विविध आयामों को तीसरे अध्याय में प्रस्तुत करते समय पात्रों के जीवन्त क्षणों से जुड़े हुए परिदृश्यों को भी प्रस्तुत करने की कोशिश मैं ने की है । नारी के बदलते स्वरूप को अंकित करनेवाली परिस्थितियाँ समस्याओं से जुड़ कर इस तरह विकट हो जाती हैं कि जीवन की विभीषिका को झेलती हुई आधुनिक नारी संघर्ष केलिए बाध्य हो जाती है । इस संघर्ष के स्वर के अन्दर वे सभी स्वर मुखरित होते हैं जो समस्याग्रस्त कुण्ठा मानसिक, पारिवारिक दायित्वों से ग्रस्त और उन्मुक्त नारी में है ।

चौथे अध्याय में लेखिकाओं की कहानियों के कथ्य पर विस्तार के साथ विचार किया गया है । इस कथ्य के अन्दर रचना की विविधात्मकता झलकती है।साथ ही साथ नारी की स्वतंत्र मनोवृत्ति, वैवाहिक जीवन की समस्याएं, विवाहेत्तर स्त्री-पुरुष संबंधों की विषमताएं, प्रेम के आधुनिक स्वरूप की संकीर्णताएं, वर्ग भेद से उत्पन्न विडम्बनाएं और परम्परागत मूल्यों की विकलताएं आदि का विवेचनात्मक स्वरूप सोदाहरण प्रस्तुत किया गया है । लेखिकाओं की इस कथ्यात्मकता के आधार पर नारी के बदलते स्वरूप का स्पष्ट चित्र उभर कर आने लगता है । आदर्शों को पुराने मूल्यों के कठघरों में दफना कर नये मूल्यों की खोज में निकल पड़ने वाली नारी का स्वरूप वास्तव में आधुनिक भारतीय नारी के बदलते चेहरे का प्रभावात्मक स्वरूप प्रस्तुत कर देता है ।

पाँचवें अध्याय में सम्प्रेषणीयता के आधार और शैलीगत प्रयोगों पर प्रकाश डाला गया है । बदलती हुई संवेदनाओं को नये प्रयोगों से जोड़ कर प्रतीक और बिंबों के अन्दर अनदेखे अर्थों की खोज करने की कोशिश, कहानियों को सम्प्रेषणीयता के नये क्षितिज पर ले जाती है । शैलीगत अध्ययन की दृष्टि से भी लेखिकाओं के प्रयोग महत्वपूर्ण रहे हैं । वर्णनात्मक शैली,

आत्मकथात्मक शैली, पत्रात्मक शैली, चेतनाप्रवाह शैली, फ्लेश बेक शैली, डैरी शैली, नाटकीय शैली आदि के आधार पर लेखिकाओं ने नयी परिस्थितियों का प्रभावात्मक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करके कथ्य के बाह्य पक्ष को बहुत ही सशक्त बना दिया है ।

अंतिम अध्याय में स्त्री की अस्मिता की खोज और उभरती चेतना का मूल्यांकन कहानियों में आयी हुई स्थितियों के आधार पर किया गया है । समूचे कथ्य में आये हुए प्रसंगों की गहराई में विद्यमान चेतना को परखना इस अध्याय का ध्येय रहा है । इस लिए कथ्य में वर्णित स्थितियों के पीछे उभरने वाली चेतना का स्वर ही इस अध्याय में प्रमुख हुआ है और यह स्वर स्वातन्त्र्योत्तर कालीन नारी के चरित्र में, जीवन दृष्टि में और उसकी मानसिकता में आये हुए परिवर्तन को समझाने में सहायक होगा ।

उपसंहार में इस शोध कार्य के परिणामस्वरूप उभर आनेवाले निष्कर्षों पर प्रकाश डाला गया है ।

प्रस्तुत शोध कार्य का प्रणयन कोचीन विश्वविद्यालय हिन्दी विभाग के आदरणीय डॉ॰ एन॰ शाहजहाँ जी के दिशा-निर्देशन में संपन्न हुआ है । शोध के लिए इस अछूते विषय को चुन कर अध्ययन की अदम्य प्रेरणा को जागृत करने का श्रेय उन्हीं को प्राप्त है । उनके प्रामाणिक विचार और तर्क संगत दृष्टि से मैं आद्यन्त प्रभावित रही हूँ । इसके लिए मैं उनकी सदा आभारी रहूँगी । विभागाध्यक्ष डॉ॰ एन॰ रामन नायर जी का उपदेश भी मुझे समय-समय पर मिलते रहे, उनके प्रति भी मैं चिर-कृतज्ञ हूँ ।

हिन्दी विभाग,
कोचीन विश्वविद्यालय,
कोचीन,पिन 682022
ता॰ 25 06 1986

सुधा बालकृष्णन

विषय प्रवेश

पृष्ठ-संख्या

पहला अध्याय 10 - 36

नारी जागरण और सर्जनात्मक प्रेरणा

विषय की ओर - भारतीय नारी कल और आज - नयी प्रतिष्ठा की माँग - कमों में विभक्त नारी - नारी जागरण की परिस्थितियाँ और नवलेखन के आयाम - नारी शिक्षा - विकास की भूमिका - संस्थाओं की स्थापना - सरकारी सहयोग - नारी शिक्षा और आत्मनिर्भरता का विकास - नये दृष्टिकोण का विकास - संघर्ष एवं मुक्यव्युति - नयी मानसिकता और लेखकीय प्रतिबद्धता - लेखिकाओं की दृष्टि - नयी लेखिकाओं को पत्रिकाओं का योगदान - सर्जना के क्षेत्र में नयी लेखिकाएं ।

दूसरा अध्याय 37 - 83

आन्तरिक परिस्थितियाँ और प्रभाव लेखन के संदर्भ में

भारत का नया संविधान - व्यक्ति स्वातन्त्र्य के विकास केलिए शिक्षित स्त्रियों का प्रयास - कानून के क्षेत्र में परिवर्तन - आर्थिक समानता के लिए संघर्ष बाह्य प्रभाव और जागरण की लहर - लेखिकाओं पर परोक्ष प्रभाव -

पृष्ठ-संख्या

नैतिकता के बदलते प्रतिमान और सामाजिक जीवन का बदलता स्वरूप - वैयक्तिक और सामाजिक नैतिकता - नारी और नैतिकता - मूल्य संक्रमण की स्थिति - स्वातंत्र्योत्तर लेखन एवं महिला प्रतिभाएं - प्रतिनिधि प्रतिभाएं - मन्नू भण्डारी - उषा प्रियंवदा - कृष्णा सोबती शिवानी - दीप्ति खण्डेलवाल - मृदुला गर्ग निरूपमा - सेवती - मेहरुन्निसा परवेज़ - मूल्यांकन ।

तीसरा अध्याय 85 - 136

पात्र सर्जना के आयाम

कहानियों के समस्याग्रस्त नारी पात्र - समस्याओं की भूमिका - नारी पात्र और आर्थिक समस्याएं - नारी, पात्र और पारिवारिक समस्याएं - शोषित नारी पात्र अकेलेपन के शिकार पात्र - सात्विक स्वरूप नारी पात्रों में - रुग्ण मानसिकता एवं नारी पात्र - पात्र और मानसिकता - समस्याग्रस्त पात्रों की मनोभूमि - अकेलेपन की शिकार पात्रों की मानसिकता - सात्विक पात्रों के आदर्श एवं उनकी मानसिक स्थिति - पात्रों की रुग्ण मनोवृत्ति - निष्कर्ष ।

पृष्ठ-संख्या

चौथा अध्याय ... १३४ - १९९

कथ्य की विविधता

कथ्य की भूमिका - नारी की स्वतंत्र मनोवृत्ति को उभारने वाली कहानियाँ - मन्नू भंडारी की कहानियाँ - मृदुला गर्ग की कहानियाँ - दीप्ति खंडेलवाल की कहानियाँ - शिवानी की कहानियाँ - वैवाहिक समस्याओं को उभारने वाली कहानियाँ - मन्नू भंडारी की कहानियों में वैवाहिक समस्याएं - उषा प्रियम्वदा की कहानियाँ और वैवाहिक समस्यायें - दीप्ति खंडेलवाल की कहानियों में वैवाहिक समस्यायें - मृदुला गर्ग की कहानियों में वैवाहिक संबंध - निरुपमा सेवती की कहानियों में वैवाहिक समस्यायें - मेहरुन्निसा परवेज़ की कहानियों में पति-पत्नी - विवाहेतर स्त्री पुरुष संबन्ध और समस्यायें - उषा प्रियम्वदा की कहानियों में - मृदुला गर्ग की कहानियाँ और विवाहेतर संबंध प्रेम के आधुनिक स्वरूप को उजागर करनेवाली कहानियाँ मन्नू भंडारी की कहानियों में प्रेम का आधुनिक स्वरूप प्रेम का नया स्वरूप - उषा प्रियम्वदा की कहानियों में दीप्ति खंडेलवाल की कहानियों में प्रेम तत्व - वर्ग भेद को उजागर करनेवाली कहानियाँ - वर्ग भेद को स्पष्ट करने वाली मृदुला गर्ग की कहानियाँ - वर्ग भेद दीप्ति खंडेलवाल की कहानियों में - परम्परागत मूल्यों की पराजय को उजागर करने वाली कहानियाँ - कथ्य के अन्त में ।

पृष्ठ-संख्या

पाँचवाँ अध्याय 201 - 262

भाषा और शैलीगत प्रयोग लेखिकाओं की रचना के सन्दर्भ में

सम्प्रेषणीयता के नये आयाम - भाषा का प्रयोगात्मक पक्ष
भाषा का आन्तरिक सौन्दर्य और उसके आधार - प्रतीक
बिम्ब - बिम्बों के प्रकार - संकेत - भाषा का आंतरिक
सन्दर्भ लेखिकाओं की कहानियों के सन्दर्भ में - प्रतीकों का
प्रयोग - लेखिकाओं की कहानियों में बिंबों का प्रयोग -
लेखिकाओं की कहानियों में संकेतों का प्रयोग - भाषा का
बाह्य स्वरूप लेखिकाओं की कहानियों के सन्दर्भ में -
सपाट भाषा का प्रयोग - अधूरे एवं खण्डित वाक्यों का
प्रयोग - अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग - शैलीगत प्रयोग -
शैलियों के प्रकार - वर्णनात्मक शैली - आत्मकथात्मक शैली
पत्रात्मक शैली - चेतना प्रवाह शैली - पूर्व दीप्ति
[फ्लैश बैक] - शैली - डायरी शैली - नाटकीय शैली
शैलीगत मूल्यांकन ।

छठा अध्याय 263 - 283

स्त्री की अस्मिता की खोज और उभरती चेतना कहानियों के आधार पर

नौकरी पेशा नारी - दायित्व के चौराहे पर - सेक्स की
समस्या - आधुनिक नैतिक बोध - स्त्री धर्म की मान्यताएं -
महान सम्भ्रम - मूल्यांकन ।

उपसंहार 284 - 302

ग्रंथ सूची 303 - 315

पहला अध्याय

नारी जागरण और सर्जनात्मक प्रेरणा

पहला अध्याय

नारी जागरण और सर्जनात्मक प्रेरणा

विषय की ओर

शताब्दियों से गुलामी की जंजीरों में जकड़ी हुई भारतीय नारी को स्वतंत्र बना कर उसे मानवीय अधिकारों से विभूषित करना, अपने में एक महान साधना है । स्वतंत्रता प्राप्ति के चालीस वर्ष बाद भी हमें इस कार्य में निर्णायक सफलता नहीं मिल पायी है । अधिकारों से वंचित, शोषित एवं पीड़ित नारी की अन्तरात्मा की चीत्कार को क्षितिज के आर-पार मुखरित कराने का काम सिर्फ नारी ही कर सकती है , क्यों कि स्त्री-हृदय की धड़कन, उसके अवचेतन की मूकता, और मूक-आक्रोश की पीड़ा, केवल नारी ही आंक सकती है । इस कारण भारतीय नारी के स्वर, सपने और आकांक्षाओं को अनुभूतिबद्ध करने में जितनी सफलता लेखिकाओं को हासिल हुई है, उसका मूल्यांकन करना भी कम महत्व की बात नहीं है ।

भारतीय नारी कल और आज

नारी जागरण की परिस्थितियाँ और नवलेखन के आयाम पर विचार करने से पूर्व भारतीय नारी का परम्परागत स्वरूप और आज की परिवर्तित स्थिति पर विचार करना अत्यन्त आवश्यक है ।

भारतीय नारी का कल का जो स्वरूप था वह आदर्शों और विचारों से गढ़ा हुआ था इस कारण समसामयिक परिस्थितियों से उसका संबंध ठीक नहीं बैठता । पौराणिक मान्यताएं स्त्री को स्वतंत्र सत्ता प्रदान नहीं करती अपितु उसे जन्मजन्मान्तर तक पति की दासी बनने के लिए बाध्य कर देती थी । इस कारण विडम्बनाग्रस्त एक कुंठा और घुटन की परिस्थितियों में जीवन बिताने को वह बाध्य सी हो गयी थी । परम्परा द्वारा स्त्री पर लादा हुआ आदर्श और सतित्व की पाबन्दियाँ कहाँ तक समसामयिक स्थितियों में तर्क संगत लगती है और उनकी प्रासंगिकता कहाँ तक माननीय है यह बात विचारणीय बन जाती है ।

भारतीय नारी का आधुनिक स्वरूप वह है, जो इन परम्परागत मान्यताओं के प्रति संघर्षात्मक रवैया अपनाता है । इस कारण वह परम्परा के प्रति आक्रोश का सूचक बन जाता है । युगों से भोगे अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध आवाज उठाने की शक्ति महिला को आधुनिक परिस्थितियों ने प्रदान की है । इसका मूल्यांकन किये बिना नारी के चारित्रिक विकास में आये हुए परिवर्तन को परखा नहीं जा सकता । आदर्श के उत्तुंग आसन पर बैठी हुई परम्परागत नारी, रोटी के दो टुकड़ों को उपलब्ध करने के लिए बहुतों के पाशों के बीच दमतोड़ने वाली आधुनिक नारी और ईंट और पत्थरों के साथ पसीना बहाने वाली गरीब नारी के भिन्न स्वरूपों का तारतम्य अत्यन्त विडम्बनापूर्ण लगता है । जिस तरह चक्र रहित रथ की तथा तार रहित वीणा की

कल्पना नामुमकिन है उसी तरह स्त्री रहित पुरुष अथवा पुरुष रहित स्त्री की कल्पना तक नहीं की जा सकती । सृष्टि के मूल में स्त्री और पुरुष दो ऐसे तत्त्व हैं जिनके आपसी सहयोग से ही सृष्टि विकास और परिचालन होता है । "नारी और पुरुष जीवन की दो ऐसी रेखाएं है जो यदि मिल जाती हैं तो कोण, त्रिकोण या चतुर्भुज, बहुभुज बना देती है और यदि न मिल सकी तो समानान्तर रेखाएं बनकर अनन्त काल तक खिंचाव की स्थिति पैदा कर सकती हैं । जीवन हो या चिन्तन, ज्ञान हो या इतिहास, संस्कृति हो या समाज परिवार हो या व्यक्ति, राजनीति हो या धर्म , अर्थ हो या काम, भूत हो या वर्तमान नारी पुरुष के समानान्तर चलती है ।"[1] सृष्टि के प्रारंभ में नर और नारी समानाधिकारी थे। सामाजिक उत्थान के साथ पुरुष की स्वार्थपरता की भावना बढ़ती गयी और स्त्री की स्वतंत्रता क्षीण होती गयी । स्त्री के कार्य क्षेत्र को सीमित कर उसे घर की चार दीवारी में कैद कर लिया गया । अपने आप को स्वामी बता कर पुरुषों ने नारियों को सामाजिक बन्धनों में जकड़ दिया और उन्हें पुरुषों की बनायी संकीर्ण लीक पर चलने को मजबूर किया । परिणाम यह हुआ कि स्त्री की सामाजिक स्थिति पुरुष की तुलना में निम्न स्तर की हो गयी । महाभारत की सूक्ति - "अर्द्ध भार्या मनुष्यस्य, भार्या श्रेष्ठतम सखा" शनै-शनै धूमिल होती गयी और नारी पुरुषों की निर्मम चक्की में पिसती रही, शोषित और प्रताड़ित होती रही, अपमान के घूंट पीती रही । कहा जाता है कि नारी की दासता का इतिहास उत्तर वैदिककाल से शुरू हुआ था और आज के इस वैज्ञानिक युग में भी नारी एक हद तक उपेक्षिता ही है । औरत को मात्र भोग की वस्तु समझकर उसके प्रति वासनात्मक दृष्टि रखने की आदिम मानसिकता आज के सभ्य एवं शिक्षित पुरुष समुदाय में भी पायी जाती है ।

पुरुष सदैव सीता जैसी आदर्श पतिव्रता पत्नी की कल्पना करता है लेकिन स्वयं वह राम जैसे महान बनने को तैयार नहीं होता क्यों कि उसे विदित है कि नारी समाज की एक कमजोर इकाई है जिसे वह इच्छानुसार अपने नियमों से आबद्ध कर सकता है । स्त्रियाँ विशेष कर निम्न मध्यवर्ग व कृषक वर्ग की

---

1. सुशीला मित्तल - आधुनिक हिन्दी कहानी में नारी की भूमिकाएं आमुख - पृ॰ 5-6

अपनी स्वतंत्रता और अपने अधिकारों के प्रति आवाज बुलंद नहीं कर पाती। क्योंकि उसपर समाज के नियमों और नैतिक मान्यताओं का अंकुश लगा रहता है जिसका उल्लंघन करने पर उसे समाज से निष्कासित किये जाने का भय रहता है। प्रसिद्ध दार्शनिक रसेल का कथन यहाँ सर्वथा संगत लगता है "समाज में कड़ी मेहनत का बोझ स्त्री पर ही लाद दिया जाता है यह इस लिए नहीं कि कड़ी मेहनत के लिए वह अधिक योग्य है, परन्तु इसलिए कि उसके विरुद्ध आवाज़ उठाने की शक्ति उसमें नहीं है। इतिहास ने यह सिद्ध किया है कि हमेशा अधिकार शक्ति संपन्न वर्गों के हाथों में होता है और कमजोर वर्ग हर वक्त अन्याय का शिकार बन कर विडम्बनापूर्ण जीवन बिताता है[1]।"

इस प्रकार भारतीय नारी आँचल में दूध और आँखों में पानी लिए पुरुष-समाज के अन्यायों से आक्रान्त रही। कभी पुरुषों ने अपनी स्वार्थ की पूर्ति के लिए उसके सौन्दर्य का झूठा वर्णन कर उसे दिल की रानी बनाया तो कभी चरणों की दासी। इस तरह नारी पुरुष वर्ग के लिए अनबूझी पहेली बनी रही।

पुरुषों की ज्यादति और बढ़ते हुए अमानवीय व्यवहार से नारी के हृदय में क्रान्ति की चिन्गारियाँ भड़कने लगीं। लेकिन वंश और कुल की रक्षा के लिए उसने हृदय की चिन्गारियों को आँसुओं से बुझाने का प्रयास किया। पुरुष के अत्याचारों को चुप-चाप मौन साध कर सहती रही। इस युग की नारियों के संबंध में यह कहना अति उत्तम होगा कि "निःस्वार्थ तत्व ही नारी है ...... जहाँ कहीं अपने आप को उत्सर्ग करने की, अपने आप को खपा देने की भावना प्रधान है वही नारी है।

---

1. In almost all peasant communities the hard ward is left to women, not because they are more fit to do it than men, but solely because they have ten muscle and are therefore ten fit. Throughout past history power has been used to give to the strong an andve share of good things and to leave to the weak a life of toil and misery.

Bertrand Russell - Man an society in Ethics and politics, p.136

जहाँ कहीं दुःख-सुख की लाख धाराओं में अपने को दर्शक द्रष्टा के समान निचोड़ कर दूसरे को तृप्त करने की भावना है, वह नारी तत्व है .... नारी निषेध रूप है। वह आनंद भोग के लिए नहीं आती, आनंद लुटाने के लिए आती है।"[1]

महात्मा गांधी ने भी नारी के आदर्श के विषय में कहा है कि नारी त्याग की मूर्ति है। जब वह कोई चीज शुद्ध और सच्ची भावना से करती है, तब पहाड़ों को भी हिला देती है। मैं ने स्त्री को सेवा और त्याग की भावना का अवतार मान कर उसकी पूजा की है।

स्त्रियों के इस प्रकार के त्याग और सद्भावना के कारण ही जीवन जीने के योग्य बना रहता है। विषम परिस्थितियों में भी नारी अपनी मृदुवाणी से पुरुष को सान्त्वना देती है जिस कारण पुरुष धैर्य धारण कर आगे बढ़ता है।

सभ्यता के विकास के साथ स्त्रियों के विचार एवं दृष्टिकोण में व्यापक परिवर्तन लक्षित होने लगा। स्त्रियों को यह बोध हो गया कि त्याग बलिदान, सहनशीलता आदि परम्परागत स्त्री सुलभ गुणों से नारी का उत्थान असंभव है परिणाम स्वरूप "भारतीय स्त्री भी एक दिन विद्रोह कर ही उठी। उसने भी पुरुष के प्रभुत्व का कारण अपनी कोमल भावनाओं को समझा और उन्हीं को परिवर्तित करने का प्रयत्न किया। अनेक सामाजिक रूढ़ियों और परम्परागत संस्कारों के कारण उसे पश्चिमी स्त्री के समान न सुविधाएं मिली और न सुयोग, परन्तु उसने उन्हीं को अपना मार्ग-दर्शक बनाना निश्चित किया[2]।"

---

1. डॉ० सरनाम सिंह शर्मा "अरुण" - कृति और कृतिकार - पृ०104

2. महादेवी वर्मा - श्रृंखला की कड़ियाँ - पृ०45

नयी प्रतिष्ठा की मांग

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम भी नारी को नवोन्मेष एवं नयी जागृति देने में अत्यधिक सहायक रहा है। स्वातंत्र्य संग्राम ने युगों की सुषुप्त नारी के कानों में जागरण का सन्देश फूंका। परिणाम स्वरूप चिर-सन्तप्त नारी-हृदय में नवचेतना की चिन्गारी प्रज्ज्वलित हो उठी और वह अपने दयनीय स्थिति से क्षुब्ध होने लगी। साथ ही उन परम्परागत सामाजिक शृंखलाओं से मुक्त होने का प्रयास करने लगी जिससे उसका उदात्त स्वरूप संकुचित था। "अकुण्ठितमती नारी सामाजिक सम्मान तथा सुख शान्तिमय जीवन को प्राप्त कर सच्चे अर्थों में भागवती बनने के लिए लालायित थी। जब उसने भविष्य को निहारा तो उसे ज्ञात हुआ कि अभी मार्ग बीहड, कंटकाकीर्ण है। उसके सम्मुख सामाजिक कुरीतियों के ऊँचे टीले, रूढ़ियों तथा अमानवीय परम्पराओं के गहरा गर्त, कंधों पर, परिवार का बोझ, तथा सिर पर नव निर्माण का गट्ठर था, परन्तु परिस्थितियों ने उसको सहयोग दिया, उसके प्रेरक और सहयोगी अनेक बन गये।[1]"

परिस्थितियों की प्रेरणा और सहयोग से नारी का स्वाभिमान एक नई दिशा की ओर करवट बदलने लगा। परतंत्रता की बेड़ियों को तोड़कर आत्मनिर्भर बनने की आकांक्षा उसके जागृत मन में उठने लगी। आत्मनिर्भर बनने के लिए शिक्षा की आवश्यकता है तभी वह पुरुष की दासता से मुक्त हो सकती है और समाज में अपना स्वतंत्र अस्तित्व स्थापित कर सकती है। नारी समुदाय में शिक्षा के प्रचार-प्रसार करने एवं उन्हें आत्मनिर्भर बनाने के लिए तत्कालीन समाज-सुधारकों ने भी सराहनीय कार्य किये है। शिक्षा का व्यापक प्रचार-प्रसार होने के कारण स्त्रियों ने एक नवीन दृष्टिकोण के लेकर जीवन में प्रवेश करना

1. सरला दुआ - आधुनिक हिन्दी साहित्य में नारी - पृ.188

प्रारंभ किया । अब न तो वह मध्यकालीन रमणियों की तरह पर्दों में बंद रहती है और न ही पुरुषों की दासता को स्वीकार करने को ही तैयार है । आधुनिक शिक्षा एवं पाश्चात्य प्रभाव के कारण आधुनिक शिक्षित नारी किसी भी हालत पुरुष की गुलामी को स्वीकार करने को तैयार नहीं है "पाश्चात्य जगत में जन्मे हुए उदार विचारों का यह परिणाम हुआ कि नारी अपनी स्वाधीनता के लिए संघर्ष करने लगी । नारी के जागते ही पुरुष इस ग्लानि से भर गया कि सम्पूर्ण इतिहास में नारी पर वह अत्याचार ही करता आया है । स्वतंत्रता का वास्तविक अर्थ आर्थिक स्वाधीनता है। नारी जब तक यह स्वाधीनता नहीं प्राप्त करती, उसका यह दावा झूठ है कि वह स्वतंत्र है किन्तु, पुरुष यह नहीं चाहता कि नारी आर्थिक दृष्टि से स्वतंत्र हो[1] ।"

आज की स्वतंत्रचेतना नारी सभी क्षेत्रों में पुरुषों की बराबरी कर रही है राजनीति, पुलिस, सेना आदि क्षेत्रों में पुरुषों के समान उच्च पदों में स्त्रियाँ भी आसीन है । प्रधानमंत्री के रूप में राष्ट्र के सर्वोच्च पद पर श्रीमती इंदिरा गांधी का आरूढ होना, स्वतंत्र भारत की महिलाओं के लिए एक महान उपलब्धि है । इनके अतिरिक्त राजनीति के क्षेत्र में प्रसिद्धि प्राप्त महिलाएं है तारकेश्वरी सिन्हा, मेनका सतपथी, रामदुलारी सिन्हा, सुचेता कृपलानी, शारदा मुखर्जी आदि । इतना कुछ होने पर भी यह भी कहा जाता है कि जिस प्रकार शिक्षा, ज्ञान-विज्ञान, व्यवसाय के क्षेत्र में महिलाएं आगे बढी है, राजनीति में उस तरह से नहीं आ पायी है फिर भी अमेरिका, जपान, ब्रिटेन जैसे विख्यात देशों की तुलना इस क्षेत्र में भारतीय नारियों की स्थिति सराहनीय है ।

---

1. रामधारी सिंह दिनकर - संस्कृति के चार अध्याय, पृ.63।

इस तरह हम देखते है कि "घर की चहारदीवारियों में बन्द रहने का मुहावरा स्वातन्त्र्योत्तर भारतीय नारी के सन्दर्भ में अर्थहीन और बिगत की बात बन कर रह गया । सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक सभी क्षेत्रों में वह अपना विशिष्ट स्थान बनाने लगी। (The hand that rocks the cradle rule the world)की उक्ति स्वतंत्र भारत की नारी को लेकर शब्दशः सार्थक होने लगी[1] ।"

स्त्री-पुरुष की समानता एक ओर विकास का मार्ग प्रशस्त करती है तो दूसरी ओर पारिवारिक कलह, अलगाव, कुंठा, संत्रासको भी जन्म देता है । आधुनिक शिक्षित नारी आत्म निर्भर होने की वजह से आर्थिक रूप से स्वतंत्र है इस स्वतन्त्रता का कभी कभी वह दुरुपयोग करती है । आर्थिक स्वतंत्रता का यह तात्पर्य नहीं है कि वह उच्छृंखल होकर क्लबों या महफिलों में जाकर गुल खिलाये । ऐसी अनेक स्वतंत्रचेत्ता नारियाँ हैं जो विवाहित होकर भी पर पुरुष से संबन्ध जोड़ती है ऐसे संबंध को वे बुरा नहीं मानती क्यों कि उनकी दृष्टि में यह सब आधुनिकता के अन्दर शामिल है । नारियों की ऐसी उच्छृंखल प्रवृत्तियों के कारण कितने ही बच्चे माँ की ममता से वंचित रह जाते हैं और कितने ही पुरुष ऐसी पत्नियों की ओर से उदासीन होकर पर स्त्रियों के साथे में प्यार ढूंढने जाते हैं ।

भारतीय नारी के विकास में विहंगम दृष्टि डालें तो प्रतीत होगा कि आज का नारी समुदाय विकास के उच्च शिखर पर है लेकिन विश्लेषणात्मक दृष्टि से जाँच करें तो ज्ञात होगा कि कुछ हद तक नारी आत्मनिर्भर होने पर भी पराश्रित है ।

1· सुशीला मीत्तल - आधुनिक हिन्दी कहानी में नारी की भूमिका, पृ·81-82

वर्गों में विभक्त नारी

आधुनिक समाज में स्त्री समुदाय को तीन वर्गों में विभाजित किया जाता है । (1) उच्च वर्ग (2) मध्य वर्ग (3) निम्न वर्ग । साधन संपन्न होने के कारण हर क्षेत्र में उच्च वर्ग की स्वतंत्रता बनी रहती है । अर्थोपार्जन की स्वतंत्रता होने के कारण अर्थ व्यवस्था उनके हाथों में रहती है। अर्थ संपन्न न होने पर भी निम्न वर्ग की नारियाँ एक हद तक स्वतंत्र है । उच्च वर्ग एवं निम्न वर्ग की स्त्रियाँ कोरे आदर्शों के कच्चे धागों से बंधी नहीं होती जिस कारण ये दो वर्ग स्वच्छंद भाव से पुरुषों की बराबरी करते है । मध्यवर्गीय स्त्रियाँ आर्थिक रूप से स्वतंत्र होने पर भी पुरुषों पर आश्रित रहती है किसी विषय पर निर्णय लेना होता है तो अन्तिम निर्णय पति का ही होता है । पति की इच्छा एवं आदेश के अनुसार ही वह अपने विचारों को भी ढालने का प्रयास करती है । "आज भी उनके पुरुष का वाक्य उनकेलिए अन्तिम वाक्य है अपने अधिकारों की बात जान कर भी वे पुरुष का विरोध नहीं कर सकती, इस का कारण उनके परम्परागत संस्कार है । बड़े नगरों के बहुत थोड़े से परिवार जो उंगलियों पर गिने जा सकते है, ऐसे है, जहाँ महिलाओं को उस अवस्था तक स्वतंत्रता मिली हुई है, जैसी पाश्चात्य देश की महिलाओं को । जो न तो सांस्कारिक हीन भावना से ग्रस्त है और न अपने [illegible] विषयों के संबन्ध में पुरुष पर अवलम्बित है । जो वास्तविक रूप से स्वतंत्र है, जिनका स्वतंत्र अस्तित्व है, और जो अपने व्यक्तित्व की स्वतंत्रता पर विश्वास भी करती है ।"[1]

नारी चाहे कितनी भी शिक्षित आधुनिक एवं आत्मनिर्भर क्यों न हो, जीवन के लम्बे सफर में वह एक पुरुष हमसफर को चाहती है जिसके साथ जीवन की सभी अनुभूतियों को वह महत्वपूर्ण बनाना चाहती है और नये सिरे से जीवन को ढालने का प्रयास भी करती है । दीर्घ काल तक अविवाहित रह कर जो अपनी स्वतंत्रता का बखान करती है वह उसका एक दिखावा मात्र जब भी वह अपने अतीत व

1. डॉ॰ देवेश ठाकुर - प्रसाद के नारी पात्र - पृ॰469

गहराईयों में झाँकती है, उसे अवश्य ही पछतावा होता है । "इसका एक कारण शायद यह है कि हज़ारों वर्षों की परम्परा से पुरुष संस्कार का प्रभाव स्त्री के मानसिक संगठन का हिस्सा बन कर रह गया है । इस मानसिक गुलामी से मुक्ति पाना इतनी जल्दी सम्भव भी नहीं है। दूसरा कारण यह है कि पुरुष अब भी स्त्री के स्वतंत्र व्यक्तित्व का हिमायती होकर भी स्त्री को पुरुष संस्कार से मुक्त नहीं होने देता[1] ।"

इस प्रकार हम देखते हैं कि नारी में आत्मविश्वास लाने एवं उसे आत्मनिर्भर बनाने के उद्देश्य से शिक्षा का प्रचार-प्रसार हुआ । अधिकाधिक स्त्रियाँ शिक्षा ग्रहण कर आर्थिक रूप से स्वतंत्र हो गयी । प्राचीन मान्यताओं की अवहेलना कर सामाजिक जीवन में एक नये मार्ग को प्रशस्त करने के लिए नारी अग्रसर रही। परिणामस्वरूप समाज में एक नये राह का निर्माण हुआ, जिस पर चल कर अनेकानेक महिलाओं ने अपने लक्ष्य की पूर्ति की । मंजिल पर पहुँच कर या लक्ष्य प्राप्ति कर भी नारी पूर्ण रूप से सन्तुष्ट नहीं हो पायी । क्योंकि "आधुनिक स्त्री जितनी अकेली है, प्राचीन नहीं, क्योंकि उसके पास निर्माण के उपकरण मात्र है कुछ भी निर्मित नहीं । चौराहे पर खड़े होकर मार्ग का निश्चय करने वाले व्यक्ति के समान वह सबका ध्यान आकर्षित करती रहती है, किसी से कोई सहायतापूर्ण सहानुभूति नहीं पाती । यह स्थिति आकर्षक चाहे जान पड़े, परन्तु सुख कर नहीं कही जा सकती[2] ।"

नारी जागरण की परिस्थितियाँ और सम्बोधन के आयाम

स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरान्त देश में परिवर्तनों की परम्परा का आरम्भ हुआ । जनजीवन के आन्तरिक एवं बाह्य पक्षों पर अमिट प्रभाव डालने वाले इन परिवर्तनों के परिणामस्वरूप समसामयिक परिस्थितियाँ नवीन दिशा की ओ

1. डॉ भगवान दास वर्मा - कहानी की संवेदनशीलता : सिद्धान्त और प्रयोग - पृ॰202

2. महादेवी वर्मा - श्रृंखला की कड़ियाँ - पृ 48

करवट बदलने लगीं । आजादी के पश्चात में उभ्य लेखिकायें नवजागरण की सहर स्त्री को अपने अधिकारों की प्राप्ति के लिए संघर्ष के पथ पर चलने का सन्देश देने लगी । यह एक महत्वपूर्ण मोड़ था जहाँ से नारी चेतना की कहानी शुरू होती है ।

आज़ादी के पूर्व वैसे स्त्री को शिक्षित करने और उसे प्रगति के पथ पर ले जाने के कई प्रयास तो होते रहे । परन्तु इसका वांछित परिणाम दृष्टिगत नहीं हो रहा था । स्वतन्त्रता के साथ नारी को शिक्षित करने और उसे राष्ट्र निर्माण के कार्यों में पुरुष की सहभागिनी बनाने का प्रयास बड़े पैमाने पर होने लगे । नारी को शिक्षित बनाने के उद्देश्य को सामने रख कर कई संस्थाओं ने अथक प्रयत्न शुरू किया । इसके फलस्वरूप एक नई चेतना के प्रकाश की प्रथम रश्मियाँ दिखाई पड़ने लगी । जागरण के रंगों से भरपूर इस वातावरणमें लेखिकाओं ने अपना नव लेखन शुरू किया था। इस कारण लेखिकाओं की रचना प्रक्रिया के सही अर्थ को समझने केलिए महिलाओं के समसामयिक जीवन की भिन्न परिस्थितियों का परिचय आवश्यक हो जाता है ।

नारी शिक्षा-विकास की भूमिका

सामान्य रूप से हम यह मान कर चलते हैं कि "शिक्षा वह माध्यम है जिसके द्वारा मनुष्य व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास कर जीवन के सार्थक उपयोग की क्षमता प्राप्त करता है । इसके आधार पर नारी शिक्षा का उद्देश्य यह है कि हमारे देश की कन्यायें अपने अस्तित्व का सम्यक विकास कर सकें अर्थात् अपने मन, बुद्धि और कर्म को सही दिशा में प्रवृत्त करने की क्षमता प्राप्त कर सकें और वर्तमान परिस्थितियों के अनुसार अपने जीवन को अधिकाधिक सार्थक बना सकें[1] ।"

---

1. डॉ॰ नगेन्द्र - समस्या और समाधान, पृ॰27

बीसवीं सदी के प्रारम्भिक दशकों में ही जागरण की लहर समूचे विश्व को प्रभावित करने लगी । परिणाम स्वरूप शैक्षिक एवं वैचारिक क्षितिज व्यापक बनने लगे । बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में स्त्री शिक्षा पर विशेष बल दिया गया, जिसके फलस्वरूप शिक्षा के क्षेत्र में स्त्रियाँ प्रगति की ओर अग्रसर होने लगीं। जैसे विदेशी सभ्यता के प्रभाव में आने के साथ ही स्त्री शिक्षा के क्षेत्र में व्यापक परिवर्तन दृष्टिगत होने लगा था "नारियाँ रसोई घर के धुएं से अपनी आँखें मलते बाहर आयीं । उनके लिए अलग से स्कूल और कालेज की स्थापना हुई और नारियाँ घर से बाहर निकल कर अध्ययन में जुट गयीं[1] ।" स्त्री शिक्षा को सार्वजनिक बनाने में और उसे नया मोड़ देने में महात्मा गांधी और श्रीमती ऐनी बेसेंट जैसे महान नेतागणों का योगदान भी चिरस्मरणीय है। स्त्री शिक्षा की योजना बनाते समय उनका कहना था, कि इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि स्त्री को दी जाने वाली शिक्षा उसे अपने कार्य क्षेत्र में ज्ञान दिला सकने में समर्थ हो । "इसका यह अर्थ नहीं है कि स्त्री और पुरुष वर्ग में शिक्षा प्राप्त करने संबन्धी कोई सुस्पष्ट रेखा निर्धारित कर दी जाये, परन्तु शिक्षा के क्षेत्र में सुनिश्चित योजना तो कार्यान्वित होनी ही चाहिए जो स्त्री पुरुष को अपनी अपनी दिशाओं में सहयोग प्रदान कर सकें[2] ।" नारी शिक्षा के पथ प्रदर्शकों में रमाबाई रानाडे, लेडी बोस, श्रीमती पी० के० रॉय आदि का नाम विशेष उल्लेखनीय है । इन पथ-प्रदर्शकों ने नारी शिक्षा के मार्ग को और भी विस्तृत किया, परिणामस्वरूप स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् नारी शिक्षा का चतुर्दिक विकास हुआ ।

संस्थाओं की स्थापना

भिन्न-भिन्न प्रदेशों में नारी शिक्षा के प्रचार को प्रोत्साहित करने के लिए अनेक संस्थाओं की स्थापना की गयी । "१९४९ में संस्थापित स्नातिका संघ

---

1. रामेश्वर नारायण शर्मा - नारी एक रूप अनेक - ज्योत्स्ना दिसम्बर 1978
2. डॉ० देवेश ठाकुर - प्रसाद के नारी चरित्र - पृ० ११९

इनमें एक है । स्नातिका संघ विश्वविद्यालयीन स्तर पर शिक्षा प्राप्त महिलाओं के, शैक्षिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक चेतना को विकसित करने एवं उदार आदर्शों की ओर उन्मुख होने के लिए उर्वरतर भाव-भूमि प्रदान करता है । संसार की समस्त महिलाओं को ऐक्य की महान भावना में आबद्ध कर उनके सर्वतोन्मुखी विकास की उपलब्धि इस संघ का महान लक्ष्य है ।[1] स्त्री शिक्षा व उनकी प्रगति को ध्यान में रखते हुए 1953 में समाज कल्याण संस्था की स्थापना हुई जिसका मूल लक्ष्य नारी वर्ग में शिक्षा का प्रचार कर उन्हें रूढ़िवादिता से मुक्त करना था क्योंकि शिक्षा द्वारा ही स्त्रियाँ रूढ़िवादिता से मुक्त हो सकती है "महिलाओं की रूढ़ियाँ दूर करनी है, तो देश की करोड़ों पीड़ित महिलाओं को शिक्षा देनी होगी । शिक्षा के माध्यम से ही अंध-विश्वास, भ्रम और कूपमंडूकता का निवारण हो सकता है ।[2] स्त्रियों में जो अंधविश्वास धर्माडम्बर के प्रति मिथ्या विश्वास, अतिशय आभूषण प्रेम, दहेज प्रथा, पर्दा प्रथा, अस्पृश्यता आदि शिक्षित महिलाएं ही दूर कर सकती हैं । देश की सामाजिक एवं आर्थिक उन्नति के लिए स्त्रियों में शिक्षा का व्यापक प्रचार होना अति आवश्यक है इससे उनमें कर्तव्य बोध और अधिकार बोध की भावना जागृत होती है । अतः "साक्षरता और शिक्षा आर्थिक कार्यक्रमों में स्त्री के सहभागित्व को बढ़ाने के लिए अत्यन्त आवश्यक है ।[3]" इस प्रकार स्त्रियों को शिक्षित कर उनके व्यक्तित्व को सुदृढ़ बनाने में तत्कालीन संस्थाओं का एवं लोकसभा राज्यसभा और विधान मंडलों-परिषदों में चुनी गयी महिला विधायकों का निरन्तर प्रयत्न रहा है ।

---

1. डॉ॰ देवेश ठाकुर - प्रसाद के नारी चरित्र - पृ॰129
2. आशा किशोर - नई धारा - नवम्बर-दिसंबर, पृ॰48
3. Literacy and education are essential to increase women's participation in economic activities.
   Smt. Phulrenu Guha - Socio-political status of women - Women's Development, p.20

सरकारी सहयोग

भारत सरकार ने विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में महिला-शिक्षा पर विशेष बल दिया था। महिला शिक्षा का 75% हिस्सा केन्द्र सरकार ने लिया। 1956 के केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड की सिफारिश पर केन्द्र ने राज्यों को निर्देश दिया गया था कि स्त्री-शिक्षा की प्रगति के लिए आवश्यक कदम उठाए जाएं। ...... तीसरी पंच-वर्षीय योजना के प्रारंभ में नारी शिक्षा के लिए एक राष्ट्रीय कमेटी बनाकर विशेष लक्ष्य निर्धारित किया गया प्रथम तीन योजनाओं में ग्रामीण व कस्बाई क्षेत्रों में स्त्रियों को अध्यापन की ओर आकर्षित करने के लिए अपेक्षित में से न्यूनतम योग्यता और अधिकतम आयु-सीमाएं स्वीकार कर ली गई।[1] इस प्रकार तृतीय पंचवर्षीय योजना में नारी शिक्षा पर 175 करोड़ रुपये खर्च किये किये गये। चौथी पंचवर्षीय योजना में स्त्री-शिक्षा की ओर विशेष ध्यान देते हुए कई नये कार्यक्रमों का निर्माण हुआ। अध्यापिकाओं के लिए निवास की व्यवस्था, पिछड़े व दूरवर्ती प्रदेशों में जाने वाली अध्यापिकाओं के लिए कई प्रकार की सुविधाएं प्रदान की गयी। उनके बच्चों की पढ़ाई, नगरों में उनके लिए होस्टल का प्रबन्ध आदि की ओर विशेष ध्यान दिया गया। अध्यापिकाओं के लिए प्रशिक्षण अवधि में स्टाइपेंड की व्यवस्था, यातायात की सुविधा, चिकित्सा संबन्धी नये प्रयोग आदि सरकार की सुधार नीति के उदाहरण हैं। इसके अतिरिक्त सरकार ने छात्राओं के विकास के लिए कई नये कार्यक्रमों को भी लागू करने का प्रयास किया था जैसे - ग्रामीण प्रदेशों में लड़कियों के लिए छात्रावास, अधिक उपस्थिति के अनुसार पुरस्कार व छात्र वृत्तियां, निःशुल्क शिक्षा व अन्य सुविधाएं पार्ट टाइम शिक्षा का प्रबन्ध, स्वास्थ्य संबंधी नयी व्यवस्था आदि।

---

1. आशा रानी व्होरा - भारतीय नारी दशा दिशा - पृ॰24-25

महिला शिक्षा के लिए उठाये गये नये कदम व विशेष प्रयत्नों के फलस्वरूप आज सभी क्षेत्रों में स्त्रियाँ पुरुषों के समकक्ष खड़ी होकर अपनी प्रतिभा का प्रभावपूर्ण प्रदर्शन कर रही है । शिक्षा और आत्मनिर्भरता के कारण समाज में वह अपना प्रतिष्ठित स्थान बना पायी है ।"अत: आधुनिक नारी यह महसूस करती है कि शिक्षा महिलाओं के लिए बहुत ही आवश्यक है और वे अधिक से अधिक शिक्षा प्राप्ति की कामना करती हुई आगे बढ़ रही है । यानी वह स्त्री और पुरुष की शिक्षा-प्रणाली में किसी प्रकार के भेद-भाव को बनाये रखना नहीं चाहती[1] ।"

नारी शिक्षा और आत्मनिर्भरता का विकास

आधुनिक शिक्षा ने स्त्री को आर्थिक स्वतंत्रता एवं आर्थिक सुरक्षा प्रदान की है।परिणाम स्वरूप स्त्री भी पुरुष के समान परिवार के बोझ को ढोती है । परम्परागत मान्यता यह थी पुरुष रोटी कमाये और स्त्री परिवार पालन करे आज टूट चुकी है । आज की आधुनिक आत्मनिर्भर नारी पुरुषों के समान रोटी भी कमाती है साथ-साथ घर के काम-काजों से निपटती भी है । अत: उसे घर और दफ्तर दो जगहों के कर्तव्यों को निभाना पड़ता है ।

आत्मनिर्भरता के कारण आज की नारी जीवन की विकट समस्याओं का स्वतंत्र निर्णय लेने में समर्थ है । "क्यों कि वह अपने अधिकारों के प्रति सजग है और वह अपनी समस्याओं का समाधान स्वयं करके अपनी स्थिति को उच्च बनाने में संलग्न है । परदे में रह कर वह रक्त के आँसू बहाना श्रेयस्कर नहीं समझती तथा यह अवगुण्ठन उसे सह्य नहीं, यद्यपि युगों से नारी का कार्य क्षेत्र घर में सीमित रहा[2] ।

---

1. Modern women feel that education is necessary for women and they go on aspiring more and more education or that they make no distinction between the education of men and women.

   Raj Mohini Sethi - Modernisation of working women in developing societies, p.40

2. महादेवी वर्मा - शृंखला की कड़ियाँ - पृ.61

आधुनिक शिक्षित नारी नौकरी की ओर आकर्षित है । इसका प्रमुख कारण है आज की आर्थिक स्थिति और शिक्षित नारी का स्वतंत्र चिन्तन । आर्थिक परेशानियों से बाध्य होकर नारी कभी-कभी नौकरी के लिए घर से बाहर कदम रखती है और जहाँ आर्थिक विवशता का सवाल नहीं उठता वहाँ नारी "आत्मसंतोष" के लिए नौकरी करती है । साथ साथ जीवन को ऊँचा उठाने की आकांक्षा भी उसमें होती है ।

स्वतंत्र अस्तित्व रखने वाली स्त्रियाँ भी नौकरी करना चाहती हैं । क्योंकि शिक्षा ग्रहण करने के बाद वह पराश्रित होना नहीं चाहती।यदि वह अविवाहिता है तो माता पिता पर बोझ नहीं बनना चाहती । और यदि विवाहिता है तो पति पर आश्रित होकर उसके अंकुश में अपने अधिकारों को सीमित नहीं रखना चाहती है।"शिक्षा द्वारा प्राप्त स्वाभिमान की भावना उसे पति पर बोझ होने की स्थिति स्वीकार नहीं करने देती इस लिए वह घर की सजाव की अपेक्षा नौकरी चुन लेती है । इससे उसे अपने ज्ञान को प्रयोग में लाने का अवसर भी मिलता है और सामाजिक उपयोगिता का तोष भी[1] ।"

हमारे देश में नारियों का एक ऐसा वर्ग है जो नौकरी मात्र मनोरंजन, समय काटने के लिए, घर की बोरियत को दूर करने के लिए और सौन्दर्य प्रसाधनों को खरीदने के लिए करता है । ऐसी नारियों के समक्ष कोई आर्थिक परेशानियाँ नहीं होती । ये प्रायः उच्च वर्ग या उच्च मध्य वर्ग की महिलाएं होती हैं ।

शिक्षा के सर्वतोन्मुखी विकास के कारण नारी में एक नई चेतना का जागृत हुई है जिसके आधार पर समूची सामाजिक एवं पारिवारिक मान्यताएं पुनर्विचार की विषय बन गयी हैं । शिक्षा के क्षेत्र में नारी को जो सुविधाएं मिली

1· किरन बजाज, हिन्दी कहानी नौकरी पेशा स्त्री की व्यक्तिगत स्थिति, हिन्दी कहानी दो दशक की यात्रा (सं·डॉ· रामदरश मिश्र, नरेन्द्र मोहन) पृ·100

उन्हीं से लैस होकर नारी आज अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हो गयी है । एक नयी अस्मिता की खोज और अर्थ का बोध आजादी के बाद भारतीय नारी समाज में प्रकट होने लगा है जो नारी समुदाय को पौराणिक मान्यताओं एवं रूढ़ियों से स्वतंत्र करने में एक हद तक सार्थक सिद्ध हुआ है।

नये दृष्टिकोण का विकास

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत के सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक क्षेत्र में व्यापक परिवर्तन दृष्टिगत होने लगे । पुराने सामाजिक एवं नैतिक मूल्य बिखरने लगे । प्रजातंत्र के नाम पर राष्ट्र में भ्रष्टाचार, अन्याय, अत्याचार फैलने लगा । अतः देश की परिवर्तित सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक परिस्थितियों ने जन-जीवन में परिवर्तन की एक ऐसी लहर को जन्म दिया जिसके परिणाम स्वरूप समूची मान्यताएं नया रूप धारण करने लगीं । नयी आशाएं और आकांक्षाएं एक ओर नए-नये सपनों का सृजन कर रही थी तो दूसरी ओर स्वप्न भंग की अवस्था में मृत मूल्यों के खंडहरों से चीत्कार करने वाली मानवता का स्वरूप भी उभरने लगा इसके साथ साथ स्वतंत्रता की नई जमीन पर उगे हुए नगर अपने नये स्वरूप को लेकर सामने आने लगे ।

भारतीय जन-मानस की विशेष-दृष्टि मोह, मोहभंग और यथार्थबोध की विभीषिकाओं से प्रभावित होती हुई एक ऐसे धरातल पर केन्द्रित हो गयी, जहाँ से हर तरह के मूल्य विघटित दृष्टिगत होने लगे । "विगत दो दशकों में विभिन्न प्रकार के सामाजिक, वैयक्तिक, नैतिक तथा बौद्धिक मूल्यों का विघटन हुआ राष्ट्र में आज संकीर्णता, क्रूरता, स्वार्थपरता, भ्रष्टाचार आदि का भीषण बोल-बाला है । जीवन के हर क्षेत्र में मिलावट है । पग पग बेईमानी और धोखाधड़ी हो रही है । देश का नेता वर्ग स्वयं आपा-धापी में पड़ा हुआ है ।

राष्ट्र का नेतृत्व दिग्भ्रमित हो गया है । भारत आदर्श शून्यता और मर्यादा-हीनता के युग में जी रहा है। मूल्य विघटन का कारण यही शून्यता और हीनता है[1] ।

स्वाधीनता प्राप्ति के पश्चात् समाज में पीढ़ियों का संघर्ष तीव्र गति से विकसित होने लगा । नयी पीढ़ी एक नयी अस्मिता की खोज में विगत की उपेक्षा करते हुए आगत की संदेहास्पद स्थिति में अपने को असुरक्षित महसूस करने लगी । अतः उनमें आगत और विगत को लेकर संघर्ष होने लगा । उभरती हुई नयी दृष्टि ने एक ओर परम्परा से टक्कर लेने की बात सोची तो दूसरी ओर मूल्यों को भी नकारने की कोशिश की ।

नयी पीढ़ी के लिए मूल्यों को नकारना या मूल्यों का उल्लंघन करना कोई विशिष्ट घटना नहीं । क्यों कि उनमें परंपराग्रस्त मान्यताओं के प्रति एक प्रकार का आक्रोश और वर्तमान जीवन में नये अस्तित्व को बनाये रखने का उन्मेष है ।

आध्यात्मिक चिन्तन और धार्मिक आचरण भौतिक परिवेश से इतना अधिक प्रभावित हो गये कि नयी रोशनी प्रदान करने की शक्ति उनमें नहीं रही । वैज्ञानिक विकास और प्रगति के कारण धर्म से मानव जगत का विश्वास उठ गया "ईश्वरीय सत्ता का महत्व कम होते ही सभी धार्मिक मूल्य एक एक कर टूटने लगे । मनुष्य को संचालित करने वाली महती शक्ति आत्मा पर से भी लोगों का विश्वास उठ गया । मनोविज्ञान ने मनुष्य की आत्मा के स्थान पर अन्तरात्मा या विवेक से परिचित कराया । अब मनुष्य किसी भी धार्मिक मूल्य की अन्ध स्वीकृति के स्थान पर उसे तर्क की कसौटी पर कसने लगा[2] ।" धर्म पर से

---

1. डॉ. हेमेन्द्र कुमार पानेरी - स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास : मूल्य संक्रमण-पृ.2
2. सविता जैन, समकालीन हिन्दी कहानी और मूल्य संघर्ष की दशा - हिन्दी कहानी दो दशक की यात्रा - सं. डॉ.रामदरश मिश्र तथा डॉ.नगेन्द्र-पृ.128

विश्वास उठने के साथ-साथ पाप-पुण्य, हित-अहित आस्था-अनास्था, जन्म-पुर्नजन्म आदि से सम्बन्धित समूची धारणाएं ध्वस्त सी स्थापित होने लगी । क्यों कि वर्तमान जगत के लिए ये धारणाएं मूल्यहीन हो गयी थी ।

संघर्ष एवं मूल्यच्युति

जीने की होड में, अवसरों की प्रतीक्षा में, जीवन को बोझिल बनाते हुए जीने केलिए विवश व्यक्तियों की आंखों के सामने एक धुंआ सा व्याप्त हो गया । फलस्वरूप उनमें दिग्भ्रम का बोध होना स्वाभाविक था जिंदगी की विसंगतियों को झेलते-झूलते मनुष्य दिशाहीन हो गया । दिशाहीनता, कुंठ , आस्थाहीनता ने आहिस्ता-आहिस्ता उन जीवन के कई पहलुओं को अपने शिकन्जे में दबोच लिया । जिंदगी के प्रति आकर्षण और भौतिकता के प्रति लगाव ने उसे जिंदा रहने को मजबूर किया ।" जिन्दा रहने का आकर्षण इतना जबरदस्त है कि इंसान किसी भी हालत में जिंदगी से चिपका रहना चाहता है । ऐसे समय में किसी प्रकार की विकलांगता उसकी जीने की आकांक्षा को कुचल नहीं सकती । वस्तु-सत्य से परे एक ऐसी आन्तरिक सूक्ष्म अनुभूति के सहारे वह जिंदगी के डरावने मार्ग का आक्रमण करता है । इस प्रक्रिया से शायद यही एकमात्र तथ्य स्पष्ट होता है कि मनुष्य कटा हुआ होकर भी कटा हुआ नहीं है । वह अपने अस्तित्व का जिम्मेदार नहीं होगा। लेकिन अस्तित्व में होने के बाद उसे वह भोगना ही है" और निरन्तर अन्तर-बाह्य द्वंद्वों का सामना करता हुआ इस तरह अन्तः बाह्य द्वंद्वों का सामना करते हुए मनुष्य जीवन यापन करने लगा । लेकिन वह अपनी जिंदगी से तृप्त नहीं हो पाया, उसे अपनी जिंदगी में कहीं कुछ कमी, कुछ अभाव नज़र आने लगा । एक और जिंदगी के लिए सजायी गयी सुनहरी कल्पनाओं की रोशनी मन्द पड़ती गयी तो दूसरी ओर निराशा, कुंठा, अवसाद की अस्पष्ट रेखाओं ने नयी पीढी की मानसिकता को आच्छिन्न कर दिया । परिणामस्वरूप मानवीय संवेदनाएं मरते गयीं और जीवन में नीरसता का बोध जन्म लेने लगा । इस प्रकार परिवर्तित हो रही नयी परिस्थितियों में नयी पीढी ने एक ऐसी मूल्य संहिता को जन्म दिया

1• डॉ• भगवतशरण शर्मा : आदमी की जिजीविषा • विवरण और प्रयोग -

जो परम्परागत मान्यताओं को नकारती हुई आधुनिक विसंगतियों के बीच से होकर गुजरने में उसके लिए अधिक सहायक सिद्ध हुई ।

इस अन्वेषण की यात्रा में हिन्दी के समूचे साहित्यकार कहीं अपने दायित्व को संभालते हुए और कहीं अपनी प्रतिबद्धता को संवारते हुए आगे बढ़ने की कोशिश में लग गये । बदले हुए जीवन मूल्य इस यात्रा के सम्बल बने ।

नयी मानसिकता और लेखकीय प्रतिबद्धता

स्वातंत्र्योत्तर काल की नयी पीढ़ी की मानसिकता से पूरी तरह प्रभावित होने के कारण समसामयिक लेखक अपनी लेखनी में नयी मानसिकता और परिवेश दोनों को समाविष्ट करने में सफल हो गये ।"आज परिवेश के प्रति प्रतिबद्धता ही वह अपना दायित्व समझता है, इस लिए आज का कहानीकार किसी जीवन दर्शन विशेष से प्रभावित नहीं है।"[1] इस प्रतिबद्धता के कई कारण है जैसे साम्प्रदायिक दंगे, देश का विभाजन, बेकारी और बेरोजगारी आदि से उत्पन्न हताशा और दिशाहीनता की स्थिति आदि ।

नयी कहानी आन्दोलन के आरम्भ कहानी का जो नया स्वरूप उभरा उसमें कहानीकारों ने भारतीय परिवेश और उसमें व्याप्त विसंगतियों एवं विद्रूपताओं को सजगता के साथ अपनी लेखनी में स्थान दिया । इन कहानीकारों ने व्यक्ति के बदले हुए स्वरूप को व्यावहारिक धरातल पर अभिव्यक्ति दी । मूल्य संक्रमण की परिस्थितियों से गुजरते हुए लेखक एवं लेखिकाओं ने यह महसूस किया कि परम्परागत मूल्यों का समसामयिकता से कोई संबंध नहीं है । इस लिए परम्परागत दृष्टि से जो बातें हेय मानी गयी थी और जो पाप की भूमि पर उगी हुई म्यार आ रही थी वे सब नये परिवेश में लेखकों का विषय बनकर सामने आने लगी ।

1. राजेन्द्र यादव - एक दुनिया : समानान्तर - पृ.26

परम्परावादी जिन बातों को अवैध मानते थे उनमें कुछ बातें यथार्थ जीवन से सम्बन्धित थी । अतः नयी पीढ़ी के लिए उन बातों को अवैध मानना अनुचित लगा जिस कारण नये जीवन मूल्यों की ओर लेखकों की विशेष दृष्टि गयी । परम्परावादियों के लिए ये बदली हुई परिस्थितियाँ बहुत ही अशोभनीय एवं मूल्यच्युत से अनुप्रेरित लग रही थी । परन्तु उपयोगितावाद को लेकर सोचने वाली नयी पीढ़ी उन सबको माननीय ठहराने लगी ।

साठोत्तरी कहानीकारों के सामने बिल्कुल बदली हुई परिस्थितियाँ, बदला हुआ दृष्टिकोण एवं बदली हुई मानसिकता थी । इन्होंने कहानी को जीवन के यथार्थ पहलुओं से हटा कर अभिव्यक्ति से उभरते हुए भावों पर प्रतिष्ठित किया । आदर्श का केंचुल आज का कहानीकार पूरी तरह से छोड़ चुका है उत्साह, आनंद, इत्यादि उसके लिए पुराने मूल्य है क्योंकि शायद जीवन में इनकी कोई सार्थकता नहीं है .... मनुष्य के वर्तमान जीवन में ये बातें अपना अर्थ खो चुकी हैं । वर्तमान संकट के रूप में अनिश्चित मात्र अस्तित्व की व्याकुलता और जीते रहने की प्रक्रिया के अन्तर्गत पिसे कटे जाने के अनुभव सबसे रचनाकार को आदर्श आदि के झूठ की ओर जाने से बचाते हैं[1] ।"

आज के समाज के व्याप्त संबंधों का ठंडापन, कृत्रिमता, बनावटीपन, औपचारिकता से मुक्ति के लिए संघर्ष, यान्त्रिक जीवन से उपजी एकरसता आदि को साठोत्तरी कहानीकारों ने विशेष रूप से उभारा है ।

लेखिकाओं की दृष्टि

साठोत्तरी लेखिकाओं ने भी जीवन के विराट परिवर्तन को अपनी कहानियों में अभिव्यक्त की है । नारी जीवन और उससे सम्बन्धित समस्याएं ही

---

1. मदन केवलिया - समीक्षा जुलाई-अगस्त 1971, पृ.25

इन लेखिकाओं का प्रमुख विषय है । मन्नू भंडारी, उषा प्रियंवदा, मृदुलागर्ग जैसी लेखिकाओं ने नारी के अधुनातन एवं पुरातन रूपों को अपनी लेखनी मे प्रतिष्ठित किया है । इन लेखिकाओं ने एक ओर परम्परागत नारी-सुलभ आदर्शों को सराहा है तो दूसरी ओर नारी को अपना स्वतंत्र अस्तित्व बनाये रखने के लिए प्रेरित भी किया । वैसे लेखिकाओं की दृष्टि में उत्पन्न इस परिवर्तन ने उनकी अस्मिता की नयी सीमाओं को सामने रखने के साथ साथ उनकी प्रतिबद्धता का भी अत्यन्त मार्मिक स्वरूप हमारे सामने प्रस्तुत किया है । इसलिए बदली हुई परिस्थितियों में बदली हुई दृष्टि को लेकर व्यक्ति और परिवेश के बीच अस्तित्व की नयी समस्याओं को लेकर साठोत्तर लेखक एवं लेखिकाओं की कहानी सामाजिक प्रतिबद्धता एवं वैयक्तिक पीड़ा की भावनाओं को प्रश्रय देती हुई आगे बढ़ती है । इन कहानीकारों ने दमघोंटू वातावरण में जीवन जीने को मजबूर आधुनिक मानव की विवशता को पहचाना है जिस कारण इनकी कहानियों में ऐसे पात्रों की आह एवं कराहों की आवाज सुनायी पड़ती है

वैसे साठोत्तरी कहानीकारों की कहानियों में आने वाले पात्र कभी परिवेश से कट कर कभी परिवेश से जुड़ कर, कभी प्रतिबद्ध होकर कभी गैर जिम्मेदार को हौसला देकर निकल जाते है । फिर भी उनकी आन्तरिक पीड़ा इसलिए सच्ची है कि कृत्रिम भाव-बोध से एक ओर जुड़ी है तो दूसरी ओर अन्तःकरण की आवाज से भी प्रभावित है अतः "अपनी गहरी अनुभव सम्पन्नता और पैनी दृष्टि के सहारे साठोत्तरी कहानीकारों ने ऐसे व्यक्तिगत तथा सामाजिक सन्दर्भों का चित्रण किया है, जिनसे स्थितियाँ अपने तटस्थ तथा निर्मम रूप में सामने आयी है । भारतीय परिवेश में बढ़ते हुए अकेलेपन, संत्रास और कुंठाग्रस्त स्थितियाँ अन्तर्मन के सूक्ष्म स्वरूप के साथ उद्घाटित हुई है[1] ।"

1· वचनदेव कुमार - नयी धारा - अप्रैल-मई 1978, पृ·19

नयी लेखिकाओं को पत्रिकाओं का योगदान

साहित्यिक प्रतिभा के विकास में पत्र-पत्रिकाओं का योगदान अत्यन्त महत्वपूर्ण माना जाता है । हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में नवलेखन को प्रोत्साहन देने में हिन्दी क्षेत्र की पत्र-पत्रिकाओं ने एक सीमा तक प्रशंसनीय भूमिका अदा की है विशेष कर लेखिकाओं की लेखनी को विकासोन्मुख बनाने में ये प्रकाशन सहायक सिद्ध हुए हैं । वैसे इस मामले में पाश्चात्य देशों से भी यहाँ की पत्रिकाएं प्रेरणा स्वीकारती रही है ।

आजादी के पश्चात् उभरनेवाली नयी चेतना ने सभी प्रकार के लेखन को बढ़ावा दिया था । शिक्षित नारियों के आगमन के साथ पुरुषों की समानान्तर धारा के रूप में लेखिकाएं भी सर्जनात्मक कार्य में लग गयी थीं। लेकिन विषयगत दृष्टि से महिलाओं का लेखन क्षेत्र कहीं अधिक सीमित था । परन्तु इस सीमा के अन्दर खड़े होकर विषय की गहराई की ओर प्रवेश कर नारी मन के अनदेखे छोरों को छूने की कोशिश उन्होंने की थी । पत्रिकाओं ने इन विशेषताओं पर ध्यान देते हुए महिलाओं के लिए विशेष अंक या तो संपादित किये या महिलाओं के लिए मात्र उपयोगी स्तम्भों का विधान किया या उनके लिए अलग पत्रिकाएं निकाल डालीं । स्वातंत्र्योत्तर काल में होने वाली पत्रिकाओं की ये विकासोन्मुख दृष्टि लेखन के क्षेत्र में नारियों को प्रोत्साहन एवं अनुग्रह के रूप में दिखायी पड़ी ।

पत्रिकाओं में लोकप्रियता की दृष्टि से हिन्दुस्तान, नवभारत आदि दैनिक पत्रों के साथ साप्ताहिक हिन्दुस्तान, धर्मयुग, दिनमान जैसी साप्ताहिक पत्रिकाओं ने भी नारी लेखन को काफी प्रश्रय दिया । इनके अलावा महिलाओं की रुचि एवं उनकी आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए प्रकाशित होनेवाली पत्रिकाओं में सखी और मानुषी आदि ने भी महत्वपूर्ण योगदान दिया था।

इस प्रकार के विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं से पत्रकारिता का क्षेत्र इतना विकसित हो गया कि साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक पत्रिकाओं का प्रकाशन जोरों से होने लगा। इन पत्रिकाओं में जनरुचि की सामान्य सामग्री को उपस्थित करने वाली पत्रिकाओं की संख्या अधिक थी। पाक्षिक पत्रिकाओं में माधुरी, महिला और मासिक पत्रिकाओं में कल्पना, माया, कादम्बिनी, सारिका नवनीत, सरस्वती आदि उच्च स्तरीय लेखन को महत्व देनेवाली पत्रिकाएं थी। उपर्युक्त पत्रिकाओं में प्रकाशित कहानियाँ, लेख, निबंध एवं आलोचना साहित्य से सम्बन्धित पाठकों के लिए एवं अन्य लोगों के लिए बहुत ही लाभदायक सिद्ध हुए। इनसे मार्गदर्शन भी होता था साथ साथ मनोरंजन भी।

इनके प्रचार-प्रसार से साहित्यिक जगत में विकासशील गतिविधियाँ परिलक्षित होने लगी थी। कई लेखिकाओं ने इन पत्रिकाओं के माध्यम से अपनी प्रतिभा एवं पाण्डित्य का प्रदर्शन की। इनके साथ "स्त्री" और "मानुषी" जैसी महिला पत्रिकाओं में नारी की दुर्दशा को व्यक्त कर उसे अपने अधिकारों के प्रति जागरूक बनाये रखने के लिए अनेक लेख प्रकाशित हुए जिनसे महिला जगत में नयी स्फूर्ति एवं नवोन्मेष का उदय हुआ चिरकाल से रसोई घर में पड़ी नारियों में भी परिवर्तन का क्रम ज्वार आने लगा।

सर्जना के क्षेत्र में नयी लेखिकाएं

इस प्रकार पत्रिकाओं के माध्यम से कई उभरती हुई लेखिकाओं को आत्माभिव्यक्ति के उचित अवसर प्राप्त हुए। वास्तव में महिलाओं की लेखनी को नये क्षितिजों का बोध कराने में इन समसामयिक पत्रिकाओं ने बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका अदा की थी। नयी परिस्थितियों ने नये लेखन को एक ओर बढावा दिया तो दूसरी ओर नवागतों की लेखनी और उनकी शैली को खूब संवारा और सुधारा।

फलस्वरूप नये लेखक एवं लेखिकाओं में नया आत्मविश्वास, लेखिकास प्रयोग के प्रति दिलचस्पी और संवेदनाओं के प्रति नयी रुचि जन्म लेने लगी ।

कहानी के क्षेत्र में सबसे ज्यादा प्रोत्साहन एवं दिशानिर्देशन "सारिका", "कहानी" धर्मयुग, कल्पना आदि पत्रिकाओं के माध्यम से हुआ था । लेखिकाओं की कहानियों का अच्छा हिस्सा सारिका, धर्मयुग कल्पना आदि में प्रकाशित होता रहा ।

अनेक पत्रिकाओं ने कहानीकारों की कथा प्रवृत्तियों को लेकर विशेषांक प्रकाशित किये।"इस सन्दर्भ में "अभिज्ञा" का सातवें दशक की हिन्दी कहानी विशेषांक उल्लेखनीय है।"उत्कर्ष" सारिका नागफनी इत्यादि पत्रिकाओं द्वारा भी साठोत्तरी कहानीकारों को लेकर विशेषांक प्रकाशित किये गये[1] ।

इस प्रकार पत्र-पत्रिकाओं ने स्वातंत्र्योत्तर लेखक एवं लेखिकाओं की सर्जनात्मक प्रतिभा को नया मोड़ देने का सार्थक प्रयत्न किया । लेखिकाओं को इन पत्रिकाओं की ओर से विशेष प्रोत्साहन मिलता रहा । इन कारणों से लिखने का और लिखते रहने का मोह लेखिकाओं के अन्तर्मन में जागृत होता गया ।

लेखिकाओं की लेखनी की सर्वप्रथम विशेषता यह थी कि समसामयिक सन्दर्भों से जोड़ कर नारी जीवन के कटु यथार्थ को उसने अभिव्यक्त किया था । उनकी कहानियों में उच्चशिक्षिता नारी का संघर्ष जीवन, मध्यवर्गीय नारी का संघर्षरत रूप तथा रोटी के दो टुकड़ों के लिए दमतोड़ मेहनत कर शोषण की शिकार बनी रहने वाली निम्न वर्गीय नारी का स्वरूप भी मिलता है । विषयगत दृष्टि से प्रेम, सेक्स, विवाह, तलाक, बेरोजगारी, और गरीबी से संबन्धित सभी पिक्षों का जीवन्त रूप उनकी कहानियों में हासिल होता है ।

---

1. नामवर सिंह - नयी कहानी : कथ्य और शिल्प - पृ॰20।

साहित्य को विकास की ओर अग्रसर करने में लेखकों के समान स्वातंत्र्योत्तर लेखिकाओं ने भी आस्थापूर्ण प्रयास किया है। इस सन्दर्भ में पत्रिकाओं का योगदान प्रशंसनीय है ।

इस तरह हिन्दी क्षेत्र की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं ने नारी मन की विविध गत्यात्मक अनुभूतियों को स्वरप्रदान कर समूचे समाज के सामने उसकी मानसिकता को उभार कर रख दिया । पुस्तकों के सीमित पन्नों के अन्दर सिमटती स्त्री की आवाज पत्रिकाओं के माध्यम से हजारों लाखों लोगों तक पहुँची, जिसके परिणामस्वरूप सारा समाज उसके प्रति जागरूक होने लगा । पत्रिकाओं के द्वारा किया गया यह कार्य किसी भी मायने में छोटा नहीं है । इन पत्रिकाओं के माध्यम से जागरण के सन्देश की सूचना देनेवाली नव-लेखिकाएं वास्तव में अपनी प्रतिभा को जन समक्ष प्रस्तुत कर रही थी ।

दूसरा अध्याय

साम्प्रतिक परिस्थितियाँ और प्रभाव ग्रहण के संदर्भ में

दूसरा अध्याय

आन्तरिक परिस्थितियाँ और प्रभाव लेखन के संदर्भ में

भूमिका

महिला प्रतिभाओं की सर्जनात्मक चेतना पर आलोचनात्मक विचार प्रस्तुत करने से पूर्व, उस परिवेश का परिचय प्राप्त करना उचित होगा जिसमें महिला की चेतना जागरूक हुई थी। भारतीय नारी के जागरण के स्वर को मुखरित करने वाली लेखिकायें भारत की आन्तरिक परिस्थितियों और बाह्य प्रभावों से कहाँ तक तालमेल बैठा पाई हैं, यह अपने में एक महत्वपूर्ण प्रश्न है।

महिला-लेखन को सही मायने में समझने के लिये भारत की आंतरिक परिस्थितियों का और समाज पर उसके प्रभाव का मूल्यांकन करना आवश्यक है। अध्ययन के प्रमुख मुद्दे स्वातंत्र्योत्तर कालीन सर्जना से जुड़े हुए हैं और इस कारण उनका उन विशेष परिस्थितियों में आकलन करना आवश्यक बन जाता है।

स्वतंत्रता-प्राप्ति समूचे भारतीयों के लिए एक अविस्मरणीय घटना है। आकांक्षाओं और अभिलाषाओं को पल्लवित करने वाली आज़ादी ने परिवर्तन की लहर को जन्म दिया जिससे हमारे जीवनादर्श और हमारी परिस्थितियाँ बदलने लगीं। जीवन के इस विराट परिवर्तन की ओर तत्कालीन उभरती हुई लेखिकाओं का ध्यान आकृष्ट हुआ। ऐसे अनेक वैविध्यपूर्ण प्रभाव उनकी रचना-प्रक्रिया को स्थापित करते रहे कि नारी जीवन से संबन्धित इनकी मान्यताएं नया मोड़ लेने लगीं। स्वतंत्रता - प्राप्ति के साथ ही देश की आन्तरिक परिस्थितियाँ विशृंखलित होने लगी और इसका ज़बरदस्त प्रभाव लेखिकाओं के मानस पर पड़ा। वे नयी ज़िंदगी के यथार्थ को उभारने के लिए नयी दिशा की खोज में निकल पड़ीं। अत: उन विशृंखलित आन्तरिक परिस्थितियों का समीक्षात्मक अध्ययन अनिवार्य प्रतीत होता है जिनका प्रभाव इन लेखिकाओं पर पड़ा है।

भारतीय स्वाधीनता ने समूचे जन-जीवन में एक नये अध्याय का प्रारम्भ किया था। गुलामी की ज़ंजीरों को तोड़ कर जनता आज़ाद भारत की कल्पनाओं को सार्थक बनाने के लिए जी जान से जुट रही थी। "अत: स्वतंत्रता-प्राप्ति के साथ ही देश का वैचारिक पुनर्जन्म हुआ। आज़ादी केवल राजनीतिक मूल्यों के रूप में ही स्वीकृत नहीं हुई थी बल्कि विचारों की एक नव-क्रान्ति का सपना भी उससे जुड़ा हुआ था। लोकतंत्र ने जब व्यक्ति को मतदान का अधिकार दिया तो वैयक्तिक सत्ता ने अपनी गरिमा का अनुभव किया और पुरातन विधि-विधान, विचार-पद्धति, समाज-संरचना और नैतिक प्रतिमानों के आगे अपने प्रश्न चिन्ह लगा दिये[1] परिणाम स्वरूप सामाजिक मान्यताएं शनै:शनै: परिवर्तित होने लगीं। पुरानी जीर्ण मान्यताओं का बहिष्कार कर नयी मान्यताओं को स्थापित करने का प्रयास होने लगा

---

1. कमलेश्वर - नयी कहानी की भूमिका - पृ.9

इसमें जो कठिनाइयाँ सामने उभर कर आयीं, वे तो अवश्य ही दिल दहलानेवाली थी । फिर भी स्वतंत्र चेतना के विकास ने समाज में नव-चेतना को विकसित करने की कोशिश की । साथ ही साथ समाज को विकासोन्मुख करने के प्रयास जारी रहे । विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से जन जीवन को विकास की दिशाओं की ओर ले जाने की सरकारी कोशिश यहाँ उल्लेखनीय है । परन्तु इसके परिणाम कहाँ तक सार्थक रहे यह विचारणीय बात है । फिर भी आजादी का प्रभाव आकांक्षाओं से भरपूर था और इस लिए रंगीन भी ।

भारत का नया संविधान

भारत का नया संविधान 1950 में लागू हुआ था । संविधान के निर्माण में कुछ प्रमुख महिलाओं ने भी भाग लिया। सुचेता कृपलानी अमृत कौर, अम्मु स्वामीनाथन, पूर्णिमा आदि का नाम विशेष रूप से विचारणीय है । इसके कारण संविधान में स्त्री-पुरुषों को समान अधिकार देने का आश्वासन दिया गया । अतः राजनीतिक क्षेत्र के साथ अन्य कई क्षेत्रों में भी पुरुषों के समान नारियों के अधिकार बढ़ा दिये गये । भारतीय नारी के प्रगति-पथ पर यह एक महत्वपूर्ण मोड़ माना गया । स्त्री-पुरुषों को समानाधिकार प्रदान करने के लिए कई विख्यात हस्ताक्षर कार्यरत रहे । क्योंकि राष्ट्रोत्थान के लिए स्त्री और पुरुष का सहयोग आवश्यक माना गया । अतः देश के उज्ज्वल भविष्य एवं प्रगति को ध्यान में रखते हुए स्त्री और पुरुष दोनों को एक साथ सहयोग की भावना से आगे बढ़ने को प्रोत्साहित किया गया । वैसे संविधान में नारी-स्वतंत्रता एवं स्त्री पुरुष की समानता का तो ऐलान किया गया परन्तु ये सारी बातें सैद्धान्तिक रूप से ही रहीं । क्यों कि संविधान में कही गयी बातों को सामाजिक स्वीकृति नहीं मिल पायी । समाज के ठेकेदार जो नारी को देश की शक्ति, विकास की प्रेरणा मानते थे, वे स्वयं नारी को अबला मान कर उसे भोग्या के रूप में देखने लगे ।

व्यक्तित्व-स्वातन्त्र्य के विकास के लिए शिक्षित स्त्रियों का प्रयास

स्त्रियों पर दबाव एवं रूढ़िगत मान्यताओं का प्रसार होने पर भी पुरुषों के समान स्त्रियां भी व्यक्तित्व-स्वातन्त्र्य के लिए संघर्ष करने लगीं। समाज में अपने अस्तित्व को ठोस रूप देने के उद्देश्य से स्त्रियां मां, पत्नी, प्रेयसी के परम्परागत दायरे से बाहर निकल कर समाज के विराट धरातल पर खड़ी हुईं। अनेक शिक्षित स्त्रियों ने नारी-सुधार एवं उनके व्यक्तिगत विकास को ध्यान में रखते हुए स्त्री-सुधार संस्थाओं की स्थापना की। अखिल भारतीय महिला परिषद ने भी प्रतिवर्ष सेमिनार और महिला सम्मेलनों को आयोजित कर शैक्षणिक स्थिति में सुधार लाने का भरसक प्रयत्न किया। भारत की आज की सभी प्रमुख नेत्रियां इस संस्था की देन थीं। "महिला कल्याण संबन्धी कानून पास करवाने, विधान निर्माण में हिस्सा लेने, संयुक्त राष्ट्र संघ में भारतीय महिलाओं का प्रतिनिधित्व करने, विदेशों में महिला-संगठनों से संपर्क रखकर अंतर्राष्ट्रीय महिला-गतिविधियों में भाग लेने, सभी संकटकालीन स्थितियों में राष्ट्रीय कार्यों में हाथ बंटाने, स्त्री-शिक्षा और बाल कल्याण के लिए वातावरण तैयार करने, जागृति आन्दोलन चलाने आदि सभी महत्वपूर्ण कार्यों का श्रेय इस अखिल भारत महिला संगठन को जाता है[1]।"

इस प्रकार संस्थाओं के अतिरिक्त उस समय के सरकार ने नारी कल्याण के कार्यक्रमों को ध्यान में रखते हुए अनेक नये कदम उठाये। सर्वप्रथम सरकार ने नारी शिक्षा पर बल दिया। तत्पश्चात स्त्रियों को शिक्षित कर पुरुषों के समान स्वाधीन बनाने का प्रयास होने लगा। नई शिक्षा ने महिलाओं के अन्दर आत्म विश्वास को भर दिया। इस आत्म विश्वास के प्रकाश में स्त्रियां यह महसूस महसूस करने लगीं कि राष्ट्र-निर्माण एवं सामाजिक कार्यकलापों में

---

1. आशा रानी व्होरा - भारतीय नारी दशा दिशा - पृ० 162

उनकी भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करनी है अतः शिक्षित नारी अपने अधिकारों के प्रति सजग हो गयीं । "शिक्षा प्राप्त करके स्त्रियों ने एक नवीन दृष्टिकोण लेकर जीवन में प्रवेश करना प्रारंभ किया । अब उनके जीवन का एक मात्र लक्ष्य जैसे-तैसे विवाह करके वासना पूर्ण जीवन व्यतीत करना न रह गया । उन्होंने विविध व्यवसायों-डाक्टरी, वकालत, अध्यापन आदि को अपनाना प्रारंभ कर दिया । उनके ऐसा करने में तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था के प्रति विद्रोह तो था ही साथ ही स्त्रियों की सामर्थ्य तथा बुद्धि का प्रमाण भी था ।"[1] इस तरह नारी शिक्षा का विकास और उसका प्रचार-प्रसार ने सामाजिक संकीर्णता, शोषण, अंधविश्वास आदि के बंधन को तोड़ने को मजबूर किया । आजादी के पश्चात् समाज में जागृत एवं शिक्षित नारी वर्ग का अभ्युदय हुआ । हमारे समाज में नारियों का एक ऐसा भी वर्ग रहा है जिस पर आजादी के बाद की नयी रोशनी का कोई प्रभाव नहीं पड़ा । अशिक्षा और रूढ़ियों के अंधकारमय वातावरण में, अत्याचारों को सहकर, मजबूर जीवन बितानेवाली ये महिलायें हमारे लिये एक प्रश्न चिन्ह है । अधिकतम आज भी हमारे समाज में ऐसी विवशता ग्रस्त अबलाओं का एक बड़ा वर्ग है जो माँ, बेटी और पत्नी के रूप में पुरुष की दासी माना जाता है ।

कानून के क्षेत्र में परिवर्तन

नारी जीवन के विकास को ध्यान में रखते हुए कानून के क्षेत्र मे भी बहुत कुछ परिवर्तन हुआ है । स्त्रियों के सुख सुविधा एवं सुरक्षा केलिए कुछ विशेष नियम बनाये गये जैसे -

1. हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम 1956 (1956 का 30) जिसमें संपत्ति पर पूर्ण स्वामित्व का अधिकार दिया गया है और कोई महिला वसीयत द्वारा संपत्ति के अपने भाग को अपने वारिसों को दे सकती है ।

---

1. शैल कुमारी - आधुनिक हिन्दी काव्य में नारी भावना - पृ.16

2. हिन्दू दत्तक और भरण-पोषण अधिनियम 1956 (1956 का 78) जिसकी धारा 8 के अधीन कोई हिन्दू महिला जो (क) स्वस्थ चित्त हो, (ख) अवयस्क न हो और (ग) विवाहित न हो, या यदि विवाहित हो तो जिसका विवाह भंग हो चुका हो या पति मर चुका हो या पूर्णतः और अन्तिम रूप से संसार का त्याग कर चुका हो या हिन्दू न रहा हो या किसी सक्षम अधिकार क्षेत्रवाले न्यायालय द्वारा उसे असत्स्थचित्त घोषित किया जा चुका हो, दत्तक पुत्र या पुत्री अपना सकती है ।

3. स्त्री तथा लड़की अनैतिक व्यापार निरोध अधिनियम 1956 (1956 का 104) जिसमें जीविका साधन के रूप में वेश्यावृत्ति के लिए स्त्रियों और लड़कियों के व्यापार पर प्रतिबंध लगाया है । अधिनियम में वेश्यालय चलाने, वेश्यावृत्ति से होनेवाली आय को जीविका का साधन बनाने, वेश्यावृत्तिवाले स्थान पर लड़कियों को, स्त्रियों को लाने-ले जाने और वहाँ जाने केलिए उकसाने और ऐसे स्थान पर किसी स्त्री या लड़की को रोकने जैसे अपराधों के लिए दंड की व्यवस्था कीगई है ।

4. हिन्दू अवयस्कता और संरक्षता अधिनियम 1956 (1956 का 32) जिसके अधीन पुत्र या पुत्री को गोद लेने के लिए पत्नी की सहमति वांछित है ।

5. दहेज निषेध अधिनियम 1961 (1961 का 28), जिसकी धारा 3 और 4 के अधीन (एक) दहेज देने या लेने केलिए और (दो) दहेज मांगने केलिए दंड की व्यवस्था की गई ।

6• गर्भ का चिकित्सीय समापन अधिनियम 1971 [1971 का 34], जिसके अधीन मानवीय और चिकित्सीय आधार पर प्रशिक्षित व्यक्तियों द्वारा गर्भपात को वैध करार दिया गया ।"[1]

इस तरह महिला वर्ग को आगे बढ़ाने एवं उनके जीवन में सुधार लाने के लिए सरकार ने बहुत कुछ किया और अब भी वह कार्यरत है । नारी जीवन में आने वाले इन परिवर्तनों को ध्यान में रखते हुए, तत्कालीन लेखिकाओं ने एक ओर स्वतंत्र एवं जागृत नारी वर्ग की कहानी कह डाली तो दूसरी ओर नारी की कराह और आहों को भी सहलाया ।

<u>आर्थिक समानता के लिये संघर्ष</u>

आज़ादी के पश्चात् जितने भी परिवर्तन हुए उनका आधार आर्थिक परिस्थितियों से सीधे जुड़ जाता है क्यों कि अर्थ ही एक ऐसा तत्व है जिसके बल पर समाज का स्वरूप ठोस अस्तित्व बना सकता है । यद्यपि सरकार ने स्त्री शिक्षा को बढ़ावा दिया, नियमों के आधार पर स्त्री के अधिकारों की रक्षा की, और उनको स्वतंत्र बनाने का प्रयास किया । फिर भी सामाजिक धरातल पर नारी का स्वरूप ज्यादा बदल नहीं पाया । इन्हीं परिस्थितियों से प्रभावित होकर महिला लेखिकाओं ने स्वतंत्र चेतना नारी के जीवन की विविधात्मकता को स्थापित करने का प्रयत्न किया । विशेष कर तत्कालीन स्त्रियों की आर्थिक परिस्थितियों से लेखिकाएं बहुत अधिक प्रभावित हुई ।

1• आशा रानी व्होरा - भारतीय नारी : दशा, दिशा - पृ•120-121

स्त्री स्वातंत्र्य की पहली कड़ी आर्थिक स्वतंत्रता है। आर्थिक रूप से स्वतंत्र होने पर ही नारी सच्चे अर्थों में स्वतंत्र हो सकती है। इस कारण आर्थिक स्वतंत्रता के लिए शिक्षित स्त्रियाँ पूर्ण रूप से प्रयत्नशील रहीं। जब स्त्रियाँ आर्थिक रूप से स्वतंत्र होकर समाज में विचरण करने लगीं तो उनके समक्ष अनेक नयी समस्याएं उठने लगीं। उनके व्यवहार एवं चिन्तन में व्यापक परिवर्तन दृष्टिगत होने लगा उधर, पुरुषों के लिए स्त्रियों की यह स्वतंत्रता एवं उच्च पदों पर आसीन होना बहुत ही अस्वाभाविक प्रतीत हुआ। क्यों कि पुरुषों को अपना स्तर गिरता हुआ नजर आने लगा, दूसरी ओर पारिवारिक जीवन विखराव के कगार पर स्थित हो गया। अर्थोपार्जनरत होने के कारण स्त्रियों का ध्यान पारिवारिक जिम्मेदारियों से हट कर दफ्तर के कागजातों पर जा टिका। परिणाम स्वरूप बच्चों के पालन-पोषण एवं घर की समस्याएं नौकरानियों के कन्धे पर आ टिकी। इस प्रकार शिक्षित स्त्रियों के नौकरी-पेशा करनेवाला समूह परिवार से हट कर दफ्तर का एक अंग सा बन गया। परिवार में पति और बच्चों के प्रति नारी की संवेदनाएं घटती गयीं। अतः "एक ओर जहाँ परिवार का परम्परागत स्वरूप टूटा, वहीं दूसरी ओर स्त्री स्वतंत्रता के कारण नवयुवक स्त्रियाँ के स्वरूप में परिवर्तन आया। जो स्त्रियाँ आजीविका के साधन स्वयं जुटाती थीं उनकी मानसिकता में धीरे-धीरे व्यापक परिवर्तन आया। इस प्रकार उन्होंने जीवन और चिन्तन के स्तर पर पुरुषों के समान ही स्वयं को प्रस्तुत करने की कोशिश की।"[1] अतः लेखिकाओं का नारी के परिवर्तित इस नये स्वरूप पर लेखनी चलाना बिलकुल ही स्वाभाविक था।

नारी का कार्य क्षेत्र दफ्तरों की दीवारों से बाहर विकसित होता गया। स्वतंत्र चेतना नारियों ने राजनीति के क्षेत्र को भी अपना कार्य-क्षेत्र मान लिया। अन्य क्षेत्रों में जिस तरह महिलाएं आगे बढ़ीं, राजनीति में उसी तरह आगे नहीं आ पायीं। फिर भी अन्य विदेशी राज्यों जैसे ब्रिटेन,

---

1. डॉ॰ सन्तबख्श सिंह - नयी कहानी : कथ्य और शिल्प - पृ॰44

अमरिका, जापान जैसे उन्नत देशों की स्त्रियों की अपेक्षा भारतीय स्त्रियों की स्थिति इस क्षेत्र में अच्छी रही है और अब भी अच्छी है । स्त्रियों ने राजनीतिक क्षेत्र में प्रवेश कर अपनी क्षमता और सामर्थ्य को दर्शा कर विश्व-विख्यात हो गयीं । लेकिन इसके साथ उनके जीवन में कई सवाल और समस्याएं उठ खड़ी होने लगीं । क्यों कि सार्वजनिक क्षेत्र में काम करनेवाली महिलाओं का चरित्र एक सीमा तक चारदीवारी में बंद रहने वाली महिलाओं पर भी प्रभाव डालने लगा । इस तरह चारित्रिक आचरण के क्षेत्र में नैतिक समस्याएं नया रूप धारण करने लगीं और उसकी नयी व्याख्या भी प्रस्तुत की जाने लगी यह एक महत्वपूर्ण परिवर्तन की सूचना थी ।

लेखिकाओं की लेखन प्रक्रिया में उपर्युक्त परिवर्तनों का प्रत्यक्ष एवं परोक्ष प्रभाव देखा जा सकता है । समाज शास्त्रीय दृष्टि से भी ये प्रभाव लेखिकाओं की मानसिकता को स्थापित करने में अत्यधिक सफल रहे । उनकी दृष्टि एवं सृष्टि को देश की आन्तरिक परिस्थितियों ने पूर्णतया प्रभावित किया है। अन्यथा स्वातंत्र्योत्तर कालीन महिला लेखन में इतनी विविधता और नवीनता का विधान नहीं हो पाता ।

बाह्य प्रभाव और जागरण की लहर

सर्जनात्मक चेतना ऐसी परिस्थितियों से प्रभावित रहती है जिसका संबन्ध देश तक ही सीमित नहीं रहता । नयी पीढ़ी की लेखिकाएं जो अपने को विश्वव्यापक समुदाय के अंग समझती हैं, बाह्य परिस्थितियों से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकतीं । विश्व के कोने-कोने में होनेवाली घटनाओं एवं अन्य देशों में होने वाले महिला आन्दोलनों से ये लेखिकाएं समय-समय पर प्रभावित होती रही है । परिणामस्वरूप उनकी लेखनी में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की नवीनता का विधान होने लगा है ।

"वैसे नारी विद्रोह एक दिन का परिणाम नहीं है इसका वर्तमान स्वरूप एक या सवा शताब्दि के सधे बरसे में किये गये कार्यों का नतीजा है[1]।"

परिचम के नारी आन्दोलन

आज से कई वर्ष पूर्व परिचम में नारी मुक्ति आन्दोलन प्रारंभ हुआ था। नारी के अधिकारों के प्रति विश्व समुदाय को जागरूक करना इसका उद्देश्य था। नारी आन्दोलन सर्वप्रथम अमेरिका में हुआ था। "8 मार्च 1857 में न्यूयार्क में कपड़े की मिलों की कामगार स्त्रियों ने अधिक वेतन व काम के घंटे 15-16 से घटाकर 10 करने की मांग को लेकर एक प्रदर्शन किया। विश्व में महिलाओं का यह प्रथम प्रदर्शन था, जिसे उस समय की ट्रेड युनियनों ने भी पसंद नहीं किया। किसी भी प्रकार के समर्थन के अभाव में यह आंदोलन पुलिस द्वारा कुचल दिया गया था, पर महिला-इतिहास में एक अमिट लकीर छोड़ गया। इस प्रथम संगठित प्रदर्शन को ही महिला आंदोलन की प्रेरणा मानते हुए 8 मार्च सदा के लिए "अंतर्राष्ट्रीय महिला संघर्ष दिवस के रूप माना जाने लगा है[2]।"

अमेरिका में नारी मुक्ति आन्दोलन सफ्रेजिस्ट मुवमेन्ट के नाम से मशहूर हो गया। नारी वर्ग ने समस्त देश में अपने निजी अधिकारों की मांग की, विशेष कर राजनीतिक अधिकारों की। प्रारंभ में उन्हें सफलता नहीं मिली, किन्तु नारी वर्ग का जबरदस्त संघर्ष एवं कड़ी मेहनत ने उन्हें लक्ष्य प्राप्ति के लिए सहायता प्रदान की और लगभग 1015000 वयस्क महिलाओं को मताधिकार का अधिकार मिला।

---

1. The feministrevolt is not the result of a day. It has gathered its present volume through steady work extending over a centuary and a quarter.
   - A.R. Wadia, The Ethics of Feminism, p.28

२. आशा रानी व्होरा - भारतीय नारी दशा, दिशा - पृ० १६५

प्रथम विश्वयुद्ध के बाद महिला आन्दोलन में तीव्रता आयी। यूरोप जैसे विकासशील देश में महिलाओं का युद्ध-विरोधी नारा गूंजने लगा। मार्च 1923 में कई महिलाओं ने पेरिस की सड़कों पर प्रदर्शन किया पर उन्हें सफलता नहीं मिली। जर्मनी में हिटलर के कठोर शासन-काल में सब लोगों के साथ स्त्रियों की स्वतंत्रता को भी दबा दिया गया। फिर भी वे हिम्मत नहीं हारीं। हिटलर शासित हर देश में बच्चों को निर्वासित किया गया साथ साथ विरोधी आन्दोलनों में भाग लेकर अपने अधिकारों की मांग करने लगीं।

द्वितीय महायुद्ध के बाद आन्दोलन ने और भी उग्र रूप धारण किया "1945 में पेरिस में वीमेंस इंटरनेशनल डेमोक्रेटिक फेडरेशन" की स्थापना कर, सभी देशों की स्त्रियों द्वारा आंदोलन को विश्व-स्तर पर संगठित रूप में चलाने का निश्चय किया गया। 1946 में युद्ध-पीड़ित बच्चों की सहायता के लिए सहायता-सप्ताह मनाया गया। 1946 से 1966 तक अगले 20 वर्ष तो फिर अधिक सरगर्मियों के रहे। महिला-अधिकारों की लड़ाई के साथ निरस्त्रीकरण और शान्ति के पक्ष में जोरदार आवाज उठाई जाने लगी[1]।" 1945 में ही पुर्तगाल की महिलाओं को सरकार ने महिला मताधिकार की मान्यता प्रदान की। 1946 ई. में चीन और जापान की महिलाओं को यह अधिकार मिला और 1950 में बेल्जियम को दूसरे महायुद्ध के पश्चात फ्रान्स के जनरल डी गोल ने प्रथम निर्वाचन के अवसर पर नारी को मताधिकार प्रदान किया। इस काल में इटली की नारियों को भी मताधिकार प्राप्त हुआ।

---

1. आशा रानी व्होरा - भारतीय नारी दशा, दिशा - पृ.156

वैसे पश्चिमी नारी मुक्ति आन्दोलनों का सीधा प्रभाव भारतीय समाज पर प्रत्यक्ष रूप से दृष्टिगत नहीं होता । परन्तु परोक्ष रूप से दृष्टिगत इसका प्रभाव धीरे धीरे सम्पूर्ण नारी वर्ग पर हावी होता नजर आया । अंग्रेजी शिक्षा से प्रभावित हो जाने के कारण भारतीय महिलाएं पाश्चात्य नारी जागरण की परिस्थितियों से परिचित होती गयीं और आजादी के आन्दोलन के समय ही इसका प्रभाव दिखायी पड़ने लगा । परन्तु स्वातन्त्र्योत्तर काल में साहित्यिक एवं सांस्कृतिक आदान प्रदान के माध्यम से एक ऐसी लहर भारतीय परिवेश में दिखायी पड़ने लगी जिसके प्रभाव से नारी चेतना जागरण के स्वरों को संजोने लगी । यहाँ से स्त्री की आजादी और उसके जीवन में आये परिवर्तन को लेकर सर्जन का एक महान अध्याय शुरू होने लगा । लेखिकाएं इस प्रयास में अपना योगदान देती आयी हैं ।

भारत में नारी चेतना के विकास को निश्चय ही हम पश्चिम की देन मानते हैं "पश्चिम से जागरण की जो आवाज आयी तो भारतीय नारियों ने स्वतंत्रता की महत्व को महसूस किया । प्रजातन्त्र के आदर्शों के प्रभाव ने उनको जागृत किया और वे नये जीवन की हलचल को महसूस करने लगीं[1] ।"

यद्यपि पाश्चात्य नारियों के समान भारतीय नारी में भी स्वतंत्र चेतना का विकास होने लगा तथापि पश्चिम के नारी आन्दोलनों एवं भारतीय नारी आन्दोलनों में काफी अन्तर है । भारतीय स्त्रियों के समक्ष स्त्री स्वतंत्रता अथवा पुरुषों से समानाधिकार की कोई नई स्थिति नहीं थी बल्कि वे अपनी खोई हुई स्वतंत्रता एवं अधिकारों को पुनः प्रतिष्ठित करना चाहती थीं ।

---

1. Indian women experienced an air of freedom when a call of resurgence came to them from the west. The impact of democratic ideas rejuvenated women and they began to feel that the stir of New life.

PRATHIMA ASTHNA - Women's movement in India, p.22

इस कारण भारतीय स्त्रियों की विचारधारा एवं चिन्तन में पाश्चात्य नारियों से भिन्न दृष्टि दिखाई पड़ती है । कई दृष्टियों से पाश्चात्य आन्दोलन भारतीय नारी को नयी शक्ति प्रदान करते रहे ।

वस्तुतः पाश्चात्य आन्दोलनों ने भारतीय नारी के मानसिक, सामाजिक आर्थिक एवं शैक्षिक स्तर को परिवर्तनोन्मुख कर उसे पूर्ण रूप से सक्षम बनाने का प्रयत्न किया । पाश्चात्य शिक्षा का बहुत अधिक प्रभाव भारतीय नारी पर पड़ा । पाश्चात्य शिक्षा से प्रभावित भारतीय नारी पारिवारिक एवं सामाजिक जीर्ण मान्यताओं से अपने आप को मुक्त करती गयीं । परिणामस्वरूप नारी शिक्षा प्राप्त कर समाज के सीमित दायरे से बाहर निकलने लगी ।

विकसित देशों में जो आर्थिक, वैज्ञानिक एवं तकनीकि प्रगति हुई, उसके आधार पर समाज शास्त्रीय मान्यताएं बदलने लगीं । बदलती हुई समाज शास्त्रीय परिस्थितियों में नारी की भूमिका की पुर्नव्याख्या होने लगी । विकासशील देशों में इसका प्रभाव पड़ने लगा । फलतः मध्ययुगीन अवधारणाएं क्षीण होने लगीं । परिवार के केन्द्र बिन्दु के रूप में स्त्री का जो स्थान था वह पुनः स्थापित होने लगा । आर्थिक उन्नति और उच्च शिक्षा के प्रभाव ने नारी को परम्परा के रूढ़िग्रस्त मान्यताओं के शिकंजों से मुक्त किया । आजादी के बाद भारतीय समाज में स्त्री को एक हद तक विशिष्ट मान्यता प्राप्त होने लगी ।

आजाद भारत के शिल्पियों के समक्ष नारी के व्यक्तित्व से सम्बन्धित पाश्चात्य विचार नयी प्रेरणा के स्रोत को लेकर उपस्थित हुए । प्राचीन मान्यता "न स्त्री स्वातन्त्र्यमर्हति" वाली सूक्ति बिल्कुल ही अप्रासंगिक लगने लगी । वास्तव में पाश्चात्य नारी आन्दोलनों का, भारतीय समाज पर यह प्रथम प्रभाव था । इस प्रभाव से प्रेरित होकर संविधान के शिल्पियों ने नारी को समान अधिकार देने की बात सोची थी और संवैधानिक नियमों के अन्दर उन्होंने स्त्री को पुरुष की

सहभागिनी के रूप में और समान अधिकारों से युक्त व्यक्ति के रूप में उद्घोषित कर दिया। इस दृष्टि से यह एक ऐतिहासिक महत्व की बात रही। क्योंकि विश्व समुदाय में जनसंख्या की दृष्टि से भारत का दूसरा स्थान है और भारत ने इस प्रकार महिलाओं के अधिकारों की रक्षा कर विश्व महिला समुदाय के प्रति न्यायपूर्ण कारवाई की थी।

लेखिकाओं पर परोक्ष प्रभाव

स्वातंत्र्योत्तर भारत की महिला लेखिकाओं में पाश्चात्य देशों से आने वाले आन्दोलनों का जो प्रभाव पड़ा था वह प्रत्यक्ष न होकर परोक्ष था। इस का कारण यह था कि हमारे देश की महिलाओं की समस्याएं पाश्चात्य महिला समस्याओं के समान जटिल नहीं थी। "पश्चिम की नारी प्राचीन काल से शोषित रही है। पहले वह प्रेयसी व पत्नी पहले है, माँ बाद में और माँ के रूप में भी पूजित नहीं रही। पत्नी व प्रेयसी रूप में भी वह भोग्या पहले है जिसे पुरुष को आकर्षित करने के लिए अपने शरीर को, शरीर पर अत्याचार करके भी, सजाना-संवारना है। .... देह साधना और देह भोग के इस अतिरेक के फलस्वरूप आई सामाजिक विकृतियों के प्रति विद्रोह के रूप में और अपने स्वतंत्र अस्तित्व की मान्यता के लिए वह 'नारी मुक्ति आन्दोलन ने जन्म लिया'।[1]" पाश्चात्य और भारतीय संस्कृतियों में जो दृष्टिगत अन्तर है वह पाश्चात्य नारी की समस्याओं को उसी तरह स्वीकार करने में बाधा डालता है। इसका अर्थ यह निकलता है कि भारतीय नारी की अस्मिता पूर्णतया पाश्चात्य नारी की अस्मिता से भिन्न है। नारी जीवन में समानवर्ती परिस्थितियाँ आ सकती है लेकिन पाश्चात्य परिस्थितियाँ कभी भी भारतीय जन जीवन के अंग नहीं बन सकती।

---

1. आशारानी व्होरा - नारी शोषण आइने और आयाम - पृ.240

पाश्चात्य नारी आन्दोलन और नारी समस्याओं का हिन्दी लेखिकाओं पर प्रभाव पड़ा वह एक सीमा तक सैद्धान्तिक पहलुओं को लेकर हुआ है। इसके पीछे काम करने वाली भिन्नाएं साहित्यिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक रही है। इन्हीं के माध्यम से भारतीय लेखिकाओं ने पाश्चात्य नारी की मानसिकता को देखने का एवं परखने का प्रयास किया है। इसी के आधार पर भारतीय परिवेश के अनुकूल नारी स्वतंत्रता से सम्बन्धित नये विचारों को स्थापित करने में वह सफल बनती रही। इसका यह तात्पर्य है कि भारतेतर देशों से आनेवाला प्रभाव जिसका हम व्यापक प्रभाव के अन्तर्गत विचार कर रहे वे प्रमुख रूप से सांस्कृतिक एवं साहित्यिक आदान-प्रदान के आधारों पर हुआ था। इस कारण वह सैद्धान्तिक अधिक था और व्यावहारिक कम।

ये बाह्य कारण इतने तर्क संगत एवं वैज्ञानिक थे कि उनको नकारने के लिए भारतीय पुरुष के सामने कोई प्रमाण नहीं था। पुरुषों में भी एक ऐसा वर्ग उभर रहा था जो विशाल दृष्टि का रुख लेते हुए भारतीय नारी की मांगों का समर्थन कर रहा था। स्त्री के अधिकारों की रक्षा के लिये यह वर्ग हमेशा क्रियाशील रहा है और इस की सहायता से नारी की दबी हुई आवाज फिर बुलन्द होने लगी है।

नैतिकता के बदलते प्रतिमान और सामाजिक जीवन का बदलता स्वरूप

जब जनसमुदाय किसी व्यवस्था के आधार पर अपने जीवन को स्थापित करने लगता है तब वह समुदाय समाज कहलाता है। व्यवस्था को बनाये रखने के लिए समाज के अन्दर बसनेवाली जातियां कुछ नियमों का निर्धारण करती हैं। ये नियम परम्परागत मान्यताओं के आधार पर जाति-विशेष के विश्वास एवं मनोवैज्ञानिक विकास के आधार पर बनते हैं इस प्रकार बननेवाली आचरण संहिता को सामाजिक व्यवहार का आधार मान लिया जाता है। नैतिकता उन

आचरण संहिताओं में से एक है, जिसके आधार पर कोई विशेष समाज अपने अस्तित्व की विशेषता को उद्घोषित करता हुआ, भले-बुरे की व्याख्या करता हुआ अपने समाज के सदस्यों के लिए पथ निर्धारित करता है ।

नैतिकता के आधार

नैतिकता का संबन्ध जाति-विशेष, समाज-विशेष, राज्य विशेष और राष्ट्र विशेष से है । व्यापक दृष्टि से देखने पर समूची मानवता के लिए निर्धारित की जानेवाली नैतिकता कुछ ऐसे व्यापक नियमों पर आधारित रहती है जो आत्यन्तिक रूप में विश्व-मानव की भलाई-बुराई से सम्बन्धित रहते हैं । "परम्परागत रूप से नैतिकता नैतिक समस्याओं से निपटने के लिए साधारण नैतिक सिद्धान्तों का विश्लेषण, मूल्यांकन एवं विकास की ओर लक्ष्य करती है ।"[1] वैसे नैतिकता को किसी जाति-विशेष या समाज विशेष से जोड़कर उसकी व्याख्या करना ही अधिक समीचीन है क्यों कि प्रत्येक जाति की मान्यताएं और विश्वास, परम्पराएं आध्यात्मिक एवं भौतिक परिस्थितियों से प्रभावित रहती है । अतः नैतिकता के संबंध में आत्यन्तिक रूप से सर्वमान्य व्याख्या प्रस्तुत करना असंभव बात भी लगती है ।

जहाँ तक भारतीय जन समुदाय का सवाल है नैतिकता यहाँ के आध्यात्मिक चिन्तन एवं पाप-पुण्य के विश्वासों से, कर्म एवं पुर्नजन्म के सिद्धान्तों से प्रभावित रही है । वैसे भारतीय जीवन का आधार धार्मिक रहा है और इस कारण उसका लक्ष्य भी भौतिक साधना की अपेक्षा आध्यात्मिकता की ओर उन्मुख होना है । "इस लिए हिन्दू नैतिकता वह मानसिक एवं

---

1. Traditionally ethics has undertaken to analyse, evaluate and develope normative moral criteria for dealing with moral problems.

Encylopaedia Britanica, Volume-6, p.976

मनोवैज्ञानिक नैतिकता का सम्मिलित स्वरूप है जिसका लक्ष्य उस दर्शन की ओर है जो परमात्म तत्त्व पर आधारित होकर आध्यात्मिक जीवन की ओर मुड़ जाता है[1]।

इस तरह आध्यात्मिक मनोवृत्ति से सम्प्रेषित होने के कारण भारतीय नैतिकता का आधार अलौकिक है। विशेषकर हिन्दुओं की नैतिकता धार्मिक पक्ष की ओर अधिक झुकी हुई है। "हिन्दुओं की नैतिकता का आधार त्रिमुखीय आध्यात्मिक जीवन है जिसके अन्दर सामाजिक और वैयक्तिक नैतिकता के साथ अनुभूतिगम्य परमात्मतत्त्व से सम्बद्ध जीवन भी जुड़ा रहता है[2]।"

परन्तु भारत की आधुनिक परिस्थितियों में परम्परा द्वारा स्वीकृत नैतिक मान्यताएं कितनी प्रासंगिक है यह विचारणीय बात लगती है। वे इसलिए है कि आज हमारे सामाजिक जीवन का ढांचा आध्यात्मिक सिद्धान्तों पर आधारित न रहकर अधिक भौतिकोन्मुख हो गया है। इस लिए मूल्यों की पुनर्व्याख्या और समूची नैतिकता की पुर्नव्याख्या आवश्यक बन जाती है। क्यों कि सामाजिक विकास एवं परिवर्तन के साथ साथ नैतिक मान्यताएं भी बदलती रहती हैं। प्रारम्भिक काल में नैतिकता का संबन्ध धर्म एवं आध्यात्मिकता से जुड़ा हुआ था। परन्तु जब धर्म स्वयं परिवर्तित होकर नया रूप धारण करने लगा तो नैतिकता भी धीरे-धीरे विशृंखलित होने लगी और नैतिकता के नये नये आयाम विकसित होने लगे।

---

1. Hindu Ethics is the social Ethics and psycological Ethics and culminates in the philosophy of the absolute which is the consummation of the spiritual life.
   Sushil Kumar Maitra, M.A., The Ethics of Hindus, p.1

2. The Ethics of Hindu's is based on the three fold scheme of the spiritual life comprising the stages of society, subjective morality and the life absolute and transcendental.
   Ibid - p.1

'वर्तमान समय में नैतिक मूल्यों की समस्या और भी विकट इसलिए हो गई है कि प्राचीन शास्त्रीय, धार्मिक अथवा ईश्वर संभूत धर्मिकता इस युग में क्रमश: क्षीण होती जा रही है और आज नैतिकता का आधार एक मानव संभूत नीति खोजा जा रहा है। जो दायित्व अब तक ईश्वर या धर्म पर था, वह अब मानव ने स्वयं ओढ लिया है[1]।'

समाज पर नैतिक मूल्यों का नियंत्रण होना अनिवार्य है अन्यथा समाज में श्लील-अश्लील, पाप-पुण्य आदि का कोई मानदण्ड नहीं होगा और समाज में उच्छृंखलता बढती जायगी। आधुनिक युवा वर्ग नैतिकता को गिराकर स्वच्छंद जीवन यापन करना चाहता है। भारत के कुछेक जगहों में जहाँ समाज अत्यधिक आधुनिक एवं शिक्षित है, सेक्स का उन्मुक्त प्रदर्शन, अश्लीलता एवं स्वच्छंद प्रेम की भावना को प्रश्रय मिल रहा है। ऐसे समाज में भ्रष्टाचार अन्याय स्वेच्छाचार आदि की स्पष्ट झलक देखी जाती है। ऐसे समाज में परिवार का विशृंखलित रूप देखा जाता है। पति पत्नी दोनों एक दूसरे के अनैतिक आचरण को देखकर भी अनदेखा कर देते हैं। ऐसे समाज में पति और प्रेमि दो अलग अलग इकाई के रूप में खडे होते हैं। अत: प्रेमी से ही ब्याह करना अथवा पति की ओर समर्पित होना अनिवार्य नहीं माना जाता।

आधुनिक भारतीय परिस्थितियों में, नैतिकता, सामाजिक परिवेश से जुड कर जीवन के नये मूल्यों की खोज कर रही है। ये मूल्य नैतिकता को भी परिवर्तनोन्मुख करने की शक्ति रखने वाले हैं। इस तरह मूल्य और नैतिकता के सन्दर्भ एक दूसरे को प्रभावित करते हुए और एक दूसरे से प्रभावित होते हुए नयी मान्यताओं की खोज में निकल पडे हैं। अत: नैतिकता आज बदलते हुए सामाजिक प्रसंगों की भूमिका के आधार पर ही तय की जा सकती है।

---

1. अज्ञेय - आत्मनेपद - पृ. 167

वैयक्तिक नैतिकता एवं सामाजिक नैतिकता

नैतिकता के सन्दर्भ में वैयक्तिक नैतिकता एवं सामाजिक नैतिकता पर विचार करना अनिवार्य प्रतीत होता है । वैयक्तिक नैतिकता सामाजिक नैतिकता से कितनी जुडी हुई है और कितनी स्वतंत्र है इसकी सीमा रेखाओं को सूक्ष्म ढंग से स्थापित करना कठिन कार्य लगता है । फिर भी वैयक्तिक नैतिकता सामूहिक नैतिकता को धक्का देती हुई आगे बढने की कोशिश में लगी हुई है इस कारण वैयक्तिक नैतिकता के आधार पर आज का समाज नये जीवन बोध की खोज कर रहा है ।

वैयक्तिक नैतिकता व्यक्ति विशेष के जन्मजात संस्कारों से सम्बन्धित रहती है तो सामाजिक नैतिकता समुदाय विशेष से जुडी रहती है वैयक्तिक नैतिकता व्यक्ति सत्ता के लिए लाभदायक होते हुए भी समाज के लिए हानिकारक होती है और यहाँ आकर वैयक्तिक एवं सामाजिक नैतिकता में संघर्ष का भाव पैदा होता है । वैयक्तिक नैतिकता समाज के सामने नये यथार्थ को लेकर उपस्थित होती है । आज व्यक्ति की मानसिक स्थिति अजीब दबावों में आकर इतनी परिवर्तित हो गई है कि अनास्था, अविश्वास आदि उसके चरित्र के मूलभूत सिद्धान्त बन गये हैं ।

उधर समाज में जो भौतिकवादी चेतना उभरी है उसने भी नैतिकता को धर्म एवं पाप पुण्य दायरों से मुक्त कर दिया है । इस तरह नैतिकता जो कि समाज की रीढ की हड्डी थी, जिसके आधार पर पाप-पुण्य, स्वर्ग-नरक आदि का विधान किया गया था, वह केवल व्यक्ति मात्र के हाथों की खिलवाड़ बन गयी । मनुष्य के विकास के लिए आविष्कृत सामाजिक नियमों को जब मनुष्य स्वयं तोड कर इच्छानुसार जीवन यापन करता है तो उसका पतन अवश्यम्भाव है । वैयक्तिक एवं सामाजिक नैतिकता के संघर्ष का यह परिणाम है।32 स्वच्छन्दता,

नारी और नैतिकता

हमारे समाज ने स्त्री एवं पुरुष को विभिन्न नैतिक मान्यताओं से आबद्ध किया है। लेकिन स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात नारी ने जो अधिकार प्राप्त किये हैं उससे नैतिक जागरण का नया स्वर मुखरित होने लगा। "नैतिक मामलों में भी जितनी स्वाधीनता नरों को प्राप्त है उतनी ही स्वाधीनता नारियों को भी मिलनी चाहिए। अर्थात् पहले वे नैतिक गुलामी में नरों की समानता करना चाहती थी, आज वे नैतिक स्वतंत्रता में उनकी बराबरी करना चाह रही है[1]।"

भारतीय नारी जितनी स्वतंत्र राजनीतिक एवं आर्थिक क्षेत्र में है उतनी स्वतंत्र नैतिक क्षेत्र में नहीं। लेकिन पाश्चात्य प्रभाव और अन्तर्राष्ट्रीय मेल-मिलाप से नारी जीवन के नैतिक बंधन कुछ ढीले पड़ गये हैं। कभी कभी अत्यधिक स्वतंत्रता एवं स्वतंत्र चिंतन के कारण आधुनिक नारी के आचरण में अनैतिकता की "बू" आती है। हमारा समाज कितना भी विकसित एवं आधुनिक क्यों न हो नारी के अवैध कार्य को कभी प्रोत्साहन नहीं देता। जब विवाहित पुरुष पर स्त्री से संबंध रखता है तो समाज उसे अनदेखा करता है। लेकिन जब विवाहित नारी पर पुरुष से संबंध जोड़ती है तो समाज उसे चरित्रहीन और कुलटा की उपाधि दे देता है "नारी चाहे कितनी भी सख्त मिजाज वाली, अहनिष्ठा असभ्य, स्वार्थी, झगड़ालू हो, मगर सेक्स के क्षेत्र में पति के प्रति वफादार हो तो उसे श्रेष्ठ महिला मान लिया जाता है। इसके विपरीत वह कितनी भी अच्छी, सीधी-साधी, शान्त, त्यागशील हो परन्तु उस पर पति के अलावा किसी गैर पुरुष से अवैध संबंध का शक हो तो उसे बुरी औरत मान

---

1. रामधारी सिंह दिनकर - धर्म नैतिकता और विज्ञान - पृ. 14-15

किया जाता है'।"

उपर्युक्त बातों से यह व्यक्त हो जाता है कि आज भी हम नारी को, उसकी नैतिकता को उसके शारीरिक आदान-प्रदान से मुक्त करके नहीं देख पा रहे हैं। स्त्री के चारित्रिक महत्व का आधार उसकी शारीरिक पवित्रता मानकर उसके चरित्र के अन्य पहलुओं को अनदेखा कर देना वास्तव में तर्कसंगत नहीं लगता। अतः नारी की नैतिकता को उसके चरित्र के सभी पक्षों से जोड़ कर देखने की कोशिश ही अधिक वैज्ञानिक प्रतीत होती है।

बदली हुई परिस्थितियों में नैतिकता के संबंध में एक से अधिक दृष्टिकोण का होना नितान्त आवश्यक है। परम्परावादी जहाँ परम्परागत मूल्यों की पुनःस्थापना करना चाहते हैं, वहाँ नये विचारों वाले व्यक्ति समाज की नैतिकता को पुनर्निर्धारित करना उचित समझते हैं। उनकी दृष्टि में नैतिकता का जीवन के व्यावहारिक पक्ष से गहरा संबन्ध है। जीवन को अधिक व्यावहारिक एवं लाभान्वित करने के लिए जो कुछ भी किया जाना चाहिए वह उनकी दृष्टि में वैध एवं नैतिक है यानी जीवन के उपयोगितावाद को और भौतिक दृष्टिकोण को प्रश्रय देते हुए मूल्यों की पुनर्प्रतिष्ठा करना उनका लक्ष्य है।

मूल्य संक्रमण की स्थिति

भारतीय समाज ऐसी विशेष परिस्थिति से गुजर रहा है जहाँ पुराने मूल्य नकारे जा रहे हैं और नये मूल्य पूर्ण रूप से प्रतिष्ठित नहीं हो पा रहे हैं।

---

1. If a woman is ill-tempered, arrogant, nagging, boorish, selfish, quarrelsome and so on, but is sexually faithful to her husband she is still a great woman, on the other hand she may be extremly good natured, selfless, quiet, humble and refined, but if she is suspected of being sexually inclined to any other man except her husband. She would be considered a 'bad' woman.
Modernization and Hindu socio-culture - Akhileswar Jha, p.98

मूल्य संक्रमण की इस स्थिति में नैतिकता टेढ़े-मेढ़े रास्तों से गुजरती जा रही है। आधुनिक साहित्यकार इन पगडंडियों से गुजरने वाली नैतिकता की पग ध्वनियों को सुनाने के प्रयास में लगे हुए हैं।

भारतीय समाज में विराट परिवर्तन स्वाधीनता के आरम्भ ही लक्षित होता है "वैसे सामाजिक परिवर्तन एक सार्वभौम सत्य है, यह प्रक्रिया निरन्तर होनेवाली प्रक्रिया है। जीवन के प्रत्येक स्तर पर हमें परिवर्तन दिखायी देता है वैयक्तिक, राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय सभी क्षेत्रों में सामाजिक ढंगों, रूपों, व्यवहारों और आदर्शों में परिवर्तन होता है समाज कभी स्थायित्व को प्राप्त नहीं होता वह निरन्तर परिवर्तन के दौर से गुजरता रहता है। परिवर्तन की यह प्रक्रिया प्राचीन समाजों में बहुत धीमी रही है किन्तु आधुनिक समाजों में यह प्रक्रिया सापेक्षिक रूप में बहुत तीव्र है। अतः सामाजिक परिवर्तन से आशय उन सभी परिवर्तनों से है जो समाज में होते हैं[1]।

स्वतन्त्रता-प्राप्ति के पश्चात् भारतीय समाज की परम्परागत मान्यताएं एवं नैतिक भाव-बोध परिवर्तित होने लगे हैं। पाश्चात्य सभ्यता और दर्शन के प्रभाव के परिणामस्वरूप आज के युवा वर्ग एवं शिक्षित स्त्रियां परम्परागत जीर्ण मान्यताओं को तोड डालना चाहते हैं। फलस्वरूप जीवनगत आस्था को दो रूप नजर आते हैं - एक रूप वह है जो अपने अतीत की परछाइयों से जुडा रहना चाहता है। दूसरा रूप वह है जो आधुनिकता, नवीनता विकास आदि को गले लगा कर नया जीवन जीना चाहता है। इस प्रकार अतीत एवं वर्तमान के जीवन मूल्यों का जबरदस्त संघर्ष आज हमारे समाज में व्याप्त है।

---

1. डा॰ प्रेम लाल गर्ग - स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी कहानी में सामाजिक परिवर्तन - पृ॰22

जीवन के हर मोड़ पर परम्परागत मूल्य हीन होते जा रहे हैं। संबन्धों का खोखलापन इसका स्पष्ट उदाहरण है। "जीवन व्यवस्था में पिता और पुत्र, पति और पत्नी, संबंधी और नातेदार अब पुरानी मान्यताओं के सहारे नहीं चल पा रहे हैं। पुत्र अब परलोक के लिए नहीं इस लोक के लिए जरूरी हो गया है क्यों कि वृद्धावस्था की कोई सुरक्षा आज के वृद्ध के पास नहीं है।"[1]

मूल्य परिवर्तन के प्रसंग में राजनीतिक परिवर्तन का विशेष महत्व है। स्वतंत्रता हमारे देश की एक महत्वपूर्ण घटना रही है। राजनीति का प्रवेश सामाजिक जीवन में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद बड़े पैमाने में हुआ है। सामाजिक एवं वैयक्तिक नैतिकता को भ्रष्ट करने में राजनेताओं का बड़ा हाथ रहा है। राजनीति के प्रदूषण से सारी नैतिकता मटमैली हो गयी। झूठे वादों के आधार पर चुनाव लड़ना, मंत्री बन कर धन लूटना यही राजनैतिकों का लक्ष्य है। ये दण्ड भोगी नहीं बनता, कानून उनको फंसा भी नहीं सकता। इन लोगों के सामने हर अपराध वैध है और हर पाप नैतिक है। इस प्रकार राजनेता गरीब जनता को लूट कर राष्ट्रीय आय का अच्छा हिस्सा सोख लिया करते हैं।

आज के समाज में व्यक्ति का मूल्यांकन अर्थ के आधार पर होने लगा है। इस कारण हर एक इंसान चाहता है कि वह किसी न किसी तरह अर्थ प्राप्त कर समाज में उंचा स्थान बना ले। धन कमाने के तरीके आज इतने भयानक बन गये हैं कि उनमें नैतिकता का नामो निशान तक नहीं है। अर्थ के पीछे मनुष्य की यह अनियन्त्रित आसक्ति ही उसे तबाही की ओर ले जाती है।

---

1. कमलेश्वर - नयी कहानी की भूमिका - पृ. 159

संबंधों का बिखराव, पारिवारिक विघटन आदि के मूल में अर्थ का जबरदस्त हाथ है । पति-पत्नी, भाई बहन, पिता-पुत्र के संबंध परम्परागत रूप से भिन्न हो गये हैं । पत्नी के पास पति की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए समय नहीं है क्यों कि वह स्वयं अपने निजी मामलों से व्यस्त है जिस कारण बच्चों के प्रति भी वह अपना ममत्व नहीं दर्शा पाती और बच्चे बेचारे माँ के प्यार के लिए तरसते रह जाते हैं । आधुनिक पिता भी इतना व्यस्त है कि वह बच्चों की जरूरतों को, बच्चों की कमियों को आंक नहीं पाता । क्यों, उसका सारा समय दफ्तर के कागजों की उलट पलट, करने में ही बीत जाता है । परिणाम स्वरूप पति-पत्नी और बच्चों के बीच अजनबीपन का बोध जन्म लेता है किसी में कोई आत्मीयता या अपनापन की भावना नहीं है । सब एक प्रकार के होड़ में लगे हुए हैं । आधुनिक मानव विचित्र परिस्थितियों से होकर जीवन निर्वाह कर रहा है । देश के चारों दिशाओं में भ्रष्टाचार, स्वार्थपरता, जातिवाद का नारा बुलन्द हो रहा है । "राष्ट्र का समस्त परिवेश "बेयर वार्ड" में बदल गया । इन सब कुत्साओं से सबसे अधिक प्रभावित हुआ मध्य वर्ग और निम्न वर्ग जो अपनी समस्त मान्यताओं के साथ टूटता, बिखरता और उलझता हुआ जीवन को वहन करने उसकी समस्त क्रूरता को सहन करने, जीने पर विवश था ।"[1]

नैतिकता के बदले हुए स्वरूप पर किये गये उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि बदलती हुई आधुनिक स्थितियों के साथ ही नैतिकता संबंधी परम्परागत मापदंड टूट गया है इसके साथ ही जीवन के सारे मूल्य परिवर्तित जीवनमूल्य अलगाव, बनावटीपन अकेलापन आदि पर केन्द्रित होकर समूचे विधि निषेधों का उल्लंघन कर परम्परागत जीवन दृष्टि को समाप्त कर गया है ।

1• सुशीला मीतल - आधुनिक हिन्दी कहानी में नारी की भूमिकाएं - पृ•88

स्वातंत्र्योत्तर लेखन एवं महिला प्रतिभायें

वैसे युगों से भारतीय सामाजिक व्यवस्था पुरुष प्रधान रही है। हर अवस्था में पुरुष के अधीन रहने के लिए विवश नारी को आधुनिक युग में भी उचित अधिकार नहीं मिल पाये हैं। नारी के योगदान को समाज हमेशा शंका और संकोच की दृष्टि से देखता आया है। पुरुषों का आधिपत्य हमेशा स्त्री की क्षमता को नकारता रहा है। साहित्य के क्षेत्र में भी यह बात अपवाद नहीं रही। लेखिकाओं के योगदान को दूसरी कोटि का सिद्ध कर उनके साहित्य को द्वितीय श्रेणी का उद्घोषित करने का प्रयास हिन्दी लेखन के क्षेत्र में भी जारी है। लेकिन हकीकत यह है कि स्वातंत्र्योत्तर कालीन लेखिकाओं की प्रतिभा ने यह सिद्ध किया है कि वे कई दृष्टियों से लेखकों {पुरुष लेखकों} के आगे हैं।

वस्तुतः गद्य लेखन के क्षेत्र में लेखिकाओं का योगदान महत्वपूर्ण रहा है। हिन्दी कहानी की आत्मवत्ता को नया मोड़ देने में और गहरी अर्न्तदृष्टि से उसे चेतनायुक्त बनाने मेंउन्होंने जो कुछ भी किया है, वह सराहनीय है।

वस्तुतः हिन्दी कहानी के प्रारंभिक स्वरूप का भी गणेश बंग महिला नामक लेखिका के हाथों सम्पन्न हुआ था। उनकी कहानी "दुलाई वाली" हिन्दी की पहली कहानी मानी भी गयी है।[1] कहानी के क्षेत्र में नारी के आगमन की यह प्रथम पग-ध्वनि थी। उसके बाद सैकड़ों लेखिकाओं ने हिन्दी को समृद्ध एवं श्री युक्त बनाने का महनीय प्रयास अपने कंधों पर ले लिया था। उन्हीं में से कुछ प्रतिभाओं की परिचयात्मक टिप्पणी यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

---

1. आशा रानी व्होरा - भारतीय नारी दशा, दिशा - पृ.52

स्वातंत्र्योत्तर कहानी लेखिकाओं ने कहानी साहित्य को पुरानी भावभूमि से परे हटा कर, उसे कृत्रिम रोमानी दुनिया से मुक्त कर, उसमें जिंदगी की धड़कन को भर कर यथार्थ की दुनिया में प्रतिष्ठित किया है। इसके बावजूद भी उन पर यह आरोप मढ दिया जाता है कि उनका अनुभव संसार सीमित एवं भाव प्रधान है, लेखन के क्षेत्र में वे पुरुषों का अनुकरण करती है, उनकी दृष्टि संकीर्ण और अनुभूति बासी है "किन्तु जरा खुले दिमाग से सोचा जाये तो ज्ञात होता है कि जिसे सीमित संवेदना कहा जाता है, वह जीवनानुभूति की गहराई है और जिसे बासीपन कहा जाता है वह जीवन का कटु सत्य है[1]।

आज के विकसित हो रहे वैज्ञानिक युग में स्थितियां तेजी से परिवर्तित होती जा रही हैं और परिवर्तित हो रहे इस परिवेश में नारी के मानसिक एवं बौद्धिक विकास ने उचित अवसर मिल रहे हैं "अतः अन्ना करीना और शकुन्तला की व्यथा-कथा टॉलस्टाय और कालिदास नहीं स्वयं अन्ना और शकुन लिखेगी। निस्संदेह सफर बहुत लम्बा है, राह में थकन और घुटन भी है किन्तु झुकना नहीं[2]।

उभरती हुई महिला लेखिकाओं का लेखन क्षेत्र विशिष्ट भी है और व्यापक भी। जिन विषयों पर अपनी सशक्त लेखनी चला कर पर्ल·एस· बक और इस्मत चुगताई ने नाम कमाया है, क्या ऐसे विषयों पर लेखकों की लेखनी चली है? वस्तुतः लेखिकाओं पर यह आरोप लगाना कि उनका अनुभव संसार सीमित है, उनकी अभिव्यक्ति में गहराई नहीं है, वे पुरुषों का अनुकरण करती है अत्यन्त अप्रासंगिक है। वास्तव में लेखन के क्षेत्र में भेद-भाव दिखाना सशक्त और सिद्धहस्त लेखिकाओं के साथ अन्याय करना है।

1· ज्ञान अस्थाना, महिला कहानी लेखन : तीन आयाम, संचेतना, अक्तूबर, 1983 पृ·53

2· वही

नारीयों के और पुरुषों के लेखन के संबंध में कुछ अनुभवी लेखिकाओं के विचार उद्धृत किये जा सकते हैं ।

लेखिकाओं का अनुभव संसार सीमित होता है - मुझे लगता है कि यह बात किसी बुरी धारणा, से जन्मी है "स्त्री के अनुभव जगत सीमित होता है जो कुछ भी मौजूद है, वह वही है जो आज तक साहित्य में अनुदर्शित रहा है, उससे परे उसका कोई दूसरा रूप भी है इसको देखने की इच्छा व्यक्तियों में कभी नहीं होती[1] ।"

इस संबंध में स्नेहमयी चौधरी के विचार कुछ इस प्रकार के हैं । "मैं समझती हूँ कि पुरुषों का यह कहना कि लेखिकाओं का अनुभव जगत सीमित होता है, व्यक्तिगत स्तर पर पाया जाने वाला अहं ही है, क्योंकि जब कोई चीज़ छप कर आती है तो वह साहित्यिक सौन्दर्य की वस्तु बन जाती है वह रचना स्त्री अथवा पुरुष की नहीं रहती[2] ।"

अतः साहित्य में प्रतिबिम्बित लेखक एवं लेखिकाओं के अनुभव जगत को एक दूसरे का विरोधी न मानकर पूरक मानना उचित होगा ।

स्वातंत्र्योत्तर युग की अधिकांश लेखिकाओं ने नारी जीवन के विविध पक्षों को आधुनिक स्थितियों की रोशनी में सूक्ष्मता से पहचानने का प्रयास किया है ।

1· मृणाल पांडे, क्या लेखिकाओं का अनुभव जगत सीमित होता है, सारिका
नवम्बर,1983, पृ·20

2· स्नेहमयी चौधरी, क्या लेखिकाओं का अनुभव जगत सीमित होता है, सारिका
नवम्बर, 1983, पृ·21

जीवन की हर परिस्थिति से गुज़रने के पश्चात् उन परिस्थितियों में अनुभूत क्षणों को स्मृति में संजो कर उन्हें बखूबी कहानियों में अभिव्यक्त करने में ये लेखिकाएं बहुत हद तक सफल हुई है । सामाजिक विसंगतियां, कुरीतियां, आधुनिकता के मोहपाश में पड़े मानव की रुग्ण मानसिकता आदि का जीवन्त चित्रण इनकी कहानियों में मिलता है । इस सन्दर्भ में इनकी लेखनी महिला होने की रियायत नहीं मांगती, इनका सामाजिक दृष्टिकोण स्वस्थ, तटस्थ एवं उदार है । इन्होंने सामाजिक समस्याओं से मुंह-मोड़ने का भरसक प्रयास किया है । धार्मिक आडम्बरों एवं पाखंडों का इन्होंने डट कर विरोध किया है । आर्थिक दृष्टि से बनते-बिगड़ते, टूटते-बिखरते संबंधों के चित्रण में इन्होंने अपनी गहरी सूझ-बूझ का परिचय दिया है । पीढ़ी-संघर्ष एवं वर्ग संघर्ष का स्वाभाविक वर्णन इनकी इन की कहानियों में मिलता है ।

महिला लेखिकाओं ने अपनी लेखनी के माध्यम से नारी संबंधी सदियों पुरानी "मिथ" को नकारने का प्रयास किया है । क्यों कि इनके नारी पात्र न तो सीता सावित्री सी आदर्श मूर्तियां हैं और न ही पुरुषों के हाथों सताई अबलाएं जो आंचल का दूध और आंखों का पानी दिखाकर पुरुषों के समक्ष सहानुभूति की भीख मांगती है, बल्कि ये काल के क्रूर यथार्थ का बेबाक साक्षात्कार करने और उसे पूर्ण रूप से अपनाने को तैयार नारी पात्र हैं ।

प्रतिनिधि प्रतिभायें

मन्नू भंडारी

नारी जीवन के बहुविधीय पक्षों पर अपनी सूक्ष्म अर्न्तदृष्टि फेंककर उसकी गहराई को कलात्मकता के साथ प्रस्तुत करने में मन्नू भंडारी सिद्धहस्त है ।

इनकी कहानियों में आत्मिक अनुभूतियों के विस्तार के साथ-साथ संवेदना का फैलाव भी दर्शित होता है ।

अनुभव की ईमानदारी और दृष्टिगत वैविध्य को सहज शिल्प के माध्यम से व्यक्त करने वाली मन्नू भंडारी की कहानियों के संग्रह है "मैं हार गई" "तीन निगाहों की एक तस्वीर, मेरी प्रिय कहानियां - श्रेष्ठ "श्रेष्ठ कहानियां, एक प्लेट सैलाब, यही सच है" इन संग्रहों में संकलित प्रायः सभी कहानियों में नारी जीवन के अनछुये, मूक यथार्थ को उभारने का प्रयास किया गया है ।

परम्परा का विद्रोह और नई संभावनाओं के लिए संघर्षरत स्वतंत्र नारी के अस्तित्व की समस्या इनकी कहानियों में उभर आयी है । इनका प्रमुख स्वर रूढ़िगत मान्यताओं के प्रति प्रत्यक्ष विद्रोह का है । इस कारण मन्नू जी की कहानियों का कथ्य नैतिकता और अनैतिकता के संस्कारगत आदर्शों से भिन्न धरातल पर स्थापित होता है । इनकी कहानी में वह दृष्टि है जो नारी को नूतन रूप प्रदान करने के साथ-साथ उसे जीवन की विसंगतियों को झेलने की क्षमता भी प्रदान करती है ।

दाम्पत्य जीवन में आये हुए बदलाव की ओर भी लेखिका की विशेष दृष्टि गयी है । आधुनिक पति-पत्नी के औपचारिक संबंध, पल-पल में टूटते-बिखरते अनगिनत क्षण रिश्ते-नातों के विविध पहलुओं का संस्पर्श और उसकी सटीक अभिव्यक्ति इनकी कहानियों में हुई है । तीसरा आदमी, तीन निगाहों की एक तस्वीर, कील और कसक, घुटन, बन्द दराजों के साथ, आदि कुछ इस प्रकार की कहानियां है । इन कहानियों में मनोविज्ञान का सूक्ष्म एवं मार्मिक अंकन हुआ है । स्त्री पुरुष संबंध अथवा दाम्पत्य जीवन के यथार्थ को

उभारने वाली कहानियों में लेखिका के मनोविश्लेषण की क्षमता विशेष रूप से लक्षित होती है ।

अकेलेपन और आर्थिक समस्याओं से आहत नारी के इकले स्वरूप को लेखिका ने बड़ी सजगता और पैनी दृष्टि से प्रस्तुत किया है । अकेली, शायद, क्षय, रानी माँ का चबूतरा आदि कहानियाँ इसके उदाहरण है । ये कहानियाँ लेखिका की अनुभूति की गवाही देती है "मेरी अधिकांश कहानियों के मूल में कहीं न कहीं अनुभूति की वैयक्तिकता ही रही है । अनेक बार ऐसा हुआ है कि दूसरों के अनुभव और जिंदगी के कुछ हिस्सों ने अनायास ही मुझे कहानीकार के रूप में आकर्षित किया है और मैं ने ज्यों का त्यों उसे कहानी के रूप में बांध दिया लेकिन बाद में पाया कि वह आकर्षण इतना अनायास नहीं था, उसके पीछे अनजाने और अचेतन में मेरा अनुभव था .... आज समय गुजरने पर जब मैं उन सबसे बिलकुल तटस्थ हो गई हूँ तो लगता है कि वे कतई दूसरों की कहानियाँ नहीं है, वे मेरी मानसिक अवस्था की कहानियाँ है, जिनका अर्थ मैंने दूसरों के बहाने पाया था[1] ।"

प्रेम के आधुनिक स्वरूप को जीवन के नव्य यथार्थ से जोड कर नई अर्थवत्ता देने का प्रयास लेखिका ने किया है । मन्नू भंडारी की प्रेम कहानियों में सबसे ज्यादा चर्चित कहानी है "यही सच है" । इस कहानी में एक लड़की के दो युवकों से एक समान आकर्षण को दर्शा कर आधुनिक नारी के "बोल्डनेस" पर प्रकाश डाला गया है । आधुनिक प्रेम संबंधों की क्षण भंगुरता, स्वार्थ, वासना एवं व्यक्तिगत सुख की भावना को उजागर करने वाली अन्य प्रेम कहानियाँ है - सयाने, अभिनेता, गीत का चुम्बन, एक कमजोर लड़की की कहानी आदि ।

1· मन्नू भण्डारी, मेरी प्रिय कहानियाँ भूमिका - 6

मन्नू भंडारी की कहानियों में आनेवाली नारी देवी या दानवी छोरों पर भटकनेवाली पहेली न होकर जीवन के कटु यथार्थ को झेलने वाली हाड मांस की मानवी है नारी सिर्फ गौरव या दर्द की प्रतिमा नहीं होती बल्कि उसमें नारी सुलभ सुख, प्यास त्याग आदि है जिसे लेखिका ने अपनी प्राय: सभी कहानियों में अभिव्यक्ति प्रदान की है । इनके नारी पात्र प्राय: सभी वर्गों का प्रतिनिधित्व करती है । विशेष कर मध्यवर्ग से लेखिका बहुत अधिक प्रभावित है । इस सन्दर्भ में मन्नू भण्डारी ने अपने विचार कुछ इस प्रकार प्रकट किए हैं ।" वैसे साठ प्रतिशत कहानियाँ तो मेरी भी नारी पर ही होगी, हाँ एक बात जरूर है कि मुझे मध्य वर्ग जरूर हॉन्ट करता रहता है, इस मध्य वर्ग की विविध समस्याएं, इसके मूल्य परम्पराओं से चिपके रहने का मोह ये कुछ ऐसे विषय हैं जो मेरी कहानियों में विविधता से आते हैं[1] ।"

इस प्रकार मन्नू भंडारी ने कथ्य के रूप में जीवन के, विशेष कर नारी जीवन के, विभिन्न पहलुओं को चुना है जिस कारण इनकी कहानियों में जीवन का वास्तविक स्वर गुम्फित होता है । "नये पुराने जीवन मूल्यों के संघर्ष से पैदा हुई मानसिकता ही इन कहानियों की रचनात्मक पृष्ठभूमि है । ये कहानियाँ सोद्देश्य हैं और व्यक्तिगत चिन्तन को व्यापक सामाजिक संदर्भ देने के कारण इनमें जीवन की सच्ची पकड़ है[2] ।"

अपनी सरल भाषा शैली और परिचित विषय वस्तु के कारण ही मन्नू भंडारी अधिक लोकप्रिय हो पायी हैं । जीवन के यथार्थ की अभिव्यक्ति के लिए यथार्थ जीवन से गृहीत भाषा का प्रयोग लेखिका ने किया है ।

1· मन्नू भण्डारी - सुदर्शन नारंग और अशोक अग्रवाल के साथ हुआ अंतरंग बातचीत
सारिका, 31, अगस्त 1970

2· डा· शिव शंकर पाण्डे - स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी कहानी कथ्य और शिल्प
पृ·198

इनकी कहानियों में बिंबों, प्रतीकों तथा संकेतों का सार्थक प्रयोग हुआ है साथ-साथ रूप विधान को गहराने के लिए विभिन्न शैलियों को भी अपनाया गया है ।

उषा प्रियंवदा

कहानी साहित्य को अन्तर्राष्ट्रीय आयाम देने वाले कहानीकारों में उषा प्रियंवदा विशेष उल्लेखनीय है । देशी और विदेशी माहौल में लिखी इनकी कहानियाँ जीवन की अनुभूतियों को अंकृत करने वाली है । रमेश तिवारी के मतानुसार "उषा प्रियम्वदा की कहानियों में एक बीज जरूर होता है, एक विचार, एक इमेज, एक अनुभव या अनुभूतिका और यही बीज उनकी कहानियों का वस्तु बनता है ।"[1]

जीवन के अनुभूत क्षणों को अभिव्यक्ति देनेवाली कहानियों के संग्रह हैं मेरी प्रिय कहानियाँ, कितना बड़ा झूठ जिंदगी और गुलाब के फूल आदि । इन संग्रहों में संकलित कुछ कहानियाँ प्रवासिनी भारतीय महिलाओं के जीवन पर आधारित है जो पाश्चात्य जीवन की रंगीनी और महत्वाकांक्षाओं की खातिर अपना देश, अपनी सभ्यता एवं संस्कृति को छोड़ कर विदेशी माहौल में इतनी घुल मिल जाती है कि कुछ समय बाद उसे उस माहौल और अपने उच्छृंखल जीवन से घुटन होने लगती है । ऐसी स्त्रियाँ परिवेश से कटकर अकेलेपन की मायूसी को झेलने के लिए मजबूर हो जाती है । इस प्रकार की कुछ विशेष कहानियाँ है प्रतिध्वनियाँ, कितना बड़ा झूठ, टूटे हुए, मछलियाँ आदि ।

---

1. रमेश तिवारी, धुकर, अगस्त 1975, पृ.16

प्रेम की अस्तित्वहीनता एवं स्वार्थ की गवाही इनकी प्रेम कहानियाँ प्रस्तुत करती है । प्रेम के बदले हुए नये अंदाज को बड़ी साफगोई के साथ लेखिका ने प्रस्तुत किया है । प्रेम और सेक्स के मिले जुले सुंदर चित्र इनकी कहानियों में उभर आये हैं । इन चित्रों के माध्यम से लेखिका ने यह साबित किया है कि आज के युग में प्रेम की पवित्रता की अपेक्षा सेक्स पर ज्यादा बल दिया जाता है । अतः इनकी प्रेम कहानियाँ परम्परागत रोमांटिक बोध से छुटकारा पाने की दुविधा में है ।

अत्यधिक आधुनिकता एवं आत्मनिर्भरता के कारण "मिसफिट" हो रहे उच्च-मध्य वर्गीय नारियों की उच्छृंखल प्रवृत्तियों पर भी उषा प्रियंवदा की विशेष लेखनी चली है । कहानियों में आये ऐसे नारी पात्र जीवन के आदिम क्षणों में इतने बहक जाते हैं कि वे न तो घर की मर्यादा का ध्यान करते हैं और न ही समाज के रीति रिवाजों का । जब उन्हें जीवन की वास्तविकताओं का ज्ञान होता है, तो बहुत देर हो चुकी होती है । वे न तो अपने अतीत की ओर लौट पाती हैं और न वर्तमान से समझौता कर पाती है । ऐसे क्षणों में उनका जीवन एक रसता और सूनेपन की ठंडी खामोशी में घिर जाती है ।

वैवाहिक जीवन में पति-पत्नी के बदलते नये दृष्टिकोण को लेखिका ने गहराई के साथ अभिव्यक्ति प्रदान की है । पति-पत्नी के संबंधों में तीव्र बदलाव आ जाने के कारण, उनके जीवन में ~~तीव्र/बदलाव/आ/जाने/~~के उत्पन्न संत्रास कुंठा और विवशता का तीखा और स्पष्ट चित्रण इनकी कहानियों में मिलता है । वैवाहिक जीवन में किसी तीसरे को लाकर लेखिका ने दाम्पत्य जीवन में उठने वाले अस्थायी संबंधों को उभारने का प्रयास किया है जैसे आधुनिक समाज में पति पत्नी के जीवन में ऐसे अस्थायी संबंध बहुत देखने को मिलते हैं । पति-पत्नी और तीसरे पर आधारित लेखिका की कहानियाँ हैं मोह बंध, स्वीकृति, झूठा दर्पण दो अँधेरे, आदि ।

मध्यवर्गीय समाज की टूटती हुई स्थिति और संबंधों के अंतराल को लेखिका ने जीवंत रूप में अपनी कहानियों में निरूपित किया है । संबंधों के प्रति उदासीनता इतने भावात्मक रूप में चित्रित हुई है कि कहीं भी कृत्रिमता या बनावटीपन का अहसास नहीं होता । ऐसी कहानियों में वापसी, जिंदगी और गुलाब के फूल, छिद्र आदि प्रमुख हैं ।

उषा प्रियंवदा की प्राय: सभी कहानियां जीवन के यथार्थ पर केन्द्रित है । "नारी पात्रों को लेकर लिखी कहानियां जी अपने अमन अनुभवों से साक्षित करती हैं कि जटिल समय का थपेड़ा पुरुषों पर ही नहीं नारी पर भी पड़ता है वह भी उन्हीं हादसों से गुजरती है जिनमें कोई पुरुष गुजरता है । पात्रों के चयन के संबंध लेखिका के विचार इस प्रकार हैं । "मैं यह दावा नहीं करती कि मेरे सारे पात्र एक दम कल्पित हैं, साथ ही कोई भी यथार्थ जीवन में पूरी तरह, वैसा ही पृष्ठों में नहीं आ पाया है, क्यों कि किसी व्यक्ति विशेष को लेकर उसे पहचाने जाने वाले में रखना मुझे कुछ अब भद्दा और ओछा-सा लगता है । .... प्राय: चरित्रों का बीज जीवन से आता है विशेषताएं, बातचीत का ढंग और पृष्ठभूमि मैं निसंकोच यथार्थ जीवन से लेती हूँ ।"[1]

उषा प्रियंवदा की भाषा और कथन की शैली साधारण एवं अलंकरण विहीन है। कहानियों में कहीं कहीं बोलचाल के शब्द और अंग्रेजी शब्द मिलते हैं । इनकी भाषा परम्परागत जड़ता को तोड़कर, वैयक्तिक भाषा से अपने को दूर रह कर समसामयिक बोली में नये अर्थों की तलाश करती है । अत: कथ्य एवं भाषिक संरचना की दृष्टि से उषा प्रियंवदा की कहानियों मे नवीनता और ताज़गी है । इस सन्दर्भ में डा॰ सन्तबख्श सिंह का मंतव्य काबिलेगौर है "इनके

---

1. उषा प्रियंवदा - मेरी प्रिय कहानियां - पृ॰7

प्रस्तुतिकरण में शिष्टता, भावाभिव्यक्ति में वैचारिक गरिमा, भावुकता में बौद्धिक अनुशासन और सर्वत्र "शिक्षित संतुलित दृष्टि दिखायी पड़ती है। इन्होंने कृतिकार की ईमानदारी के साथ जीवनानुभव की प्रामाणिकता को कथा में उभारा है। वर्जित सत्यों का उद्घाटन साहस लेकिन सहजता के साथ किया है .... इनकी खास विशेषता यह है कि प्रचलित खामियों और जानी हुई कमजोरियों से कथा कृतियों को, कथाकार की भावुकता को विवेक से झोलती हुई उबार ले आती है।"[1]

कृष्णा सोबती

मन्नू भंडारी की समकालीन लेखिकाओं में कृष्णा सोबती का प्रमुख स्थान है। कृष्णा सोबती का कहानी क्षेत्र सीमित है, लेकिन इस सीमित क्षेत्र में भी लेखिका ने जीवन के सभी सत्यों का समावेश करने का प्रयास किया है।

वैसे कृष्णा सोबती की सर्जनात्मक प्रतिभा का प्रारंभिक चरण स्वातंत्र्य प्राप्ति के पूर्व के काल से जुड़ जाता है। इस कारण उनकी कुछेक कहानियों का विषय और उनमें प्रतिबिम्बित दृष्टिकोण एक सीमा तक परम्पराबोध से जुड़ा हुआ है लेकिन बाद की इनकी कहानियाँ परम्पराबोध से मुक्त होकर आधुनिक बोध में परिणत हो गयी है। समय के साथ जो परिवर्तन सामाजिक चेतना से जन्म लेने लगता है उस से कृष्णा सोबती अछूती नहीं रही है। रोमानी भावना को तिलांजलि देकर आधुनिक नारी की भौतिक एवं आर्थिक समस्याओं पर ध्यान आकृष्ट कराने का प्रयास उन्होंने किया है। बदली हुई जीवन की दुविधा को, पत्नी बन कर उस दुविधा को भोगने की विडम्बना को, पनपते-पनपते नये रिश्तों व और उसी के बीच आत्मीयता की तलाश को अपने कथ्य के अन्दर उचित स्थान

---

1. डा. लक्ष्मीनारायण सिंह - नई कहानी : कथ्य और शिल्प - पृ. 118

लेखिका ने दिया है । अन्य महिला लेखिकाओं की भाँति कृष्णा सोबती की कहानियाँ भी नारी जीवन के स्फुरित जीवन को विभिन्न कोणों से परखती और प्रस्तुत करती है । इनकी कहानियों के संबंध राजेन्द्र यादव का यह मंतव्य विचारणीय है "ऊपर से देखने में उनकी हर रचना के बीच चाहे जितना अन्तर और अन्तराल लगे, लेकिन जरा गहराई में जाकर देखने पर मुझे लगता है कि उनके पास एक निश्चित थीम है जो हर रचना में विकसित हुई है, आगे बढ़ी है । हो सकता है वे भी उसके प्रति सचेत नहीं वह है नारी का क्रमश: स्वतंत्र होता हुआ व्यक्तित्व[1] ।"

आधुनिक प्रेम के "त्रिकोन" को कृष्णा जी ने विशेष रूप से अपनी कहानियों में आँका है । वैवाहिक जीवन में तीसरे के आगमन से टूटते संबंध, तत्पश्चात् पश्चाताप की अग्नि में जलने को बाध्य आधुनिक नारी की विक्षिप्त मानसिकता को लेखिका ने "कुछ नहीं, कोई नहीं" में व्यक्त किया है । आधुनिक मानव की रुग्ण मानसिकता और असन्तुलित विचारों को कृष्णा सोबती आधुनिकता का परिणाम मानती है । इनकी कुछ विशेष कहानियों में आधुनिकता से आहत मानव की विक्षिप्त मानसिकता का जीवन्त चित्रण हुआ है ।

कृष्णा सोबती वैयक्तिक मूल्यों को प्रधानता देने वाली लेखिका है । इनकी कहानियों में प्रेम, निराशा, घुटन, हताशा, व्यक्ति तथा समाज के परस्पर संबंध आदि विभिन्न आयामों को देखा जा सकता है । इनके पात्र कुंठा और निराशा की बोझिलता से दब कर यथार्थ से टक्कर लेने में कतराते हैं । इस सन्दर्भ में राजेन्द्र यादव के विचार उद्धरणीय है "उनके पात्रों को न जीविका की चिन्ता है न समय समाज की । लेकिन ज्यादा से ज्यादा मैं इसे ज़िंदगी के प्रति जनानी, एकनिष्ठ, इकहरी और एकान्त या सब मिलाकर रूमानी रवैया कहना चाहूँगा

1· राजेन्द्र यादव, कृष्णा सोबती खूबसूरत मुहावरे, नयी तुली शब्दावली, हिन्दी आलोचना और आज की कहानी, प्र·सं·(सं·विद्याधर सुमन)पृ·36

कृष्णा जी जितना ही अपने को कपड़ों, शिष्टाचार और "सारी-टैबू" के जाल जंजाल में छिपाती जाती है, उनकी रचनाओं की नारी उतनी ही निर्विरोध अपना कद उभारती जाती है - उनका रचनात्मक व्यक्तित्व उतना ही उजागर होता जाता है[1]।"

कृष्णा जी ने लिखा बहुत कम है लेकिन जितना लिखा है, वह साहित्य के लिए महान उपलब्धि है, इनकी लेखनी की विशेषता यह है कि वह एक ही कुत के आगे पीछे घूमने वाली नहीं है। उन्होंने अपनी कुछ कृतियों में प्रामाणिकता का ऐसा जीवन्त वर्णन किया है कि पुरुष लेखक को भी उनके समक्ष नतमस्तक होना पड़ेगा।

कृष्णा सोबती की भाषा और शिल्प की निजी विशेषताएं है। चिन्तन को सर्जनात्मक रूप देने में कृष्णा जी की भाषा सक्षम है। कथ्य के प्रभावात्मक सम्प्रेषण के लिए लेखिका ने शैलियों के विभिन्न रूपों को अपनाया है। इसके अतिरिक्त बिंबों और संकेतों के सार्थक प्रयोग से भाषा की ताजगी और शक्तिमत्ता को बढ़ाने का प्रयास भी किया है। "उनके खूबसूरत मुहावरेदार प्रयोग नपी तुली शब्दावली, कटी छंटी अर्थ ध्वनियाँ एक प्राकृतिक सच्चाई को हमारे सामने उभार कर रखती है। शब्दों को कोई भी ऐसा नाम दिया जा सके तो हिन्दी में वह सिर्फ कृष्णा जी ने किया है। एक एक शब्द वाक्य कामा, फुलस्टाप जैसे दृष्टों के परिश्रम से आया है। वे भयानक परफेक्शनिस्ट है[2]।

1· राजेन्द्र यादव, कृष्णा सोबती खूबसूरत मुहावरे नपी तुली शब्दावली हिन्दी आलोचना और आज की कहानी पृ सं·[सं:विद्याधर मिश्र] - पृ·42

2· राजेन्द्र यादव, कृष्णा सोबती: खूबसूरत मुहावरे नपी तुली शब्दावली वही - पृ·35

शिवानी

लेकिन कला को भाषा के इन्द्रजाल में फंसा कर उसके सौन्दर्य को बढ़ाने में शिवानी की अपनी सिद्धहस्तता है ।

शिवानी के प्रमुख कहानी संग्रह है मेरी प्रिय कहानियां, पुष्पहार आदि । इनमें संगृहीत प्राय: सभी कहानियों का कथ्य प्रभावहीन और शून्य सा लगता है । ऐसा प्रतीत होता है कि लेखिका का लक्ष्य कथ्य को प्रभावात्मक ढंग से प्रस्तुत करने की अपेक्षा भाषा का सौन्दर्य बढ़ाना है । परिणाम स्वरूप पाठकगण कथ्य को प्रभावहीन मानकर कहानियों की ओर विशेष ध्यान नहीं देते। जीवन के यथार्थ से सम्बन्धित न होने के कारण उनकी रचनाएं समकालीन परिवेश से कटी हुई लगती है ।

भाषा के क्षेत्र में कोई भी उन पर आरोप नहीं लगा सकता क्योंकि भाषा पर उनका जबरदस्त अधिकार है यह तो मानने की बात है। ऐसा लगता है कि उनके पास भाषा की ही अक्षय पूंजी है ।

दीप्ति खंडेलवाल

स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी कहानी लेखिकाओं में, विशेषकर सातवें दशक की उभरती हुई लेखिकाओं में, दीप्ति खंडेलवाल का नाम विशेष महत्व का है । मानवीय संवेदनाओं का उन्होंने गहराई से आंकने का प्रयास किया है, विशेषकर नारी मन की संवेदनाओं को । इसलिए कहा जाता है कि उनकी कहानियां नारी जीवन की विडम्बनाओं का महाकाव्य है ।

नारी जीवन पर आधारित इनकी कहानियों का विशिष्ट संकलन है "दो पल की छांव, वह तीसरा, सलीब पर आदि । इनमें संगृहीत प्रायः सभी कहानियों में नारी का अहं, दर्प, पीड़ा, वेदना कसक आदि भावों को पूरी संपृक्ति एवं सजगता के साथ प्रस्तुत किया गया है ।

दीप्ति खंडेलवाल ने अपनी कहानियों में नारी के आधुनिक एवं परम्परागत रूप को अभिव्यक्ति प्रदान की है।आधुनिक नारी शिक्षित एवं आत्मनिर्भर है । इस कारण उसे अपने स्वतंत्र अस्तित्व का बोध है । वह पुरुष के सामने अपने आप को किसी भी मायने में कम नहीं मानती । दूसरी ओर परम्परागत आदर्शों की संकीर्ण लीक पर चलने वाली ऐसी भी स्त्रियां है जो पुरुषों के द्वारा सताये जाने पर भी उन्हीं की बनी रहने के लिए विवश है। नारी के इन दो रूपों का विस्तृत चित्रण इनकी कहानियों में हुआ है ।

दीप्ति खंडेलवाल की अधिकांश कहानियों का कथ्य पति और पत्नी के टूटते बिगड़ते संबंधों पर आधारित है । ऐसा प्रतीत होता है कि लेखिका को यह विषय अन्य विषयों से ज्यादा प्रियकर है । इस विषय पर आधारित दीप्ति जी की कहानियाँ है, वह तीसरा, संधि-पत्र, जमीन, एक अदद औरत आदि । इन कहानियों में आये स्त्री और पुरुष पात्र कहीं कहीं इतने अहंग्रस्त हो गये हैं कि दोनों किसी भी हालत में एक दूसरे के सामने झुकने को तैयार नहीं होते । परिणाम स्वरूप दोनों का जीवन तबाही की ओर बढ़ने लगता है । इनके बीच किसी तीसरे के न होते हुए भी दोनों अपने बीच किसी तीसरे की उपस्थिति का अनुभव करते है । 'वह तीसरा' उनका अमूर्त अहं है । कभी कभी ऐसा भी देखा जाता है कि पति-पत्नी औपचारिकता के बंधन में इस कदर बंध जाते हैं । उन्हें अपना रिश्ता तक याद नहीं रहता । वैवाहिक जीवन के तनावों को उभारने वाली लेखिका की कहानियाँ जिंदगी के हकीकत की गवाही ।

उनके जीवन की समस्याएं भी उनकी कहानियों में उभर आयी है । वर्तमान युग में विवाहेतर संबंध बहुत ही साधारण हो गये हैं । कोई इस ओर विशेष ध्यान नहीं देता । क्यों कि पति-पत्नी के आपसी संबंध बहुत शिथिल होते जा रहे हैं और इस कारण समर्पण की भावना उनमें नहीं के बराबर है । आदर्श, मोह, वह एक पारो पुरवैया, संधिपत्र, देह की सीता आदि कहानियों में लेखिका ने विवाहेतर संबंधों को अभिव्यक्ति दी है ।

पारिवारिक एवं आर्थिक जीवन की समस्याओं का चित्रण दीप्ति जी ने सूक्ष्म अन्तर्दृष्टि के साथ किया है । परिवार की चक्की में पिसते स्त्री-पुरुष की दयनीय स्थिति को विभिन्न कोणों से आंकने में दीप्ति खंडेलवाल बहुत हद तक सफल हुई है ।

जीवन की विविध समस्याओं को चित्रित करने में दीप्ति जी की भाषा सक्षम है । इनकी भाषा में पारदर्शिता के साथ शैलीगत सहजता भी है । इस कारण इनकी कहानियाँ सहज एवं सरल रूप से पाठक के हृदय को छूलेती है । हर एक कहानी में एक "कसक" एक "विवशता" है ~~अते/नेपि/~~ जो लेखिका के अनुभवों का प्रमाण है ।

मृदुला गर्ग

सातवें दशक की उदीयमान कहानी लेखिका है मृदुला गर्ग । इस दशक की लेखिकाओं में मृदुला गर्ग की स्वतंत्र पहचान है "इनकी कहानियों का कथ्यगत विस्तार कहीं न कहीं एक लेखिका के रूप में उस बेचैनी का ही नतीजा है जिसे अनुभव विस्तार के हठ की बेचैनी कही जा सकती है ...... अपने शारण्य के बाद

आकर भी वह उस परिवेश को ही अंकित कर सकती है जिसकी सीधी और प्रामाणिक जानकारी उन्हें है । उनकी कहानियों की दुनिया आमतौर पर औसत आदमी की दुनिया है।औसत आदमी उनके यहाँ सिर्फ घरेलू नौकर के रूप में ही उपलब्ध है[1] ।

मृदुला गर्ग के प्रमुख कहानी संग्रह है "कितनी कैदें" और "टुकड़ा टुकड़ा आदमी" ।

मृदुला गर्ग की कहानियों में जो दुनिया अंकित है उसमें किसी प्रकार की एकरूपता का स्वर नहीं है । स्त्री-पुरुष की समस्याओं के साथ जीवन की अन्य सारी समस्याओं को भी गहराई से आंकने का प्रयास लेखिका ने किया है। इनकी कहानियों में नवधनाढ्य वर्ग का अहं है, महत्वाकांक्षी उद्योगपति है जो मानवीय रिश्तों से बढ़ कर अर्थ को महत्व देते हैं, और ऐसे उद्योगपति हैं जो, गरीबों के समक्ष मुखौटा धारण कर धर्मात्मा बन उनकी खून पसीने की कमाई से मौज उड़ाते हैं ऐसी कहानियां हैं, टुकड़ा टुकड़ा आदमी, पोंगल पोली उसका विद्रोह आदि ।

आधुनिक नारी की उच्छृंखल प्रवृत्तियों पर भी मृदुला गर्ग की लेखनी खूब चली है । आधुनिकताऔर पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाव के बीच आधुनिक नारी इतनी बिखर गयी है कि उसका निजी कोई स्तर नहीं रह गया है । वह न तो पूर्ण रूप से पाश्चात्य संस्कारों से प्रभावित हो पाती है और न ही भारतीय आदर्शों को निभा पाती है ऐसी "मिसफिट" नारियों के उलझे हुए स्वरूप को लेखिका ने एक और विवाह रुकावट, अगर यों होता कितनी कैदें,

---

1· महेश, औसत आदमी की दुनिया "सारिका" जनवरी 1979, पृ·73

हरी बिन्दी आदि कहानियों में प्रस्तुत किया है । आधुनिक नारी की उच्छृंखल प्रवृत्तियों के साथ साथ लेखिका ने निम्न वर्ग की नारियों के परम्परागत संस्कारों को भी उभारा है ।

अर्थ और स्वार्थ पर टिके वैवाहिक जीवन की जटिलता का यथार्थ चित्रण मृदुला गर्ग की कहानियों में मिलता है । आधुनिक पति-पत्नी के रिश्ते इतने स्थूल हो गये हैं कि पति अपनी तरक्की केलिए पत्नी को माध्यम बनाता है । पत्नी को नुमाइश की चीज बनाकर अपने बॉस के हाथों सौंप देता है और पत्नी बेचारी पति की कायरता को मूक होकर सहती है।कभी कभी ऐसा भी होता है कि पत्नी को मृत्यु शैया पर पड़ा देखकर भी पति उसका ओर से निश्चिन्त होकर अर्थ के पीछे भागता है । उसकी कराह, दुनिया का कायदा, कोशिश विभ्रम/हे मैं आदि कहानियों में ऐसे यथार्थ का पर्दाफाश किया है । सेक्स और अतृप्तिबोध पर भी लेखिका ने कई कहानियाँ लिखी है "झुटपुटा" कहानी सेक्स और मनोविज्ञान पर आधारित है । सेक्स के क्षेत्र में प्रगति का अपना कौमार्य नष्ट कर हिस्टीरिया से ग्रस्त होने वाली नारी है किलनी कैदे की मीना । सेक्स के क्षेत्र में मीना का अनुभव और तर्जुबा देखकर मनोज के लिए मीना एक समस्या और एक "प्रश्न" बन जाती है ।

परिवेश के जीवन्त चित्रण में मृदुला गर्ग की कहानियाँ अत्यन्त ही प्रभावात्मक है । जीवन ढंग को समग्रता के साथ प्रस्तुत करने में इनकी कहानियाँ सक्षम है ।

विषयानुकूल भाषा का प्रयोग भी इनकी कहानियों में हुआ है । समाज के कटु यथार्थ को स्पष्ट करने के लिए लेखिका कभी-कभी व्यंग्य का इस्तेमाल भी करती है । इसके अतिरिक्त संकेत एवं प्रतीकों के माध्यम से जीवन की उलझन भरी स्थितियों की सहज अभिव्यक्ति भी हुई है ।

निरुपमा सेवती

जीवन के छोटे बड़े मर्मान्तक अनुभवों को कुशलता के साथ व्यक्त करने में निरुपमा सेवती सातवें दशक की लेखिकाओं में अलहदा दिखाई देती हैं। निरुपमा जी लेखन को बदलते मूल्यों के दबाव से उपजे आन्तरिक संघर्ष की अभिव्यक्ति का माध्यम मानती है। यही कारण हो सकता है कि इनकी प्राय: सभी कहानियों में आन्तरिक संघर्षों का स्वच्छ चित्रण मिलता है।

नारी जीवन के विभिन्न मोड़ों को निरुपमा सेवती ने अपनी कहानियों में वाणी दी है। इन कहानियों में वेदना और सिसकियाँ है। उनके लेखन प्रतिभा के पीछे एक सच्चे कलाकार की तटस्थ दृष्टि काम करती है जिस कारण उनकी कहानियाँ भारतीय नारी की समस्याओं के साथ साथ समस्त नारी समाज की समस्याओं को एवं विसंगतियों को चित्रित करती है।

नारी समस्याओं पर केन्द्रित कहानियों के संग्रह हैं - "खामोशी को पीते हुए" "बंटता हुआ आतंक बीज"। इन संग्रहों में संकलित कहानियों के नारी पात्र स्वतंत्र विचारों वाली आधुनिकाएं हैं जो समाज में पुरुष के समान ही अपना अस्तित्व कायम रखना चाहती है ऐसे नारी पात्र भारतीय परिवेश के होते हुए भी उसकी निर्मम मान्यताओं को चुनौती देकर नयी राह की ओर बढ़ना चाहती है। यहाँ लेखिका ने उभरते हुए नये नारी वर्ग की ओर इशारा किया है

निरुपमा सेवती की कहानियों में आधुनिक मानव का मोहभंग, तनाव हताशा, कुंठा प्रेम, सेक्स की लालसा आदि का स्पष्ट चित्रण हुआ है। मोहभंग की स्थिति को सामाजिक और व्यक्तिगत स्तर पर ही नहीं अपितु पारिवारिक स्तर पर भी दिखाया गया है। प्रेम और सेक्स की अनिवार्यता को लेखिका ने अपनी कहानियों में अभिव्यक्ति दी है। आधुनिक मानव सेक्स को जीवन की अनिवार्य आवश्यकता मानता है इसकारण इनकी कहानियों में

लेखन के प्रति निषेधात्मक दृष्टि नहीं झलकती । ऐसी कहानियां हैं ठहरी हुई खरोंच, दूरियां आदि ।

पल-पल में टूटते-बनते आधुनिक पति-पत्नी के संबंधों पर भी इनकी सशक्त लेखनी चली है । इसके अतिरिक्त नौकरी पेशा स्त्रियों की विवशता एवं अविवाहित नारियों की समस्याओं को लेखिका ने विशेष सहानुभूति के साथ प्रस्तुत किया है ।

इनके प्रायः सभी पात्र मानसिक द्वंद्व से आहत नजर आते हैं इनकी कहानी चाहे किसी विशेष चरित्र पर आधारित हो या घटना पर वह मानव मन की मजबूरियों को स्पर्श करती हुई चलती है । मानव मन के अन्दर जो द्वंद्व समाया हुआ है उसका सार्थक चित्रण कर लेखिका ने यह व्यक्त किया है कि द्वंद्व मनुष्य को नयी राह की ओर बढने और नयी मान्यताओं को गढने के लिए प्रेरित करता है अर्थात् मनुष्य का द्वंद्व ही उसके विचारों को आन्दोलित कर उसे क्रियाशील बनाता है । इस सत्य को उजागर करनेवाली कहानियाँ है सुनहरे देवदार, खामोशी को पीते हुए, दूरियां आदि ।

निरुपमा सेवती की कुछेक कहानियों में एक विशेष प्रकार की उदासी छायी हुई लगती है । अकेलापन, अलगाव, विवशता इनकी कहानियों की कथ्यगत विशेषताएं है इस सन्दर्भ में लेखिका के विचार उल्लेखनीय है । "तमाम रिश्तों के बीच अंततः अकेली होना - इस एहसास का भी एक बचपन था । जब चार साल की उम्र में ही अकेले बैठना, बादलों को देखना अच्छा लगता था । यह एहसास भी उम्र के साथ बड़ा होता गया और उसकी तड़फड़ाहट से छुटकारा पाने के लिए कला को माध्यम बनाया । लेकिन जब इतना परिपक्व हुआ यह एहसास कि दिमाग में समा ही न सके तो कागज पर कलम चलाये बिना मुश्किल

नहीं मिली । झुकेलेपन ने भीतर की ओर मोड़ा लेकिन इसी भीतर मुड़ने ने एक फैलाव दिया और बाहर कुछ ज्यादा ही जोड़ दिया ।"[1]

कथ्य एवं शिल्प की दृष्टि से निरुपमा सेवती की कहानियों में एक विशेष प्रकार की ताजगी एवं नवीनता है । भाषा की सांकेतिकता और प्रतीकात्मकता इनकी सबसे बड़ी पहचान है । जीवन के समसामयिक बोध को स्थापित करने के लिए चेतना प्रवाह, पूर्वदीप्ति, वर्णनात्मक आदि शैलियों का प्रयोग हुआ है ।

मेहरुन्निसा परवेज़

नयी पीढ़ी की लेखिकाओं में मेहरुन्निसा परवेज ने लेखन के क्षेत्र में अपनी एक विशिष्ट पहचान बनायी है ।

अनुभूति के आधार पर लिखी इनकी कहानियां जीवन की विवशता एवं तकलीफों से हमारा साक्षात्कार कराती है । टूटते विश्वास और बिखरती भावनाओं को रचनात्मक स्वर देने वाली लेखिका की कहानियों के संग्रह है, "टहनियों पर धूप" "गलत पुरुष" ।

सामाजिक समस्याओं से जूझ कर परिवर्तन लाने की अकुलाहट, स्त्री पुरुष संबंध और उनके जीवन में उठने वाले विविध परिदृश्य ही इनकी कहानियों का प्रतिपाद्य है । पति-पत्नी के बीच बढ़ती खाई को और लेखिका का

1· सारिका, अक्तूबर, 1972

विशेष ध्यान गया है । अन्य लेखिकाओं की भाँति मेहरुन्निसा परवेज़ ने भी पति-पत्नी और तीसरे के त्रिकोण स्वरूप को बड़े ही सार्थक रूप में निरूपित किया है इस त्रिकोण स्वरूप पर आधारित लेखिका की बहुचर्चित कहानी है "खामोशी की आवाज ।"

भारतीय समाज पर पाश्चात्य प्रभाव और उसके परिणाम स्वरूप धूमिल होते परम्परागत आदर्शों को भी लेखिका ने कहानी का रूप दिया है ।

अर्थ पर आधारित निम्न वर्ग की दयनीयता एवं मजबूरी को लेखिका ने भलि-भाँति अपनी कहानियों में आँका है । "गलत पुरुष संग्रह की अधिकांश कहानियाँ निम्न वर्ग की विवशताएं उनका जीवन बोध और मूल्य बोध पर केन्द्रित है इन कहानियों में कसक है छटपटाहट है, परन्तु आक्रोश नहीं । लेखिका ने तटस्थ होकर समाज के कुछ त्रासद चित्रों को जीवन्तता प्रदान की है[1] ।

प्रेम और सेक्स का आधुनिक स्वरूप इनकी कई कहानियों में उभर आया है । कयामत आ गयी, नीली आँखों वाला रेगिस्तान, बीच का दरवाजा, साल की पहली रात, गलत पुरुष आदि कहानियों में प्रेम और सेक्स को नये रूप में देखा गया है ।

मेहरुन्निसा की कुछ विशेष कहानियाँ जैसे कानी बाट, आतंक भरा सुख, पितृशोक कयामत आ गई आदि लेखकों की लेखनी से टक्कर लेनेवाली कहानियाँ है । इन कहानियों में व्यक्त अनुभव संसार लेखिका की दृष्टि के प्रति आश्वस्त करता है ।

---

1. रामकुमार मिश्र - समीक्षा - जून 1979, पृ.31

परम्परा से स्त्री को अबला और निस्सहाय देखकर उसकी प्रति
र सामर्थ्य को अनदेखा करना उनके प्रति घोर अत्याचार दिखाना है ।
ाहित्य जगत में पुरुषों का यह रुख देखा जाता है । वैसे प्रतिभा किसी व
ी विरासत नहीं होती । लेखक हो या लेखिका एक साथ एक ही क्षेत्र में दो
प्रतिभा संपन्न हो सकते है । हिन्दी साहित्य जगत को मन्नू भंडारी, कृ
सोबती, उषा प्रियंवदा, दीप्ति खंडेलवाल, निरुपमा सेवती आदि लेखिकाअ
अपनी लेखनी के माध्यम से इतना समृद्ध किया है कि इन पर साहित्य जगत
नाज होना चाहिए । इन लेखिकाओं की कहानियों में भौतिक, पारिवारि
सामाजिक जीवन के स्थूल और सूक्ष्म रूपों का विस्तृत एवं व्यापक चित्रण
हुआ है विशेष कर नारी जीवन के विविध पक्षों को परिवेश के परिवर्तित
रोशनी में सूक्ष्मता से पहचानने का प्रयास इन लेखिकाओं ने किया है । स
रूप से कहा जा सकता है कि ये लेखिकाएं स्त्री और पुरुष को समान्तर
पर स्थापित करने के लिए आस्थापूर्ण प्रयास कर रही हैं और उन्हें एक हद
सफलता भी मिली है । नारी का अधिकार क्षेत्र पहले की अपेक्षा बहुत अ
विस्तृत एवं व्यापक हो गया है समाज में उन्हें "स्व" की प्रतिष्ठा भी मि
अनेक क्षेत्रों में वह पुरुषों के साथ कन्धे से कन्धा मिला कर चल रही है
इतना कुछ प्रगति कर लेने के बावजूद एवं प्रबुद्ध होने पर भी अधिकांश स्त
भी वह संस्कारयुक्त नारियों के समान पराश्रित एवं बंधन युक्त है ।
कालीन लेखिकाओं ने कहानी के माध्यम से इस दुःखद सत्य की ओ
ध्यान खींचा है । इसलिये महिला प्रतिभाओं का अध्ययन अत्यं
हो गया है ।

॰॰॰॰॰॰॰॰॰॰॰॰॰॰॰॰॰॰

तीसरा अध्याय

पात्र - सर्जना के आयाम

तीसरा अध्याय

पात्र - सर्जना के आयाम

पुराने मूल्यों के खण्डहरों से यथार्थ का नया स्वर मुखरित करते समय कहानीकारों ने ऐसे पात्रों से पाठकों का साक्षात्कार कराया है जो समस्याग्रस्त जीवन से पलायन किये बिना उन समस्याओं के बीच जीवन के अर्थ की खोज करते हैं । नयी कहानी के दूसरे चरण में लिखी गयी कहानियों में भी इस प्रकार के पात्र परिलक्षित होते हैं । जैसे साठोत्तरी कहानी में उन पात्रों की ओसत पहचान है जो परिस्थिति एवं परिवेश के अनुकूल नवीन भूमिका निभाते हैं ।

कहानियों के समस्याग्रस्त नारी पात्र

1. समस्याओं की भूमिका

नयी कहानी के विकास क्रम में लेखन के क्षेत्र में प्रतिष्ठा पानेवाली `लेखिकाओं ने सबसे पहले नारी की आन्तरिक एवं बाह्य जीवन के पहलुओं को पहचानने की और समझने की कोशिश की, तत्पश्चात लेखिकाओं ने स्वातन्त्र्योत्तर कालीन सामाजिक परिप्रेक्ष्य में नारी की बदलती भूमिकाओं का रूप प्रस्तुत कर उनके जीवन की व्यक्तिगत एवं पारिवारिक समस्याओं को स्वर प्रदान किया। इस तरह एक ओर जब नारी की वैयक्तिक समस्याएं कहानी में स्थान पाने लगी तो दूसरी ओर समष्टिगत जीवन की समस्याओं से घिरी हुई नारी की कराह और पीड़ा मुखरित होने लगी। सामान्य रूप से यद्यपि लेखिकाओं की कहानी के विषय को कई तरह से बाँटा जा सकता है फिर भी व्यक्ति निष्ठ चेतना के अर्थ में, आत्मसत्ता को सबसे ऊपर स्थापित करने के संघर्ष में रत नारी के अनेकानेक चित्र इन लेखिकाओं ने प्रस्तुत किये। विविधात्मक अनुभूतियों को सम्प्रेषणीयता के धरातल पर उतार कर लेखिकाओं ने जिन कहानियों को रच डाला था उनकी सीमाएं और उनकी सम्भावनाएं हिन्दी कहानी के लिए एक वरदान के रूप में प्रतिष्ठित होने लगी।

नारी जीवन की बाह्यगत समस्याओं में अर्थ और परिवार का गहरा प्रभाव दिखायी पड़ता है आर्थिक दृष्टि से स्वतंत्र होने की कामना और पारिवारिक बंधनों से जकड़े जाने की पीड़ा आधुनिक नारी के व्यक्तित्व को खंडित कर देती है और यहीं से संघर्ष की नयी सीमा रेखा शुरू होने लगती है।अर्थ को प्राप्त कर जीवन की समस्याओं को सुलझाने में

नारी को बहुत कुछ सहना पड़ता है और विवशता का वह सब कुछ सहने को तैयार भी रहती है क्यों कि "अर्थ आधुनिक युग की रीढ की हड्डी है । समाज और व्यक्ति के जीवन से अर्थ निकाल दीजिए, समूचा ढाँचा धराशायी हो जायेगा । स्वातन्त्र्योत्तर भारत के बहुमुखी विकास का केन्द्रीकरण अर्थ में, वर्तुलीकरण औद्योगिक प्रगति में, विकेन्द्रीकरण व्यवसाय में और विस्फोटीकरण भ्रष्टाचार में हुआ है । इस बहुमुखी विकास में नारी ने अपने सामर्थ्य का सहयोग दिया है .... नौकरी करके अपना कोई छोटा मोटा काम करके वह अपने कुटुम्ब का स्तर ऊँचा उठाने में प्रयत्नशील रही है यहाँ उसका सहयोग प्रत्यक्ष-सीधा और समानता के स्तर पर है[1] ।

कहानियों में आनेवाली विभिन्न नारी पात्र यद्यपि कई प्रकार की समस्याओं से ग्रस्त नज़र आती हैं फिर भी उनमें आर्थिक एवं पारिवारिक समस्याओं से घिरी हुई नायिकाओं की संख्या अधिक है। इस कारण कई कहानियों में आर्थिक एवं पारिवारिक समस्याएं समानान्तर चलती हैं । आर्थिक स्थिति को सुधारने और पारिवारिक समस्याओं को हल करने के लिए अपने व्यक्तिगत सुख सुविधाओं को तिलांजलि देने की मजबूरी आज की मध्यवर्गीय नारी के जीवन से जुड़ी हुई है । इसका सशक्त चित्रण लेखिकाओं ने अपनी कहानियों में प्रस्तुत किया है ।

2. नारी पात्र और आर्थिक समस्याएं

मन्नू भंडारी की कहानी 'क्षय' की नायिका कुन्ती आर्थिक समस्याओं से आहत नारी है जिसके जीवनादर्श एवं मान्यताएं आर्थिक समस्याओं के थपेड़ों से जर्जर हो जाती है । कुन्ती के सामने सबसे बडी

---

1. सुशीला मीत्तल - आधुनिक हिन्दी कहानी में नारी की भूमिकाएं - पृ.113

समस्या उसके व्यग्रस्त पिता है । पिता की दवा-दारू में कुन्ती के काफी रुपये खर्च हो जाते हैं और कुन्ती अपने तुच्छ आय से यह खर्च जो पाने में असमर्थ हो जाती है । उसकी यह असमर्थता उसे सावित्री के घरवालों के अधीनस्त कर देती है । सावित्री संपन्न वर्ग की है जिसे ट्यूशन पढ़ाने के लिए कुन्ती उसके घर जाया करती है । अपनी यान्त्रिक और व्यस्त जिंदगी को देखकर कुन्ती सोचती है कि उसकी जिंदगी कितनी नीरस हो गयी है । स्कूल से लौटने पर न तो वह पत्र पत्रिकाएं पढ़ सकती है न वायलिन बजा सकती है । कुन्ती ट्यूशन छोड़ देने का संकल्प करती है तभी पिता की बीमारी और खर्च एक प्रश्न बन कर उसके सामने खड़े हो जाते हैं तब मजबूरीवश उसे अपने निर्णय को बदलना पड़ता है ।

कुन्ती बड़ी मेहनत और लगन के साथ अपनी छात्रा को पढ़ाती है । लेकिन मन्दबुद्धि और अर्थ संपन्न सावित्री इम्तहान में पास होना जानती ही नहीं । सावित्री की माँ कुन्ती से अन्य अध्यापिकाओं से मिलकर कुन्ती के लिए पैरवी करने का आग्रह करती है । कुन्ती सावित्री की माँ के आग्रह को नकार नहीं पाती । क्योंकि आर्थिक रूप से वह उनके अहसानों से दबी हुई है जिस कारण बेमन से वह स्कूल पहुँचती है "यह घटना उसके जीवन में सबसे बड़ा हादसा सिद्ध होती है, जब कि वह पहली बार इस समय अपने आप को नज़र से गिरी पाती है । कहानी के प्रारम्भ में जहाँ उसे अपने भाई टुन्नी और बापा के पैरों के नीचे की ज़मीन निहायत गलत और भ्रष्ट लगी थी आज सावित्री के स्कूल में आकर वह अपने को उसी ज़मीन पर खड़ी पाकर सहम जाती है'[1]

1· डा· बंसीधर, डॉ· राजेन्द्र मिश्र - मन्नू भंडारी का श्रेष्ठ सर्जनात्मक साहित्य - पृ·69

यहाँ लेखिका ने यह स्पष्ट किया है कि आदर्श और यथार्थ के संघर्ष में जीत यथार्थ की ही होती है । अर्थ प्रधान इस युग में मनुष्य अपने आदर्शों से च्युत हो जाते हैं । आर्थिक समस्या अपने देत्याकार हाथों से मनुष्य को इस तरह दबोच लेती है कि विवशतावश उसे अपने आदर्शों से हाथ धोना पड़ता है । यहाँ कुन्ती की भी यही स्थिति है ।

'सजा' कहानी की आशा भी पारिवारिक एवं आर्थिक समस्याओं में उलझी हुई है ।

आशा के पिता पर बीस हजार रुपये के गबन का झूठा इल्जाम लगाकर उन्हें जेल भेज दिया जाता है । पिता के जेल चले जाने पर परिवार की स्थिति शोचनीय हो जाती है । पैसे के अभाव में आशा की पढ़ाई रुक जाती है । मुन्नु की पढ़ाई के लिए आशा और मन्नु चाचा के घर चले जाते हैं । केस और अन्य खर्च के पीछे में माँ के सारे गहने बिक जाते हैं और बैंक की जमापूंजी भी खत्म होने लगती है इन आर्थिक परेशानियों के कारण आशा का सुनहरा भविष्य अन्धकारमय हो जाता है । उसके सारे सपने टूटने लगते हैं । डाक्टर बनने का ख्वाब देखने वाली आशा चाची के घर की नौकरानी बन जाती है । चाची के कठोर व्यवहार को देखकर आशा उन्हें खुश रखने का संकल्प करती है । "मैं कालेज नहीं जाऊंगी । घर का सारा काम मैं करूंगी जिससे चाची को पूरा आराम मिले और उनका गुस्सा ठंडा रहे । चाची कुछ भी कहेंगी तो चूं तक नहीं करूंगी । वह प्रसन्न रहेंगी तो मन्नु सुरक्षित रहेगा । मन्नु को समय से मन्नु को रात में बैठ कर पढ़ाया करोगी ।"[1]

---

1. मन्नु भण्डारी, सजा, मन्नु भण्डारी की श्रेष्ठ कहानियाँ - पृ. 158

उम्र से भी ज्यादा आत्म विश्वास और दायित्व की भावना आशा के अन्दर है । संघर्ष और संकट के समय माँ को, पिता को, भाई को सान्त्वना देने वाली मात्र आशा ही है ।

आशा के आत्मबल और दृढ़ व्यक्तित्व को चित्रित कर लेखिका ने नारी की सन्तुलित मानसिकता की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया है । अर्थाभाव के कारण उपजी विवशताएं "शायद" की माला के दाम्पत्य जीवन में दरारें उत्पन्न करती हैं । आर्थिक समस्याओं के कारण वह अपना परिवार सीमित रखना चाहती है जिस कारण पति के प्रति वह कोई विशेष लगाव नहीं दिखाती । माला की विवशता और मजबूरी को राघव नहीं पहचान पाता क्यों कि राघव परिवार में एक अतिथि के समान आता है और छुट्टियाँ खत्म होने तक नौकरी स्थल लौट जाता है उसके बाद घर की सारी समस्याएं माला के कन्धे पर होती है । माला इन समस्याओं को ढोते ढोते थक सी जाती है ।

यहाँ लेखिका ने अर्थाभाव के कारण संबंधों के बीच उत्पन्न होने वाले मसलों को प्रस्तुत किया है । आर्थिक मजबूरियों के कारण पति-पत्नी को अपनी कामनाओं पर अंकुश लगाना पड़ता है और अपने जीवन को यान्त्रिक एवं अस्वाभाविक बनाना पड़ता है ।

अतिशय अभाव के दिनों में भी मातृत्व के अरमान को बनाये रखने वाली नारी है "पेराम्बुलेटर" की कालिन्दी । कालिन्दी अपने भावी शिशु को लेकर कई सपने देखती है । वह उसके लिए एक पेराम्बुलेटर खरीदती है लेकिन उसकी सारी कल्पनाएं बिखर जाती है जब वह एक मरे हुए बच्चे को जन्म देती है । समय की तेज रफ्तार में कालिन्दी के जीवन की आर्थिक

समस्याएं बढ़ती जाती है । समस्याओं से घिरा हुआ कालिन्दी का पति उससे पेराम्बुलेटर बेच डालने को कहता है लेकिन कालिन्दी पेराम्बुलेटर को अपने मृत बच्चे का प्रतीक मानती है । पेराम्बुलेटर को प्राणों से भी ज्यादा प्यार करने वाली कालिन्दी, अपने दूसरे बच्चे के रोगग्रस्त हो जाने पर, उसकी चिकित्सा के लिए पेराम्बुलेटर बेच डालने को विवश हो जाती है ।

अर्थाभाव के कारण उभरी हुई, एक माँ की एक पत्नी की विवादात्मक स्थिति का जीवन्त चित्रण यहाँ प्रस्तुत किया गया है ।

रानी माँ का चबूतरा की गुलाबी निम्न वर्ग की समस्याग्रस्त नारी है जो अपने शराबी पति से बाज आकर उसे घर से निकालने को विवश हो जाती है । आर्थिक परेशानियों के कारण उसका मन अस्वस्थ रहता है । किसी की परवाह किये बगैर पागलों की तरह वह अपने बच्चों को मारती-पीटती-कोसती है। इस कारण गुलाबी एक बेढब और विद्रोहिणी नारी के रूप में गांव भर में मशहूर हो जाती है । गांव की महिलाएं उसके व्यवहार से उत्तेजित होकर उस पर कई तरह के आरोप लगाती है लेकिन विद्रोहिणी गुलाबी अपराजेय योद्धा की भांति पराजय स्वीकार किये बगैर अपने बनाये हुए मार्ग पर निश्चिन्त होकर चलती है ।

गुलाबी में स्वाभिमान की भावना हद से ज्यादा है । गुलाबी गरीब जरूर है लेकिन दूसरों के समक्ष अपनी गरीबी का दुखड़ा गाकर दामन नहीं फैलाती । एक बार उसकी बेटी किसी दूसरे के द्वारा खरीदी चूड़ियां पहन कर आती है जिसे देखकर गुलाबी क्रोधाकुल हो जाती है और उसी वक्त वह उन चूड़ियों को तोड़ देती है । वह किसी पराये की सहायता को भीख समझती है और किसी से शाब्दिक सहानुभूति सुनना नहीं चाहती ।

गुलाबी के जीवन का एक मात्र लक्ष्य अपने बच्चे को शिशु सुरक्षा केन्द्र में दाखिला दिलवाना है उसके लिए वह दमतोड़ मेहनत करती है। रात भर बाहर काम करने जाती है इस पर गाँव भर के लोग उसके चरित्र पर कई तरह के आरोप लगाते हैं। गुलाबी इन सब की ओर से निश्चिन्त होकर अपने लक्ष्य प्राप्ति के लिए कार्यरत रहती है और लक्ष्य प्राप्त करते करते उसकी मृत्यु भी हो जाती है।

"कहानी का अन्त पैथेटिक है। उसकी अँगिया में से प्राप्त कागज की पुड़िया को दीये के प्रकाश में जब काकी खोल कर देखती है तो उसमें काँच की दो छोटी छोटी हरी चूड़ियाँ और शिशु सुरक्षा केन्द्र की पाँच रुपये की रसीद मिलती है यह घटना गाँव की महिलाओं के उन आक्षेपों को बुझा देती है जो वे गुलाबी के मातृत्व और चरित्र पर लगाया करती थी'।

आर्थिक परेशानियों से, जीवन के अरमानों का गला घोंट कर अभिशप्त जीवन यापन करनेवाली नारी है दीप्ति खंडेलवाल की कहानी 'अभिशप्ता' की मामो। मामो एक अध्यापिका है जिस पर परिवार के सारे सदस्य आश्रित है। परिवार में पिता से भी ज्यादा मान सम्मान मामों को मिलता है लेकिन मामो को यह सब बहुत ही अस्वाभाविक सा लगता है।

मामो अपने भविष्य को रौंद कर बहनों के भविष्य को सवारती है। परिवार के प्रति अत्यधिक दायित्व की भावना होने के कारण वह अपने प्रेमी प्रशान्त से रिश्ता तोड़ती है और अपने लिए आए इंजीनियर वर को बहन सुषमा के लिए त्याग देती है "कर्त्तव्य पालन के गौरव से मामो दमका उठा

---

1. डॉ. बंसीधर, डॉ. राजेन्द्र मिश्र - मन्नू भंडारी का श्रेष्ठ सर्जनात्मक साहित्य - पृ.55

गई थी कि कन्यादान के समय उसने उस इंजीनियर वर के मस्तक पर आशीर्वाद का हाथ एकदम सहज होकर रख दिया था।[1]"

मानो के त्याग और बलिदान को देख कर उसके माता-पिता खुशी से फूले नहीं समाते। माँ कहती है "मानो तूने जब तूने जन्म लिया कर मैं धन्य हुई। भला कौन ऐसी लड़की होगी बेटी जो खुशी-खुशी इतना त्याग करे पिता कहते हैं "मानो तू सचमुच देवी है देवी........ जो दान देती ही रहती है लेती नहीं।[2]" पर मानो की प्रशंसा उसे तीर की तरह चुभने लगती है जिससे उस की जख्म की पीड़ा और भी बढ़ जाती है।

मानो की ढलती हुई उम्र की गवाही उसके पके हुए बाल देते हैं जिसे देखकर माँ कहती है "ये भी कोई बाल पकने की उम्र है। तू तो पैंतीस की भी नहीं है। मानो को माँ की सहानुभूति का स्वर असह्य लगने लगता है। अब ऐसे स्वर उससे सहे नहीं जाते... नींद का अभिनय करते मानो को लगता है, वह इतनी थक गई है कि कल स्कूल भी नहीं जा सकेगी।[3]" मानो की थकावट समस्याओं के भार से उत्पन्न है जो आजीवन उसके साथ वर्तमान रहेगी।

दीप्ति खंडेलवाल की प्रतिभा को दर्शानेवाली इस कहानी में, त्याग की भावना से ओतप्रोत नारी के जीवन को, परिवार का स्वार्थ किस तरह से लूट लेता है और किस तरह वह घुटन और विवशता का अनुभव करती है, इसका सशक्त चित्रण मिलता है। अर्थाभाव के कारण अपनी इज्जत बेचने को मजबूर नारी है 'धुंध की रधिया'। रधिया निम्न वर्ग की नारी है, जो अपने

---

1. दीप्तिखंडेलवाल, अभिशप्ता, समीर घर, - पृ.67
2. वही - पृ.67-68
3. वही - पृ.72

रोगग्रस्त पति की जान की खातिर दर-दर भटकती है । सब उसकी सहायता के लिए तैयार है लेकिन बदले में चाहते हैं उसका भरा पूरा यौवन । रधिया दीर्घकाल तक अपनी इज्जत बचाये रखती है लेकिन अन्त में उसे समाज के भेड़ियों से अस्मत का सौदा करना पड़ता है ।

यहाँ लेखिका ने यह व्यक्त किया है कि अर्थ प्रधान हमारे समाज में नारी की आबरू का कोई मूल्य नहीं । कौड़ियों के मोल में वह बेची जाती है ।

आर्थिक और पारिवारिक समस्याओंके बोझ से दबी नारी है 'कोई जमीन नहीं' की सरला । सरला का पति स्वरूप एक स्कूल मास्टर है । स्वरूप के तुच्छ आय से चार बच्चों का और स्वयं दोनों का पेट भरना नामुम किन है । जिस कारण कभी कभी सरला को भूखी रहना पड़ता है "आरा से खत्म हो गया अपने लिए चावल बना सूगी । सरला आखें झुका लेती है रसोई में, कोने में रखे चावल वाले कनस्तर को खोलकर देखता है "कहाँ है इसमें चावल ? वह चीखता है सुनो आज मेरा व्रत है ।" यह कह कर झूठ को छुपाना चाहती है।

आर्थिक परेशानियों के कारण स्वरूप अपनी पत्नी से शारीरिक संबंध नहीं जोड़ पाता क्यों कि वह अपने परिवार को और बढ़ाना नहीं चाहता । विवशता की जन्जीर स्वरूप को जकड़ लेती है । अर्थ की समस्या किस प्रकार दाम्पत्य जीवन के सुखों को ग्रस्त लेती है इसका स्पष्ट चित्रण इस कहानी में मिलता है ।

1· दीप्ति खंडेलवाल, कोई जमीन नहीं, वह तीसरा, - पृ·76-77

नारी पात्र और पारिवारिक समस्यायें

पारिवारिक समस्याओं पर आधारित कहानी है मन्नू भंडारी की "ऊंचाई आकाश नाई" । कहानी के मूल में नारी मन की वेदना और सिसकियां हैं । दिनेश और लेखा पति-पत्नी है दोनों का अपना स्वतंत्र जीवन है फिर भी उन्हें अपने जीवन में कुछ अभाव खटकता है । कलकत्ता के व्यस्त और यान्त्रिक जीवन से दिनेश से ज्यादा उबाहट और अस्वस्थता का अनुभव करती है लेखा । अपने यान्त्रिक जीवन में दो साल की पढाई और नौकरी के बीच वह भूल ही जाती हैकि "उसका एक लम्बा चौडा परिवार है, उस परिवार की समस्याएं हैं, उसके सामने तो उसका भविष्य था, केरियर था, बडे-बडे अरमान थे ।"[1]

लेखा शहर की व्यस्त जिंदगी से ऊब कर गांव की ओर जाती है लेकिन गांव मे परिवार की छोटी-बडी समस्याओं से इतनी बेचैन हो जाती है कि तुरन्त कलकत्ता लौट जाने को तय कर लेती है ।

कहानी की दूसरी समस्याग्रस्त पात्र है सुषमा । सुषमा की भी अपनी निजी पारिवारिक समस्याएं हैं । सुषमा एक नौकरी पेशा नारी है । घर-गृहस्थी एक कर वह घर सम्भालती है । सुषमा अपना जीवन साथी स्वयं ढूंढ लेती है लेकिन घर वाले उसकी खुशियों के खिलाफ हैं । वे नहीं चाहते कि सुषमा ब्याह कर अलग घर बसाये । घर के स्वार्थ भरे वातावरण को देखकर उसे असीम पीडा होती है । वह सोचती है कि "पिछले तीन वर्ष से मैं केवल घर वालों के लिए मर खप रही हूं । नौकरी के साथ दो-दो

---

1. मन्नू भंडारी, ऊंचाई आकाश नाई, मेरी प्रिय कहानियां, पृ.73

[illegible] करके मैंने घर का सारा खर्च चलाया ----- पर इन लोगों से इतना भी नहीं होता कि मेरी हँसी-खुशी में साथ दें ।"[1]

इस कहानी में लेखिका ने समसामयिक नारी जीवन के दो पहलुओं का प्रस्तुत किया है । लेखा अपने जीवन को समस्याओं का शिकार नहीं बनाना चाहती है जब परिवार की समस्याओं से उसका सामना होता है तो घबरा कर वह अपने सीमित जीवन की ओर लौट जाती है । उसके विपरीत समस्याओं से जूझती हुई जीवन बितानेवाली शुक्ला अन्त में महसूस करती है कि पारिवारिक समस्याओं से मुक्त हुए बिना उसका अपना जीवन नहीं बन सकता इस कारण वह परिवार को ठुकरा कर अपने प्रेमी से ब्याह कर लेती है । दोनों स्त्रियाँ इस बात पर सहमत हो जाती है कि स्त्री को अपना अलग परिवार बसाना है दूसरों के लिए जीना और समस्याओं को दोनों बेकार है, विशेषकर आज के स्वार्थ भरे युग में ।

पारिवारिक समस्याओं को झेलते झेलते उससे हार कर पलायन करनेवाली नारी है संबंध की श्यामला । श्यामला यौवन के सारे सपनों को तोड कर यातनाएँ सहती है लेकिन इसका कोई शुभ परिणाम नहीं निकलता है । श्यामला का भाई शिक्षित होकर भी बेरोजगार है, बहन प्रिया दादा के पास रहती है उसका वहाँ रहना दाल-भात में मूसलचंद के समान है प्रिया चाहती है कि श्यामला अपनी छोडी हुई नौकरी को अपना ले ताकि वह उसके साथ आराम से रह सके । लेकिन श्यामला किसी का बोझ ढोना नहीं चाहती है इस कारण वह सब प्रकार की पारिवारिक परेशानियों से दूर भाग कर अकेले रहने लगती है उसका एक मात्र दोस्त सर्जन है । लेकिन सर्जन के प्रति भी वह पूर्ण रूप से समर्पित नहीं पाती । वास्तव में श्यामला परिवार वालों से और उनकी समस्याओं से पलायन नहीं करती, बल्कि वह स्वयं अपने आप से पलायन करती है । जीवन के प्रति उसमें जो निस्संगता बोध है वही उसके पलायन का आधार है ।

---

1. मन्नू भंडारी - एखाने आकाश नाई - मेरी प्रिय कहानियाँ-पृ.57

इस कहानी में श्यामला एक ऐसे वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है जो आर्थिक परेशानियों से कुंठित होकर जीना भूल जाती है । यहाँ लेखिका ने यह स्पष्ट किया है कि किस प्रकार पारिवारिक दायित्व स्त्री की आकांक्षाओं को कुचल डालती है ।

4· शोषित नारी पात्र

निस्सहाय नारियों के प्रति समाज के कटु व्यवहार को शिवानी की कहानी "करिए छिमा" में देखा जा सकता है । हीरावती एक पतिता नारी है जो पतिता होकर भी पतिता नहीं लगती । हीरावती के रूप यौवन पर उसके जीजा धर्मसिंह की वासनाभरी दृष्टि पड़ती है वह उससे संबंध जोड़ने जाता है लेकिन पकड़ा जाता है । बात गाँव के न्यायाधीश तक पहुँचती है । धर्मसिंह झुठबोल कर बच निकलता है और सजा मिलती है हीरावती को । उसे गाँव से बाहर निकाल दिया जाता है ।

हीरावती गाँव के बाहर अकेले रहने लगती है । गाँव भर के नौजवान उसके रूप यौवन को देखकर आहें भरने लगते हैं । गाँव के माननीय न्यायधीश श्रीधर भी उसके यौवन के शिकार बन जाते हैं हीरावती श्रीधर की संतान की माँ बन जाती है । समाज में श्रीधर के सम्मान को बनाये रखने केलिए हीरावती अपनी संतान को अपने हाथों से ही मार डालती है और हत्यारिन के रूप में सजा काटती है ।

हीरावती उन समस्याग्रस्त नारियों का प्रतिनिधित्व करती है जिसकी सुनवाई भगवान के न्यायालय में भी नहीं होती । लेखिका ने अपनी कहानी में इस सत्य को स्पष्ट किया है ।

नारी की मजबूरी और रूढ़ अंधविश्वासों से ग्रस्त नारी के विवश जीवन को "चीलगाड़ी" में उभारा गया है। कहानी की नायिका उच्च वर्ग की

साथ कर देती है । शादी के चंद महीनों के बाद ही पति की मृत्यु हो जाती है । नायिका पर पति की मृत्यु का आघात लेश मात्र भी नहीं पड़ता क्योंकि पति की ओर से वह पूर्ण रूप से उपेक्षित थी। चारों ओर के शोकग्रस्त वातावरण को देखकर भी नायिका अपने चेहरे पर वेदना के भाव ला पाने में असमर्थ रहती है "बड़ी अम्मा की दबी सिसकियाँ, दोनों जिठानियों का मशीन विलाप, सब सुनकर भी मैं नहीं रो पायी । उस कठोर, निर्मम व्यक्ति के साथ बिताये गये सात महीने की अवधि में मुझे एक भी ऐसा पुण्य प्रसंग स्मरण नहीं आ रहा था जिसका आधार लेकर मैं बिलख सकती[1] ।"

नायिका मौका पाते ही घर से भाग निकल कर पेयर होस्टेस बन जाती है । नायिका अपनी जेठानियों की तरह रूप यौवन को नष्ट कर विधवा जीवन यापन करने को तैयार नहीं है ।

जेठानियाँ मजबूरी वश विधवा जीवन बिताती है । वैसे दोनों रंगीन मिजाज की है जो अवसर के अनुकूल अपने को ढाल लेती है । दिन में जिस चादर को बिछा कर भक्ति-भाव से सिर हिलाते, कृपासदत्त पंडित जी से शिवपुराण सुनती रात को उसी चादर की चाँदनी को बिछाकर देवुलमा और उनके एक रसिक प्रवर मित्र को लेकर तारा की ब्रिज लीला जमाती[2] ।

इन नारियों को बदस्तर का नहीं कह सकते क्योंकि समाज की रूढ़ मान्यताओं के कारण उन्हें विधवा नारी का मुखौटा धारण करना पड़ता है अतः मौका मिलते ही वे अपनी दमित कामनाओं को साकार करने का प्रयास करती है, इस कहानी के माध्यम से नारी मन की मौलिक वृत्ति का परिचय देने के साथ-साथ विधवा जीवन की विडम्बनाओं की ओर भी लेखिका ने हमारा ध्यान खींचा है ।

1· शिवानी - चील गाड़ी - मेरी प्रिय कहानियाँ - पृ·74

2· शिवानी - चील गाड़ी - मेरी प्रिय कहानियाँ - पृ·75

2. अकेलेपन के शिकार पात्र

अकेलापन, कुंठा, सन्त्रास आदि आधुनिकता की विसंगतियों से जुड़े ऐसे तत्व हैं जो आधुनिक मानव की नियति को रेखांकित करते हैं। ये तत्व किसी संक्रामक रोग के कीटाणुओं से कम नहीं हैं, क्यों कि रोग की तरह ये भी परिवेश में संक्रामक स्थिति उत्पन्न करते हुई है।

पिछले कई दशकों से लेकर हिन्दी कहानी साहित्य में इन तत्वों का समावेश होता आया है। वास्तविकता तो यह है कि इनकी व्याप्ति हमारे सारे संबंधों में संश्लिष्ट रूप से लक्षित होती है। अतः इन तत्वों को अनदेखा करना साहित्यकारों के लिए अपने दायित्व से वंचित होना है। इस सन्दर्भ में श्रीपतराय के विचार समीचीन लगते हैं। "समसामयिक संवेदना में विराग, कुंठा, निस्सारता सब जीवित तत्व हैं। इन मानसिक स्थितियों को केवल वे नकार सकते हैं, जिनको जीवन-संबंधी समस्याओं में कोई रस नहीं है। जो समाज इन आधारभूत प्रश्नों को न अनुभव के धरातल पर, न चिन्तन के धरातल पर ही स्वीकार करता है, वह समाज जीवित नहीं है। उसके जीवित रहने या न रहने से अन्तर भी क्या पड़ता है इसी के समाधान में आज का संवेदनशील लेखक अपनी मेधा का उपयोग कर रहा है[1]।"

आधुनिक लेखिकाओं ने समसामयिक जीवन में विशेषकर नारी जीवन में व्याप्त अकेलापन, निराशा, कुंठा जैसे जीवित तत्वों को सफलतापूर्वक सम्प्रेषित करने का सार्थक प्रयत्न किया है। नगर परिवेश में जीवन यापन करनेवाली आधुनिकाओं का जीवन किस तरह से आधुनिकता के तत्वों से प्रभावित होता जा रहा है इसका सम्यक चित्रण उनकी कहानियों में उपलब्ध होता है।

---

1. श्रीपतराय समकालीन कहानी में नयी संवेदना - विकल्प कथा साहित्य विशेषांक - नवम्बर 1968, पृ.27-28

उषा प्रियम्वदा की कहानी "छुट्टी का दिन" की माया आर्थिक रूप से स्वतंत्र नारी है लेकिन उसे अपने स्वतंत्र जीवन में शून्यता एवं अकेलापन ही नज़र आता है जिस कारण उसका चरित्र निराशा, कुंठा आदि के आवरण से आच्छादित रहता है विशेषकर छुट्टियों के दिनों में उसे अजीब तरह की घुटन होती है । एक-एक पल उसे नागिन की तरह डसने लगता है । समाज में माया आचरण की स्वतंत्रता चाहती है लेकिन परम्परागत नैतिक बोध से संचालित समाज उसे उसकी छूट नहीं देता । एक अध्यापिका होने की वजह वह समाज के नैतिक नियमों का उल्लंघन भी नहीं करना चाहती । जीवन की यान्त्रिकता को देखकर उसे अपना जीवन आधारहीन और लक्ष्यहीन लगने लगता है । छुट्टी के दिनों में उसे होने वाली बोरियत उसके जीवन की एक रसता एवं यान्त्रिकता का परिचय देती है ।

माया के जीवन का अकेलापन, उचाटह हताशा आदि उचित संगी-साथी के अभाव के कारण है। नारी चाहे कितनी भी आधुनिक और आत्म-निर्भर क्यों न हो, उसे जीवन में एक साथी की जरूरत होती है जिसके अभाव से उसे अपने जीवन में अपूर्णता का एहसास होता है । और ऐसा लगना स्वाभावि भी है। माया के जीवन की विवशता, मजबूरी आदि परिवेश जन्य है जिससे बाध्य होकर वह एक बेजान पुतली के समान अपने अस्तित्व को बनाये रखती है । "पूर्ति" कहानी की तारा भी अकेलेपन की व्यथा से पीड़ित है । तारा के पास सब कुछ है। अच्छी नौकरी है, धन है, दौलत है लेकिन उसके प्रति आत्मीयता दिखाने वाला कोई नहीं है, जिसके कारण उसे अपने जीवन में कुछ अभाव सा खटकता, है और उसे लगता है कि उसका जीवन अनचाहे-अनजाने मार्ग से होकर गुज़र रहा है । अपने आप को तसल्ली देने एवं दूसरों के समक्ष अपने आप को पूर्ण सिद्ध करने के उद्देश्य से वह कहती है "मैं सुखी हूँ सुखी हूँ .... मेरे पास धन है .... सुखी हैं लेकिन अपूर्णता का बोध उसकी अन्तरात्मा में है और उसी बोध के कारण वह घुट घुट कर जीवन बिताती है ।

जीवन की तन्हाई में तारा को साथ मिलता है नलिन का । नलिन के स्नेहिल स्पर्श से वह निहाल सी हो जाती है । उसे लगता है कि उसके सूखे उपवन में पिरकाल के बाद बसंत का आगमन हुआ है । वह भीतर ही भीतर गहरी तुष्टी का अनुभव करती है। वह महसूस करने लगती है कि इस भरी दुनिया में वह अकेली नहीं है ।" किसी जगह नलिन भी है जिसने उसे निर्गन्ध फूल समझ कर मुंह नहीं फेर लिया, बल्कि लेकर सिर माथे पर चढा लिया है ।"[1]

दो अन्धेर की सुमित्रा भी एकाकीपन की शून्यता से घिरी नारी है । सुमित्रा अविवाहित, स्वतंत्र एवं आत्मनिर्भर है । वैवाहिक जीवन के बोझ एवं समस्याओं से दूर उसकी अलग जिंदगी है । उसे अपने जीवन यात्रा में कुछ पल के लिए शंकर का साथ मिल जाता है जो आम आधुनिक पुरुषों की तरह कुछ समय तक उसके साथ हंस खेल कर अपनी अलग जिंदगी बसा लेता है । शंकर के ठोकर मारने पर सुमित्रा टूटती जरूर है, लेकिन बिखरती नहीं । अपने व्यक्तित्व को और अधिक मजबूत कर जीने का संकल्प करती है । शंकर द्वारा दगा दिये जाने पर, न तो वह परम्परागत प्रेमिकाओं की तरह आत्महत्या का प्रयास करती है और न ही शंकर की बेवफाई पर आंसु बहाती है ।

इस कहानी में आधुनिक नारियों के बदलते दृष्टिकोण एवं मान्यताओं पर प्रकाश डाला है ।

"सुरंग" कहानी के तीनों पात्र अकेलेपन के बोध से आहत नजर आते हैं । तीनों एक छत के नीचे रहते हुए भी एक दूसरे से अजनबी हैं । माँ और दो बेटियों की अलग जिंदगी और अलग समस्याएं हैं । बेटे की आकस्मात मृत्यु के पश्चात माँ का जीवन पूर्ण रूप से आध्यात्मिक हो जाता है ।

1· उषा प्रियम्वदा - पूर्ति - जिंदगी और गुलाब के फूल - पृ·83

अरुणा एक स्कूल की अध्यापिका थी । कुछ कारणवश वह आत्महत्या करने की कोशिश करती है लेकिन विफल हो जाती है और इस विफल कोशिश का दाग उसके जीवन के लिए एक प्रश्न बन जाता है । अरुणा की छोटी बहन बेबी सप्लीमेन्टरी लिख रही है जिस कारण उसकी पढ़ाई घर पर ही होती है । घर पर वह माँ की ओर से उपेक्षित है और दीदी के प्रति भी कोई खास लगाव नहीं दिखाती । बेबी अपने अन्दर कोई भारी दुःख पाल रही है इसका ज्ञान माँ और दीदी को है । दीदी बेबी के दुखों का कारण जानना चाहती है लेकिन माँ अपने संकीर्णता से हटती नहीं है । वह न तो बेबी की उदासी का कारण जानना चाहती है और नही उसमें समाये हुए अकेलेपन के भाव को उखाड फेंकने का प्रयास करती है ।

माँ के व्यक्तित्व में ममता की कमी बेटे की अकाल मृत्यु के कारण हो सकती है जिस कारण वह अपने दायित्व एवं कर्त्तव्यों से विमुख है । इस कहानी में अकेलेपन का भाव एक परिवार के सदस्यों के बीच है । आधुनिक युग में आत्मीयता के अभाव से उभरी हुई त्रासयुक्त स्थितियाँ किस तरह अकेलेपन को जन्म देती हैं, इसका उत्तम उदाहरण यह कहानी है ।

दीप्ति खण्डेलवाल ने आधुनिक समाज में व्याप्त अकेलेपन के भाव को बखूबी से चित्रित किया है। "दो पल की छाँव" की नायिका एक चंचल किस्म की लड़की थी जो जीवन को "ऐक्शन" और "थ्रिल" समझती थी लेकिन जीवन के बदलते परिवेश और परिस्थितियाँ उसकी जिंदगी के "ऐक्शन" और "थ्रिल" को मायूसियों के घेरे में आबद्ध कर उसे अकेलेपन की अवस्था में छोड़ देती है । जीवन के प्रति उसके सारे विचार और मान्यताएं धीरे-धीरे बदलने लगती हैं। "धीरे धीरे कब, कैसे वह मुर्दा होती गई ...... उसे स्वयं ही समझ में तब आया जब वह भीड़ से डरने लगी, बहुत अपने लगते चेहरे बहुत ही पराये लगने लगे शोरगुल उसे बहरा बनाने लगा, आवाजों के बीच वह गूंगी होने लगी .... अब वह जानबूझ कर एकान्त तलाशती है - निर्जन, नीरव एवं

जहाँ स्वयं के निकट केवल स्वयं ही हो ...... जहाँ जिंदगी के खोये अहसास कुछ पल के लिए उसे वापस मिल जाए।[1]"

समय के करवट बदलने के साथ ही उसके अपने सब पराये हो जाते हैं और वह उन परायों की भीड़ में अकेली रह जाती है। उसका एक मात्र सहारा उसका बेटा है जो उसका सपना है। अपने बेटे के उज्ज्वल भविष्य के लिए वह सबके समक्ष उसकी आँटी का रोल अदा करती है।

नायिका के क्लान्त जीवन में कुछ क्षणों के लिए एन्टोनी का प्रवेश होता है। एन्टोनी के खुले व्यवहार एवं बेटे के प्रति लगाव को देख कर नायिका को अनजाने में उसके प्रति एक मोह सा होने लगता है। लेकिन एन्टोनी नायिका के तपते जीवन को दो पल की छाँव देकर चला जाता है और फिर वह अकेली रह जाती है।

मेहरून्निसा परवेज ने "आरजू के फूल" में एक पत्नी के अकेलेपन की वेदना को वाणी दी है। नायिका परदेस गये पति के इन्तजार में दिन-रात एक करती है। पति के दूर रहने पर वह निराशाग्रस्त और उदास रहती है फिर भी उसमें आत्मबल की कमी नहीं है। आरजू के फूल खिला कर वह अपने तड़पते हुए मन को सान्त्वना प्रदान करती है। उसे आत्मतोष इस बात पर होता है कि उसका पति देश की खातिर दुश्मनों से लड़ रहा है। इस कारण वह कहती है "मेरे नाथ तुम आओ तो जीत कर आना मैं दुल्हन की तरह सज-संवर कर तुम्हारी राह देखूंगी और गाँव के रास्ते को फूलों से सजा दूंगी। तुम उस पर जीत का सेहरा बांध कर आना।[2]"

---

1. दीप्ति खंडेलवाल - दो पल की छाँव - दो पल की छाँव - पृ.9
2. मेहरून्निसा परवेज - आरजू के फूल - टहनियों पर धूप - पृ.122

नायिका की द्वन्द्वात्मक मानसिकता है । एक ओर वह पति की विरहाग्नि में तड़प कर अकेलेपन का अनुभव कर दुखी होती तो दूसरी ओर एक आदर्श देश भक्तिन की तरह पति के विजित होकर आने की कामना करती है ।

मन्नू भंडारी ने "अकेली" कहानी में सोमा बुआ के अकेलेपन की स्थिति का हृदय विदारक यथार्थ चित्रण किया है । पुत्र की अकाल मृत्यु से उत्पन्न दुख के कारण पति पति सन्यासी हो जाता है और सोमा बुआ अकेली हो जाती है । अपने अकेलेपन की अवस्था में दूसरों की आँखों के सामने अपना महत्व बढ़ाने के उद्देश्य से जीवन के शेष पल वह बिताना चाहती है । इसी वजह से वह सबके समक्ष हास्य का पात्र बन जाती है । दूसरे के लिए मर मिटना उसके व्यक्तित्व की एक विशेषता है । "किसी के घर मुण्डन हो, छठी हो, जनेऊ हो, शादी हो या गमी, बुआ पहुँच जाती है और फिर छाती फाड़ कर काम करती, मानो वे दूसरे के घर में नहीं अपने ही घर में काम कर रही हो[1] ।"

सोमा बुआ को अपने अकेलेपन की जिंदगी में उतनी व्यथा नहीं होती जितनी कि उसके पति के आने पर होती है । उसका शान्त जीवन अशान्तिपूर्ण हो जाता है । उदासी और आन्तरिक पीड़ा से उसका मन टूटने लगता है । "क्यों कि पति के स्नेहहीन व्यवहार का अंकुश उनके रोजमर्रा के जीवन की अबाध गति से बहती स्वच्छन्द धारा को कुंठित कर देता[2] ।"

सोमा बुआ के हृदय की विशालता को कोई महत्व नहीं देता । दूसरों के कल्याण एवं खुशी के लिए उनके मन में जो उदात्त भावना है उसे सब लोग अनदेखा कर देते हैं। परिणामस्वरूप सब ओर से वह उपेक्षित हो जाती है । सोमा बुआ का अकेलापन और उपेक्षित जिंदगी के प्रति लेखिका का मन्तव्य इस

---

1. मन्नू भंडारी - अकेली - मेरी प्रिय कहानियाँ - पृ.13
2. वही - पृ.13

प्रकार है "उसके अकेलेपन और दयनीयता ने मुझे उस समय केवल मानवीय संवेदना के धरातल पर ही आकर्षित किया था उस समय कहानी सोमा बुआ की व्यथा को वाणी देने के लिए ही लिखी थी पर बरसों बाद मुझे उसमें कहीं अपना और, अपनी व्यथा दीखने लगी तो कहानी अचानक ही मुझे बहुत प्रिय हो उठी।[1]"

"मजबूरी" कहानी में लेखिका ने एक दादी माँ की विवशता एवं अकेलेपन के बोध को बड़ी गहरी के साथ उभारा है। दादी माँ का बेटा रामेसुर उसका अपना होते हुए भी उसका नहीं हो पाता है। वह माँ से भी ज्यादा महत्व अपनी पत्नी को देता है दादी माँ बेटे के इस प्रकार के व्यवहार से उतनी दुखी नहीं होती। उसकी व्यथा यह है कि वह अपने पोते को लाड़-प्यार कर अपने पास नहीं रख पाने में असमर्थ है। क्यों कि उसकी बहू के अनुसार दादी माँ अत्यधिक लाड़-प्यार दिखा कर बेटू के आदत को बिगाड़कर उसके भविष्य को अन्धकारमय कर देगी। इस कारण बहू, बेटू को दादी माँ के पास रहने नहीं देती। बेटू से बिछड़ते वक्त दादी माँ की आत्मा कराह उठती है जब दादी माँ को पता चलता है कि बेटू दादी माँ से दूर रह कर उसे भूल सा गया है तो उसे बेहद पीड़ा होती है। लेकिन एक कृत्रिम और बनावटी आनंद को प्रकट करते हुए वह कहती है "बेटू मुझे भूल गया ? वहाँ जम गया ? सच, मेरी बड़ी चिन्ता दूर हुई। इस बार भगवान ने मेरी सुन ली। जरूर परसाद चढ़ाऊँगी रे जरूर चढ़ाऊँगी. .. कौन नर्बदा सुना नर्बदा बेटू मुझे भूल गया वह भूल ही गया..... और उन्होंने आँचल से भर कर भर भर आँखें पोंछी और हँस पड़ें।[2]"

---

1. मन्नू भंडारी - मेरी प्रिय कहानियाँ की भूमिका से - पृ. 6
2. वही - पृ.29

इस कहानी में लेखिका ने एक दादी माँ के यथार्थ स्वरूप का जीवन्त चित्रण प्रस्तुत किया है । दादी बन कर भी पोतों के सुखों से वंचित रह जाना, यहाँ दादी माँ की सबसे बड़ी मजबूरी है ।

"यह मैं हूँ" कहानी में मृदुला गर्ग ने एक विवाहिता नारी की हताशा एवं घुटन को बड़ी गहराई के साथ आँका है । सरल कालरा विवाहिता नारी है जिसका एक मात्र लक्ष्य अपने यौवन को चिरकाल तक बनाये रखना है । उसकी अधेड़ावस्था के सौन्दर्य की अभ्यर्थना के लिए कोई नहीं है यहाँ तक कि उसका पति भी नहीं । सरल कालरा की जिंदगी की सबसे बड़ी समस्या उसका बेरोजगार पति है । सरल कालरा की संतृप्त जिंदगी का पर्दाफाश उसकी तस्वीर करती है । "यह उसके चेहरे पर क्या है ? सहानुभूति ? तमाम माहौल को ढँकती बड़ी-बड़ी दो आँखें । आँसुओं से भीगी, व्यूणोओं से बोझिल, संत्रास से विस्फारित, फिर भी उदासीन एकांत के हाथों पिटी-हारी एक दुखी बुढ़िया की तस्वीर"[1] सरल कालरा की तस्वीर उसके वास्तविक जीवन के हकीकत को अभिव्यक्ति देती है । जब सरल कालरा अपने यथार्थ को तस्वीर पर देखती है तो फूट फूट कर रो पड़ती है "उफ मैं कितनी बेसहारा, कितनी आरक्षित, कितनी दुखी हूँ त्रासदी की प्रतिमूर्ति ।"[2]

विवाहिता होने के बावजूद भी सरल कालरा को अकेलेपन का बोध होता है पति के होते हुए भी उसकी अनुपस्थिति का अहसास ही सरलकालरा के जीवन को और भी दुखदायी बनाता है ।

---

1. मृदुला गर्ग - यह मैं हूँ टुकड़ा-टुकड़ा आदमी - पृ॰103
2. वही - पृ॰103-104

3. सात्विक स्वरूप नारी पात्रों में

मशीनीकरण एवं पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाव से आधुनिक समाज प्रगति के उत्तुंग शिखर पर पहुँच रहा है । इस प्रगति शील समाज में हमारे प्राचीन आदर्श एवं मान्यताओं के अवशेष कुछ बचे हुए हैं "आज हम सभी प्रकार इस बात को स्वीकार करने लगे हैं कि नैतिकता परिवर्तनशील है और उसको निश्चित ढाँचों में बाँध कर नहीं रखा जा सकता । दूसरे यह भी, कि आधुनिक रचनाकारों ने पश्चिमी सभ्यता का अनुकरण कर अपने साहित्य को भी जीवन संबंधी नवीन दर्शन से समन्वित किया है और ऐसी स्थिति में हमारे प्राचीन मान्यताएं बहुत ही जर्जर परिलक्षित होती हैं । लेकिन फिर भी हम देखते हैं कि विवेच्य युग की कुछ रचनाओं में नारी चरित्रों को उच्चतर आदर्शों की भूमिका पर चित्रित किया गया है[1] ।"

नारी जीवन के उदात्त स्वरूप को उषा प्रियम्वदा, मन्नू भंडारी, मृदुला गर्ग, दीप्ति खंडेलवाल आदि कई लेखिकाओं ने पूरी संपृक्ति एवं सजगता के साथ प्रस्तुत किया है । ऐसा प्रतीत होता है कि इन लेखिकाओं ने समाज में नारी के सात्विक स्वरूप को बनाये रखने के उद्देश्य से ही नारी की उदात्त भूमिकाओं की ओर विशेष दृष्टि दौड़ाई है ।

मन्नू भंडारी ने नारी मन की सात्विकता को अकेली की सोमा बुआ मजबूरी की दादी अम्मा और नशा की आनन्दी के माध्यम से प्रस्तुत किया है आनन्दी निम्न वर्ग की अशिक्षित नारी है । जो शराबी पति शंकर के प्रति अपने आदर्शों को निभाती है । पति के मार-पीट को वह मूक होकर

1. सुशीला मीत्तल - आधुनिक हिन्दी कहानी में नारी की भूमिकाएं - पृ.21।

सहती है । उसके अत्याचारों के प्रति न तो वह अपनी आवाज बुलंद करती है और न ही उसकी बुरी आदत को कोसती है ।

आनन्दी का बेटा पिता के अत्याचारों को देखकर माँ को अपने साथ ले जाता है । आराम की अवस्था में भी कढाई-बुनाई कर वह पैसे इकट्ठे करती है और हर मास पति के नाम पर भेज देती है ।

आनन्दी के त्याग और सहनशीलता की भावना को लेखिका ने विशेष रूप से उभारा है ।

दीप्ति खंडेलवाल की कहानी चन्दा की ओत' की भागवती निम्न वर्ग की गरीब नारी है । भागवती का पति शराबी है जो शराब पीने के पश्चात् भागवती के साथ पाशविक व्यवहार करता है । भागवती दिन-रात मेहनत कर शराबी पति को दो वक्त की रोटी देती है । जीवन भर समस्याओं से प्रताड़ित होने पर भी वह अपने आदर्शों से च्युत नहीं होती । पति द्वारा जख्मी किये जाने पर उच्च वर्ग का श्रीकान्त उसके प्रति सहानुभूति दिखाता है और उसमें पति को त्याग देने को कहता है।लेकिन उदात्त विचारों वाली भागवती श्रीकान्त के शाब्दिक सहानुभूति को ठुकराते हुए कहती है "नाहीं बाबू । हम ई पाप नाहीं कर सकत । कबहूं नाहीं । मुआ जिनावर है चंदा का बाप लेकिन हम उका छोड देवे तो महीना भर भी नहीं जीयगा । अरे पागल हो जायगा दारु के बिना, नीच कुत्ता की मौत मरेगा ।" भागवती के इन विचारों से यह स्पष्ट हो जाता है कि वह पति के प्रति पूर्ण रूप से समर्पित है ।

1· दीप्ति खंडेलवाल - चन्दा की ओत दो पल की छाँव - पृ·52

अन्त में जब भागवती का जीना दूभर हो जाता है तो वह बेटी सहित आत्महत्या कर लेती है। इसके अतिरिक्त उसके सामने कोई दूसरा विकल्प नहीं है । भागवती चाहती तो श्रीकान्त के चरणों में आश्रय पा सकती थी। लेकिन वह अपने पातिव्रत्य को त्याग कर कलंकित नहीं होना चाहती थी ।

"कायर" की उमा उच्च वर्ग की शिक्षित नारी है उमा का पति योगेश फिलासफी का प्रोफेसर है जो उमा की भाव संवेदनाओं की ओर से निश्चिन्त है । पति द्वारा उपेक्षित होने पर भी उमा खामोश रह कर सब कुछ सहने को तैयार रहती है । पति परमेश्वर होता है ऐसी परम्परागत धारणा उसके अन्तर्मन में समायी रहती है जिस कारण वह परम्परागत आदर्श नारियों की भांति पति के विरुद्ध आवाज उठाये बगैर सब कुछ झेलने को बाध्य हो जाती है ।

समय के साथ उमा माँ बन जाती है । उसका जीवन और भी सरल और सीधा हो जाता है । बनने संवरने का उसका शौक धीरे धीरे घटने लगता है । एक आदर्श गृहणी की तरह पति और सास की बनायी संकीर्ण लीक पर चल कर वह घर का सारा कार्य भार सम्भालती है उमा पर उसके पति से ज्यादा अधिकार सास का है । उमा की तरह योगेश भी अपनी माँ की इशारों पर ही चलता है । एक बार उमा पति योगेश के इच्छानुसार नीली काजीवरम की साडी पहन बाहर जाने को तैयार होती है। लेकिन जाते वक्त सास उसे टोक देती है "अरे बहू, जा रही हो ये तो ठीक है, लेकिन ये कांजीवरम साड़ी पहनने की क्या जरूरत थी ? कोई हल्की सी साडी पहन लो

1• दीप्ति खंडेलवाल - कायर, वह तीसरा - पृ•80

उमा आज्ञाकारिणी बहू की तरह कुछ कहे बगैर साड़ी बदलने चली जाती है। यह उमा के जीवन की एक साधारण सी घटना है लेकिन इस घटना से यह स्पष्ट होता है कि उमा कितनी शान्त और सहनशील स्वभाव की नारी है और सास उसकी सहनशीलता का कितना फायदा उठाती है।

यहाँ लेखिका ने यह व्यक्त किया है कि आधुनिक युग में भी परम्परागत भारतीय नारियों का उदात्त स्वरूप देखने को मिलता है।

परिवार वालों के अत्याचारों को मौन होकर सहने वाली नारी है, मेहरुन्निसा परवेज की कहानी "टहनियों पर धूप" की जेतुन की माँ। जेतुन की माँ, माँ होकर भी सन्तान के सुखों से दूर है, पत्नी बन कर भी पत्नी के अधिकारों से वंचित है। पति के लिए वह शारीरिक सुख प्रदान करने वाला एक माँस पिंड है "बहुत सी पत्नियों की लड़ी में उसे भी पिरो दिया है। यहीं आकर उसने जाना कि शारीरिक सुख ही दुनिया की सबसे बड़ी चीज है। उसे देख-देख हैरानी होती है कि शारीरिक रिश्तों की ही यहां अहमियत है।[1]"

पति की पाशविक वृत्तियों से वह नफरत तो जरूर करती है लेकिन उसका विरोध नहीं कर पाती क्यों कि वह मजबूर है। चाह कर भी वह एक शब्द मुह से निकाल नहीं सकती। सब ओर से होने वाले अन्यायों को सहना ही उसका लक्ष्य हो जाता है।

हमारे समाज में जेतुन की माँ की तरह ऐसी अनेक अशिक्षित स्त्रियाँ है जो भारतीय जीवन बिता कर भी नारी के सात्विक स्वरूप को बनाये रखती

---

1. मेहरुन्निसा परवेज, टहनियों पर धूप, टहनियों पर धूप - पृ. 135

4· रुग्ण मानसिकता एवं नारी पात्र

नयी सभ्यता के विकास के साथ आर्थिक और सामाजिक क्षेत्र में होने वाली उन्नति एक ओर मनुष्य को संपन्नता की ओर ले गयी तो दूसरी ओर उसने उसके शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य को तबाह कर दिया। धनोपार्जन की लालसा के कारण अनियन्त्रित दबावों के शिकार बनने के लिए आज का मानव अभिशप्त है। पारिवारिक एवं वैयक्तिक संबंधों में नवीन परिस्थितियों ने शीतलता का विधान किया। परिणाम स्वरूप आज की नयी पीढ़ी मानसिक अस्वस्थता की शिकार बन गयी है। रुग्ण मानसिकता को लेकर जीने वाली इस नयी पीढ़ी की कारवाइयाँ इतनी "एबनार्मल" लगती हैं कि समाज स्वयमेव कुंठाग्रस्त होने लगता है। कुंठा एवं सन्त्रास युक्त वातावरण में स्वतंत्रता की साँस लेना और स्वस्थ मन के साथ आचरण करना अत्यन्त कठिन कार्य लगता है।

नयी लेखिकाओं ने इस तरह की मानसिक ग्रन्थियों से पीड़ित रुग्ण पात्रों को अपनी कहानियों में भरपूर स्थान दिया है उनकी मानसिक रुग्णता कालानुगत प्रवृत्ति लगती है।

उषा प्रियम्वदा ने "चाँद चलता रहा" कहानी में नायिका की विचित्र मानसिकता को मनोवैज्ञानिक धरातल पर अभिव्यक्ति प्रदान की है। रोहिणी संपन्न परिवार की नारी है जिसकी सगाई प्रेमी अरविन्द से होती है। विवाह से पूर्व अरविन्द रोहिणी से शारीरिक संबंध स्थापित करने की इच्छा प्रकट करता है लेकिन रोहिणी इस प्रकार के संबंध को अनैतिक मान कर अरविन्द की इच्छाओं पर अंकुश लगाती है। इसके ठीक तीन दिन पश्चात् अरविन्द की आकस्मिक रूप से मृत्यु हो जाती है और इस मृत्यु से रोहिणी पर

जबर्दस्त सदमा पहुंचता है उसका मानसिक स्थर असमान लगता है "अल्टी मेटली वह अपने को दूसरों की सेवा पर सुला कर अपने एक - एक अंश को मर जाने देती है और इस तरह अपने से बदला लेती है'।"

अपने चारित्र्य को खिलवाड़ की वस्तु बनाकर वह नारी सुलभ आदर्शों का खंडन करती है जो एक समय उसके व्यक्तित्व में पूर्ण रूप से व्याप्त था और जिस कारण वह अपने प्रेमी मंगेतर अरविन्द की इच्छाओं की पूर्ति नहीं कर पायी।

रोहिणी की उजड़ रही जिंदगी को संवारने के लिए विनय आता है लेकिन वह अपने दाग भरे दामन को किसी को सौंपना नहीं चाहती है और नहीं किसी का सहारा लेकर अपने जीवन को सार्थक बनाना चाहती है।

अपने आप से बदला लेने के के उद्देश्य से अपने शरीर को भ्रष्ट करते करते मृत्यु तक जा पहुंचती है।

यहाँ लेखिका ने रोहिणी की रोगग्रस्त मानसिकता के माध्यम से स्त्री-पुरुष सम्बन्धों के सन्दर्भ में नारी मनोविज्ञान की जटिलता को उभारा है। कहानी की अस्वाभाविकता अवश्य खटकती है परन्तु एक विशेष स्थिति की परिचायिका के रूप में नायिका हमारी सहानुभूति की पात्र बन जाती है।

---

1. उषा प्रियम्वदा - चाँद चलता रहा - जिंदगी और गुलाब के फूल - पृ.125

आधुनिकता के मोहपाश में पड़ कर अपनी मानसिकता को असन्तुलित बनानेवाली नारी है । "प्रतिध्वनियाँ" की वसु । वसु वैवाहिक जीवन को नागपाश मानकर उससे मुक्त हो जाती है और अपनी इच्छानुसार भिन्न नये पुरुषों के साथ हम बिस्तर होती है "श्यामल के अंकुशों से निकलकर कितना हल्का-हल्का लगता रहता था । कितने मादक थे वे अस्थायी संबन्ध मलिन घरनायक चित्र .... ।[1] शीघ्र ही वसु अपनी स्वतंत्र जिंदगी से ऊब जाती है । वह टूटने और बिखरने के भय से आतंकित रहती है । वसु अपने अतीत की ओर लौटना चाहती है जहाँ उसकी बेटी रुचिरा और पति श्यामल सुखी जीवन बिता रहे होते हैं लेकिन वह चाहकर भी उनके जीवन में शामिल नहीं हो पाती, क्यों कि वहाँ अतीत की कोई प्रतिध्वनियाँ शेष नहीं रही है ।

"टूटे हुए" की तनी आधुनिक विचारों वाली स्वतंत्रचेता नारी है । धन, संपत्ति पदवी आदि के होते हुए भी वह एक प्रकार की मानसिक व्यथा से ग्रस्त है और यह व्यथा उसकी "एबनॉर्मल" सन्तान को लेकर है जिस कारण वह नार्मल जीवन नहीं बिता पाती है । पति के प्रति उसका व्यवहार अजीब और अस्वाभाविक सा लगता है । मानसिक उलझन और पति के प्रति अपराध की भावना के कारण वह भास्कर की ओर आकर्षित होती है । भास्कर एक शोध छात्र है जो तनी के पति प्रोफसर के अधीन शोधरत है । तनी की वास्तविकता को जान कर भास्कर उससे दूर रहने लगता है ।

"नींद" की नायिका की रुग्ण मानसिकता का मूल कारण अकेलापन का भय और उचित साहचर्य का अभाव है । एकान्त के सारे पल उसे काट खाने को दौड़ते हैं जिस कारण वह अन्धेरी काली रात की एकान्तता से भय खाती है "मैं बहुत कम चीज़ों से डरती हूँ, न रोगों से, न गरीबी से, न ठंड से डरती हूँ तो बस एक लम्बी अंधेरी रात के अकेलेपन से ।[2]

1· उषा प्रियम्वदा - प्रतिध्वनियाँ, कितना बड़ा झूठ - पृ·36
2· उषा प्रियम्वदा - नींद - कितना बड़ा झूठ - पृ·67

अकेलेपन के भय से उत्पन्न मानसिक रोग की चिकित्सा के लिए उसका एक मनोचिकित्सक है लेकिन वह उस मनोचिकित्सक की बातों को नहीं मानती है क्यों कि वह जानती है कि वह मानसिक रोग से ग्रस्त नहीं है और न ही उसकी समस्याओं का हल दवाइयों द्वारा किया जा सकता है ।

नायिका एक खण्डहरनुमा स्थान में जाती है जहाँ एक पलंग और बिखरी कुर्सियाँ होती हैं । नायिका एक एक कमरे में जाती है और सोचती है । "मैं पूर्णतया स्वस्थ हूं । मैं केवल साथ ढूंढती हूं कम्पेनियनशिप" और इस कम्पेनियनशिप के अभाव में उसी खंडहर के पुराने कूड़ा करकटों के बीच कुछ दवाइयाँ लेकर हमेशा हमेशा के लिए गहरी नींद में सो जाती है ।[1]

निरुपमा सेवती ने अपनी कहानी "ठहरी हुई खरोंच" दो बहनों के विवाहपूर्व काम संबंधों को चित्रित कर उनके विशिष्ट स्वभाव पर प्रकाश डाला है।बड़ी बहन अर्थात् नायिका को अस्तित्व की खोज है । वह अपने अस्तित्व को परखने का प्रयास करती है लेकिन उसे शून्यता ही हाथ लगती है । अस्तित्व की सार्थकता के प्रति नायिका को गहरा आकर्षण,लगाव और यह है जिस कारण उसका मानसिक स्तर कुछ विचलित सा लगता है उसकी स्थिति कुछ न बन पाने की और कुछ न कर पाने की है ।

सेक्स और प्रेम के प्रति उसके खुले विचार हैं "विवाहपूर्व सेक्स को तृप्त करने में केवल अविवाहित पुरुष के प्रति ही आकर्षण होना आवश्यक नहीं अपितु विवाहित और बड़ी उम्र के पुरुष से भी अनायास आकर्षण जागृत हो सकता है ।"[2] नायिका के स्वतंत्र विचारों के कारण वह कई पुरुषों से संबंध जोड़ लेती है । नायिका पुरुष के व्यक्तित्व को महानता देती है उसके उम्र या उसके स्तर को नहीं ।" "मुझे बड़ी उम्र के पुरुष अच्छे लगते हैं इस लिए वह

1· उषा प्रियवंदा, नींद, कितना बड़ा झूठ - पृ·69

2· निरुपमा सेवती, ठहरी हुई खरोंच, खामोशी को पीते हुए - पृ·23

मिला तो पता नहीं कैसे अचानक ही सब हो गया । मैंने सचमुच ही उसे चाहा था वह जेनुइन ही था ।" हद से ज्यादा आधुनिकता का समावेश और अहं ग्रस्त होने के कारण नायिका का व्यवहार और उसकी मान्यताएं विचित्र एवं आधार हीन लगती है ।

पात्र और मानसिकता

मानव मन की विभिन्न परिस्थितियों का सूक्ष्मतम विश्लेषण के लिए मनोविज्ञान का सहारा लिया जाता है । मनोविश्लेषण के माध्यम से मन की गहराई में उतरकर, व्यक्ति के यथार्थ स्वरूप को परखा जा सकता है । नारी की विशेष मानसिकता के अध्ययन के लिए मनोविज्ञान बहुत अधिक सहायक सिद्ध हुआ है । प्रमुख मनोवैज्ञानिकों के विचारानुसार स्वातंत्र्योत्तर कथा साहित्य में नारी के व्यक्तित्व का अंकन और उसका चरित्र चित्रण हीन-भावना, दमित कामना, स्वप्न दर्शन काम-वासना आदि के विशेष संदर्भों से जोड़कर किया जाता है ।

फ्रायड के अनुसार व्यक्तित्व के चार मूल तत्व होते हैं ।1। अवचेतन मन ।2। अर्न्तद्वन्द्व और दुष्प्रवृत्ति ।3। शिशुकालीन प्रभाव ।4। काम या सेक्स। इन चारों तत्वों में फ्रायड अवचेतन मन को सर्वाधिक महत्व प्रदान करते हैं। इनके अनुसार अस्वीकृत विचार, व्यक्ति का अहं, काम वासना आदि अवचेतन मन में दबे रहते हैं ये सब विचार चेतन मन में नहीं आते क्योंकि इन्हें दमन क्रिया द्वारा अचेतन मन में दबा दिया जाता है । इसके परिणाम स्वरूप चारित्रिक विकृतियां जन्म लेती है । साहित्य के क्षेत्र में फ्रायड के उक्त सिद्धान्तों का गहरा प्रभाव पड़ा है ।

1• निरूपमा सेवती - ठहरी हुई खरोंच-खामोशी को पीते हुए - पृ•34

फ्रायड की तरह एडलर भी मनोविश्लेषण के क्षेत्र में बहुचर्चित रहे हैं। एडलर "इगो" को महत्वपूर्ण मानते हैं। उनके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति स्व की प्रतिष्ठा चाहता है और जब वह अपनी इच्छा की पूर्ति नहीं कर पाता तो विकार ग्रस्त हो जाता है।

प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक युंग व्यक्तित्व को प्रधानता देते हैं। इन्होंने व्यक्तियों को तीन कोटियों में विभाजित किया है §1§ अन्तर्मुखी §2§ बहिर्मुखी §3§ विमुख। अन्तर्मुखी व्यक्ति अपने निजी विचारों में खोया रहता है। दूसरों से घुलने मिलने का प्रयास वह नहीं करता। अहंग्रस्त होने के कारण वह अपने विचारों को ही सर्वाधिक श्रेष्ठ मानता है। इसके विपरीत बहिर्मुखी व्यक्ति का दृष्टिकोण उदात्त होता है। वह बाह्यजगत से अधिक आकर्षित होता है। विमुख व्यक्ति में अन्तर्मुखी व बहिर्मुखी व्यक्ति का सम्मिश्रित रूप देखा जाता है।

प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिकों द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों के प्रकाश में लेखिकाओं की कहानियों में आये नारी पात्रों का मनोविश्लेषण किया जा सकता है कई लेखिकाओं ने मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों का प्रभावात्मक चित्रण अपने चरित्रों के द्वारा प्रस्तुत किया है।

1. समस्याग्रस्त पात्रों की मनोभूमि

"क्य" कहानी में कुन्ती की मानसिकता आदर्श और यथार्थ की टकराहट में द्वन्द्व ग्रस्त हो जाती है। आदर्श की लीक पर चलनेवाली कुन्ती आर्थिक समस्याओं से जूझने के लिए अपने सारे आदर्शों को त्याग देने के बावजूद भी कुछ न पाने के कारण हताशाग्रस्त हो जाती है। पिता की बीमारी और कर्ज उसके व्यक्तित्व को पूर्ण रूप से कुण्ठित कर देती है। कभी-कभी उसे

ऐसा एहसास भी होने लगता है कि वह भी क्षय रोग से ग्रसित होती जा रही है। यह भय उसके अचेतन मन की गहराई में एक ग्रन्थी के रूप में विद्यमान रहता है ।

कुन्ती की मानसिकता द्वन्द्वात्मक है जिस कारण हमेशा उसके मन में आदर्श और यथार्थ का वैचारिक संघर्ष होता रहता है । द्वन्द्वात्मक मानसिकता होने के कारण वह किसी एक पर टिक नहीं पाती । आदर्श को त्याग कर यथार्थ को अपनाने के पश्चात उसके मन में एक हिचक सी होती है । कहानी के अन्त में इसका स्पष्ट स्वरूप झलकता है जब वह बेमन से सावित्री के लिए अध्यापिकाओं के पास पैरवी के लिए जाती है ।

कुन्ती का कुंठित व्यक्तित्व और उसकी दोहरी मानसिकता परिस्थिति जन्य है । परिस्थितियों के कठोर प्रहार से ही वह आदर्श के मार्ग से डगमगा जाती है ।

"सजा" की आशा कुन्ति से ठीक विपरीत व्यक्तित्व रखती है । उसका चरित्र बहिर्मुखी है।प्रतिकूल परिस्थितियों को भी वह हंसते-हंसते झेल लेती है । इसका यह मतलब नहीं कि उसे अपने बिखरते जीवन पर दु:ख नहीं है, दु:ख तो अवश्य होता है लेकिन वह उसे घर के अन्य सदस्यों के सामने प्रकट नहीं करती । पिता पर लगे झूठे आरोप से उत्पन्न स्थिति को बड़ी सहजता के साथ वह सम्भालती है ।

मन्नू भंडारी ने आशा का चरित्र-चित्रण बड़े ही आत्मविश्वास के साथ किया है । जीवन के हर मोड़ में आने वाले संकटों को बड़े ही स्वस्थ मन के साथ वह झेलती है और विषम परिस्थितियों में भी आत्मबल खोती नहीं है ।

समसामयिक कहानियों में आने वाले पात्र जब काल्पनिक परिस्थितियों में आनेवाले पात्र जब काल्पनिक परिस्थितियों से ही कुंठाग्रस्त हो जाते हैं तब आशा नये आत्मबोध से लैस होकर दृढ़ता के साथ जीने का संकल्प करती है ।

"परवाने आकाश नाई" की लेखा की मानसिकता बहुत ही कुंठित एवं स्वार्थ युक्त है । परिवार वालों की समस्याओं को देखकर पलायन करने वाली लेखा में आत्मबल की कमी है । परिवार में रह कर उनकी समस्याओं को दूर किये और वह उनसे ऊब कर पिंड छुड़ाना चाहती है । शहर के यान्त्रिक जीवन से ऊब कर गाँव की ओर जानेवाली लेखागाँव में परिवार वालों की समस्याओं से घबरा जाती है।उसे एक प्रकार की घुटन सी होने लगती । पुनः वह हार कर शहर की ओर लौटने को मजबूर हो जाती है ।

लेखा के व्यक्तित्व में एडजेस्टमेन्ट का अभाव है । कहीं भी अपने आप को एडजेस्ट न कर पाना उसके व्यक्तित्व की सबसे बड़ी कमजोरी है ।

लेखा की तुलना में सुषमा की मानसिकता बहुत ही अधिक उदात्त लगती है । अपने पारिवारिक समस्याओं को सुलझाने में दमतोड मेहनत करने वाली सुषमा जब परिवार वालों की ओर से उपेक्षित हो जाती है तो वह न कुंठित होती है और न ही निराशाग्रस्त होकर जीवन के अरमानों को रौंदती है।सुषमा के व्यक्तित्व में सहिष्णुता की भावना आम औरतों से ज्यादा है । परिवार वाले जब उसकी खुशी में साथ नहीं देते तो वह परायों से सहायता ग्रहण कर अपने लक्ष्य को प्राप्त करती है । यहाँ सुषमा का बहिर्मुखी व्यक्तित्व उभर आया है । सुषमा की मानसिक स्थिति अत्यधिक संतुलित एवं स्वस्थ लगती है ।

"शायद" की माला की मानसिक स्थिति आर्थिक समस्याओं के थपेड़ों से कुंठित हो जाती है । लम्बी अवधि के बाद आये पति के प्रति खिन्न की भावना कुंठित मानसिकता की वजह से है। पति के प्रति उसके मन में प्यार जरूर है लेकिन वह उसे प्रदर्शित नहीं करती। इसका यह तात्पर्य नहीं कि वह पति से दूर रहना चाहती है या फिर पति से सुख प्राप्त करना नहीं चाहती । हर पत्नी की तरह माला भी पति के साथ शारीरिक सुख प्राप्त करना चाहती जरूर है लेकिन वह जिनका है पति से संबंध स्थापित कर वह अपने परिवार को और बढ़ाना नहीं चाहती क्यों कि पति के जाने के बाद परिवार की सारी समस्याएं उसे खुद ढोनी पड़ती है जिसे ढोते-ढोते वह मानसिक और शारीरिक रूप से थक गयी है और इसी थकावट के कारण वह मानसिक रूप से पति के पास होते हुए भी शारीरिक रूप से पति से दूर रहना चाहती है ।

"संबंध" की श्यामला के व्यक्तित्व में आत्मबल की कमी है । समस्याओं से मुकाबला करते करते जब कोई शुभ परिणाम नहीं निकलता तो वह बुरी तरह टूट जाती है और एक प्रकार की अभाव की भावना उसमें जन्म लेने लगती है जिसके फलस्वरूप वह अपनों से दूर अकेले रहना पसंद करती है श्यामला का एक मात्र दोस्त है विवाहित सर्जन। लेकिन सर्जन की दोस्ती से भी वह पूर्ण रूप से सन्तुष्ट नहीं है । एक प्रकार का निसंगता बोध उसके व्यक्तित्व को कुंठित कर देता है ।

श्यामला फ्रास्ट्रेटड पात्र है। जीवन में फस्ट्रेशन के कारण उसका व्यक्ति अन्तर्मुख होता जाता है । अनेक यातनाओं को सहकर भी श्यामला परिवार की स्थिति को सुधार नहीं पाती । एक प्रकार का असमर्थता-बोध उसके अन्तर्मन में जन्म लेने लगता है । जिस कारण वह समाज, परिवार एवं प्रेमी सर्जन से पलायन करती है ।

श्यामला के चरित्र में दमित कामनाओं का प्रभाव दिखाई पड़ता है जिसकी वजह से उसका समूचा व्यक्तित्व ही एबनार्मल बन जाता है ।

"पेराम्बुलेटर" की कालिन्दी पूर्ण रूप से ममत्व की भावना से आच्छादित है । समस्याओं के पहाड़ टूटने पर भी वह प्राण-प्यारा पेराम्बुलेटर बेचती नहीं । लेकिन बच्चे के रोगग्रस्त हो जाने पर वह उस पेराम्बु को बेच डालने को तैयार होती है। यहाँ लेखिका ने स्त्री के मातृत्व रूप को प्रमुखता देकर दायित्व से भरपूर माँ की उदात्त मानसिकता को स्पष्ट किया है । माँ की ममता नारित्व का एक ऐसा तथ्य है जिसकी समानता किसी चीज से नहीं की जा सकती ।

"रानी माँ का चबूतरा" में गुलाबी के अन्तर्मुखी व्यक्तित्व के माध्यम से विचारों की सर्कीणता की स्पष्ट झलक मिलती है । समस्याओं का घूंट पीकर अपने आप में सीमित जीवन यापन करना ही उसका लक्ष्य हो जाता है उसकी असन्तुलित मानसिकता एवं उसके अन्तर्मुखी व्यक्तित्व का प्रमुख कारण आर्थिक परेशानियाँ है । बच्चों के प्रति उसके क्रूर व्यवहार को देखकर ऐसा लगता है कि उसे अपने बच्चों से कोई लगाव नहीं है । लेकिन यह धारणा अन्त में गलत सिद्ध हो जाती है जब उसके मृत शरीर से काँच की दो चूड़ियाँ और शिशु सुरक्षा केन्द्र की पाँच रुपये की रसीद मिलती है । इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि उसे अपने बच्चों से बेहद प्यार था और अपने बच्चों के लिए ही वह दिन रात मेहनत कर प्राण त्याग देती है ।

"अभिशप्ता" की मामी त्याग और बलिदान की साक्षात प्रतिमा है । अपने भविष्य को अनदेखा कर परिवार के लिए सब कुछ न्योछावर करनेवाली मामी की मानसिकता अनन्त आकाश के समान उदात्त है । परन्तु उसका चरित्र अन्तर्मुखी लगता है ।

मान्नो को अपने उजड़ते हुए जीवन को देख कर दुःख अवश्य होता है लेकिन वह उसे परिवार के समक्ष प्रकट किये बगैर अन्दर ही अन्दर घुट कर कुंठित रहती है। दुःख, वेदना, निराशा, अवसाद आदि के कई परत उसके अन्तर्मन में समाये हुए हैं जिसे वह दूसरों के समक्ष प्रकट नहीं करती। एक सीमा तक मान्नो का व्यक्तित्व अन्तर्मुखी लगता है और उसके इस आत्म-केन्द्रित व्यक्तित्व को परिवार वाले पहचानने का प्रयास भी नहीं करते। यही मान्नो के जीवन की सबसे बड़ी विडम्बना है। अपने बहनों के भविष्य को संवारने के लिए मान्नो आगे आती है लेकिन मान्नो के भविष्य एवं उसकी खुशियों को संवारने के लिये कोई नहीं होता, यहाँ तक कि उसके माँ-बाप भी उसके भविष्य को अनदेखा करते हैं। इसकी गहरी पीड़ा मान्नो को होती है जिस कारण एकान्त में अपने लक्ष्यहीन जीवन के प्रति सोच कर वह आँसू बहाती है।

मान्नो के जीवन की चुप्पी ही उसकी सभी अभिलाषाओं पर ओले गिराती है। अपनी मुरझाई हुई अभिलाषाओं को गले लगा कर आँसू बहाना ही उसके जीवन का लक्ष्य हो जाता है। अन्तर्मुखी व्यक्तित्व के कारण मान्नो को अपना सब कुछ खोना पड़ता है।

कोई जीवन नहीं की सरला आर्थिक परेशानियों के बीच उलझ कर भी कुंठाग्रस्त नहीं होती। अर्थाभाव के कारण अपने परिवार को सीमित रखने के उद्देश्य से सरला और उसका पति अपनी कामनाओं पर अंकुश लगाते हैं। सरला के अभावग्रस्त जीवन में शारीरिक संबंध की खुशी ही एक मात्र माध्यम है लेकिन इससे भी वह वंचित होती जाती है।

जीवन के हर मोड़ पर अपूर्णता की प्राप्ति होने के बावजूद भी वह निराशा ग्रस्त नहीं होती। इससे यह सिद्ध हो जाता है कि उसका मन बहुत ही विशाल है और उसका व्यक्तित्व बहिर्मुखी है।

"कपिये छिम'" की हीरावती की मानसिकता बहुत ही दृढ और एक सीमा तक कठोर भी है। समाज के द्वारा लगाये गये आरोप के आधार पर निष्कासित किये जाने पर भी वह निराशाग्रस्त नहीं होती और न ही अपनी निष्कलंकता का स्पष्टीकरण देती है। बल्कि हँसते-हँसते अपनी सजा को झेलने को तैयार होती है। हीरावती को न तो परिवार वालों की चिन्ता है, न अकेले रहने का भय और न ही अपमानित होने की शर्म।

हीरावती का व्यक्तित्व बहिर्मुखी है। बाहर से पुरुष प्रकृति की लगने पर भी हीरावती अन्दर से त्याग, बलिदान, सहनशीलता की अटूट प्रतिमा है। न्यायाधीश धीधर के प्रति अगाध प्रेम एवं श्रद्धा के कारण वह धीधर से हुई संतान को मार डालती है क्योंकि वह उसके व्यक्तित्व को कलंकित नहीं करना चाहती। अपनी संतान को अपने हाथों द्वारा ही मार डालना एक माँ के लिए असंभव है लेकिन हीरावती यह क्रूर कृत्य करती है क्योंकि वह अपनी संतान से ज्यादा धीधर से प्यार करती है।

एक दृष्टि में हीरावती की मानसिकता कठोर एवं अमानुषिक लगती है लेकिन गहराई में उतर कर पैनी दृष्टि डालें तो पता चलेगा कि उसकी मानसिकता बहुत ही उदात्त एवं उसके विचार बहुत ही तर्कसंगत हैं।

"नीलगाडी" की नायिका शिक्षिता एवं आधुनिक विचारों वाली है उसके विचार एवं मान्यताएं बहुत ही तर्कसंगत है।

विमाता के इच्छानुसार वह एक रोगग्रस्त बूढे से ब्याह कर लेती है और ब्याह के सात महीनों बाद वह विधवा हो जाती है। नायिका को न तो विधवा होने का दुःख है और न ही अकेले होने का भय क्यों कि पति के वांछनीय प्यार से वह वंचित थी।

नायिका अपने विधवा रूप को अनदेखा कर अपने भविष्य को संवारने का दृढ़ संकल्प लेती है । वह घर से भाग कर पयाइंगरेस्टेस बन जाती है । नायिका अपने विधवा जेठानियों की तरह विधवा का मुखौटा धारण नहीं करना चाहती जो दिन-भर राम नाम जप कर रात को देवर के साथ रंग-बाजी करती है।अपने स्वतंत्र जीवन को नये सिरे से शुरू करने के लिए नायिका एक ठोस कदम उठाती है और किसी की चिन्ता किये और अपने निर्णय को साकार बनाती है।यहाँ नायिका की मानसिक सबलता का स्पष्ट स्वरूप झलकता है ।

अकेलेपन के शिकार पात्रों की मानसिकता

"छुट्टी का दिन" की माया अपने स्वतंत्र जीवन की यान्त्रिकता से बोर हो चुकी है । उसे न खाने का शौक है और न पहनने का । अपने अर्थहीन जीवन में वह फ्रस्ट्रेशन का अनुभव करती है।कभी-कभी अत्यधिक स्वतंत्रता भी नारी के व्यक्तित्व को कुंठित कर देती है । जब नारी की स्वतंत्रता पर अंकुश लगाने वाला कोई हकदार नहीं होता तो उसे जीवन नीरस लगने लगता है । माया की भी यही स्थिति है ।

माया के जीवन में जो अभाव है'वह वास्तव में एक ग्रन्थी का रूप धारण कर लेता है और इसी वजह से उसका मन अपनी सन्तुलित स्थिति को खो बैठता है । माया की अभावग्रस्त मानसिकता कई ग्रन्थियों को जन्म देती है : रह रह कर उसके व्यक्तित्व पर आघात करती रहती हैं ।

"पूर्ति" की तारा जीवन की तन्हाई में किसी का स्नेहिल स्पर्श चाहती है लेकिन वह उसे प्रकट नहीं करती । अपनी सारी इच्छाओं को दमित कर दूसरों के समक्ष अपने आप को पूर्ण सिद्ध करनेवाली तारा का

व्यक्तित्व अन्तर्मुखी है । तारा की मानसिकता अत्यन्त ही संकीर्ण एवं अहंग्रस्त है साथ-साथ मानसिकता "डबल स्टैन्डर्ड" को लिए हुए है ।

तारा 'सुपर ईगो' से प्रभावित है। अपने जीवन की कमियों को वह यूं ही दूसरों की आँखों से बचा लेना चाहती है। फ्रायड के सुपर ईगो से प्रभावित पात्रों में तारा का स्थान आता है ।

"दो अधेरे" की सुमित्रा दृढ़ व्यक्तित्व रखने वाली नारी है । आम नारी वर्ग की तुलना में सुमित्रा के अन्दर आत्मबल बहुत ज्यादा है । प्रेमी द्वारा दगा दिये जाने पर भी वह टूटती नहीं है और न ही निराश होकर शून्यताबोध से ग्रस्त हो जाती है । सुमित्रा अपने टूटे हुए जीवन को एक नयी कड़ी देकर नये सिरे से जीने का संकल्प लेती है। सुमित्रा का व्यक्तित्व बहिर्मुखी है । प्रतिकूल परिस्थितियों में भी वह अपने जीवन की राह से भटकती नहीं है और न ही आत्मकेन्द्रित होकर अपने भविष्य को अंधकारमय बनाती है ।

"सुरंग" कहानी के तीनों पात्रों की मानसिकता विचित्र है और तीनों अन्तर्मुखी प्रकृति के हैं । माँ को बेटे की अकाल मृत्यु का सदमा है जिस कारण वह साध्वी सा जीवन व्यतीत करती है यानी उसका संबंध बेटियों से नहीं के बराबर है । बड़ी बेटी अरुणा के नीरस जीवन से यह ज्ञात होता है कि उसे अपनी जिंदगी में कभी गहरी चोट लगी थी जिस कारण वह आत्महत्या करने को मजबूर हो गयी थी। लेकिन किस्मत ने उसे बचा लिया था । अरुणा को अपने जीवन में आत्महत्या का प्रयास एक कलंक सा लगता है जिससे वह और भी अधिक कुंठाग्रस्त और आत्मकेन्द्रित हो जाती है ।

बेबी घर में सबसे छोटी है लेकिन न उसे माँ का प्यार मिलता है और न दीदी का स्नेह । माँ, अम्मा, बेबी तीनों एक दूसरे से खिंचे-खिंचे रहते हैं । और तीनों मानसिक रूप से निराशाग्रस्त हैं।तीनों की अपनी अलग दुनिया है जहाँ के सीमित दायरों में वे बंदि रहते हैं ।

"दो पल की छांव" की नायिका का फ्रस्ट्रेशन उसका असफल प्रेम है । असफल प्रेम का नैराश्य उसके जीवन की सारी मान्यताओं को रौंद देता है और ऐसा होना स्वाभाविक भी है । नायिका निराशाग्रस्त हो जाने के बावजूद भी अपने आत्मबल को नहीं खोती । अपने अवैध सन्तान के उज्जवल भविष्य केलिए वह समाज में बांटी का रूप धारण करती है क्यों कि वह जानती है कि अविवाहित माँ बनना हमारे सभ्य समाज में अनैतिक कार्य है ।

प्रेम के क्षेत्र में धोखा खायी नायिका प्रेम की प्यासी है।कुछ पल केलिए उसे जब एन्टोनी का साथ मिलता है तो वह उसे अपने जीवन का सहारा मान लेती है।लेकिन बाद में वह अनुभव करती है कि एन्टोनी उसके मुर्झाये हुए जीवन में दो पल की छांव देने आया था । फिर एक नया एकान्त उसके जीवन को ग्रस लेता है जिसकी छाया मे उसे जीना पड़ता है ।

"आरन्जु के फूल" में नायिका की मानसिकता द्वन्द्वात्मक है । फौजी पति के विरह में उसका मानसिक संतुलन डगमगाने लगता है । कभी वह उसके दूर हो जाने पर दुःख प्रकट करती है और कभी कहती है कि तुम आओ तो जीत कर ही आना । नायिका के दोहरे विचार मानसिक अस्थिरता की वजह से है ।

अपने अकेलेपन के जीवन से नायिका अपना मानसिक सन्तुलन खो बैठती है ।

"अकेली" की सोमा बुआ बहिर्मुखी व्यक्तित्व रखने वाली नारी है। अपने एकान्त जीवन को दूसरों के लिए महत्वपूर्ण बनाकर दूसरों की भलायी करना ही उसके जीवन का लक्ष्य है। दूसरे उसके प्रति किस प्रकार का बर्ताव करते है या फिर उसकी ईमानदारी और लगाव को दूसरे क्या मूल्य देते है इससे वह अनभिज्ञ है। यहाँ सोमा बुआ की स्वच्छ एवं निष्कलंक मानसिकता की स्पष्ट झलक मिलती है।

मजबूरी की दादी अम्मा की सबसे बड़ी विवशता यह है कि वह दादी होकर भी दादी के अधिकारों एवं सुखों से वंचित है। अपने बेटे को हद से ज्यादा प्यार कर उसके भविष्य को अन्धकारमय कर देगी। इस डर के कारण बहू बेटे को दादी से दूर कर देती है। दादी माँ के जीवन का सबसे बड़ा दुःख यही है। लेकिन वह अपने दुःख को बनावटी ढंग से छुपाने के उद्देश्य से कहती है....... बेटू मुझे भूल गया? वह जम गया ? सच, मेरी बड़ी चिन्ता दूर हुई दादी माँ के ये शब्द उसकी हृदय की गहराई से आये हुए हैं इन शब्दों में दुःख, पीड़ा वेदना के स्वर ज्यादा मुखरित होते है।

मनोवैज्ञानिक दृष्टि से दादी माँ दमित इच्छाओं की शिकार है लेकिन कहानीकार ने दमित इच्छाओं से जनित कुंठा को तो उसके चरित्र में स्थान नहीं दिया है फिर भी अकेलेपन की खोज रह-रह कर उसके चरित्र को विषादात्मक बना देती है।

"यह मैं हूँ" की सरल कामरा रंगीन मिजाज वाली है। अधेड़ावस्था में भी उसकी मानसिकता आशा आकांक्षाओं से भरपूर है। सरल कामरा अपने सौन्दर्य को चिरकाल तक बनाये रखना चाहती है। नित्य नये प्रयोग कर अपने सौन्दर्य को बनाये रखने में उसे विशेष आत्मतुष्टि का अनुभव होता है। लेकिन खेद की बात यह है कि उसके सौन्दर्य की अभ्यर्थना करने को कोई नहीं होता। यहाँ तक कि उसका पति भी नहीं। पति की ओर से वह उपेक्षित है इसका गहरा दुःख उसमें है।

सौन्दर्य प्रसाधनों के पीछे उसका जुनून तब खत्म हो जाता है जब तस्वीर भी सरल कालरा अपने हकीकत को प्रदर्शित करती है। चेहरे की झुर्रियों को देखकर वह अवाक् रह जाती है और "यह मैं हूँ" कह कर वह कुंठित हो जाती है । सौन्दर्य के संबन्ध में उसका जो "भ्रम" था वह टूटकर बिखरने लगता है । इस अर्थ का अन्त कहानी की मनोवैज्ञानिक परिवेश की ओर संकेत करता है ।

सात्विक पात्रों के आदर्श एवं उनकी मानसिक स्थिति

"नशा" की आनन्दी उदात्त विचारों वाली नारी है । पति के अत्याचारों को सह कर भी पातिव्रत्य धर्म को निभानेवाली आनन्दी आदर्श भारतीय नारी का साक्षात स्वरूप है । परम्परागत आदर्श एवं मान्यता को प्रधानता देने वाली आनन्दी प्रतिकूल परिस्थितियों में भी अपने दायित्वों से च्युत नहीं होती । पति से दूर रहकर भी वह पति के प्रति सभी कर्तव्यों को निभाती है । यही आनन्दी के चरित्र की सबसे बड़ी विशेषता है ।

आनदी जैसे त्याग एवं समर्पण का जीवन बिताना सिर्फ कुछ ही भारतीय नारियों के लिए स्वीकार्य है । लेखिका ने आनन्दी के माध्यम से आदर्श भारतीय नारी का उदाहरण प्रस्तुत किया है । चारित्रिक दृष्टि से आनन्दी में कई प्रकार की अस्वाभाविकतायें हैं, परन्तु आदर्श के निबाह के अन्दर सब ठीक ठाक बन जाता है ।

"बन्दा की जीत" की भागवती भी परम्परागत आदर्शों को निभाने वाली नारी है । शराबी पति के पाशविक कृत्यों को सहकर भी उसी की बनी रहने को, वह अपनी नियति मानती है।श्रीकान्त बाबू की शाब्दिक

सहानुभूति से वह अपने पातिव्रत्य धर्म को बचाये रखती है। अन्त में पति के अन्यायों से तंग आकर वह बेटी सहित आत्महत्या कर लेती है लेकिन भीकाम्ब बाबू के आश्रय में नहीं जाती । यहाँ भगवती के चरित्र की सात्विकता उभर आती है । पति के द्वारा किये जाने वाले अत्याचारों के बावजूद भी पति के साथ धोखेबाजी करना उसे कभी स्वीकार्य नहीं है ।

"कायर" की उमा अन्तर्मुखी प्रकृति की है । उमा अपने वैवाहिक जीवन में सुखी नहीं है इसका एहसास तो हमें मिल जाता है।लेकिन अपनी कमियों को वह दूसरों के समक्ष प्रकट नहीं करती । पति की ओर से उपेक्षित होने का दुःख और पीड़ा उसके अन्तर्मन में है जिसको उसका पति तक नहीं जानता ।

उमा आधुनिक एवं शिक्षिता होने के बावजूद भी पातिव्रत्य धर्म को निभाने वाली आदर्श नारी है । पति की कायरता की आँच में सास के कठोर नियमों का उल्लंघन किये बगैर चुपचाप सादगी का जीवन व्यतीत करने वाली उमा में अहं और गर्व नहीं के बराबर है ।

"हथनियों पर धूप" की जेवुन की माँ उदात्त विचारों वाली नारी है । पति के लिए वह काम-वासना की भूख को मिटाने वाली मांस पिंड मात्र है । पति की ओर से होने वाले अन्यायों को चुपचाप सहना ही वह अपना धर्म मानती है।जेवुन की माँ विशिष्ट व्यक्तित्व रखने वाली नारी है । पति के व्यवहारों से उसे दुःख अवश्य होता है लेकिन वह उसे दूसरों के समक्ष प्रकट नहीं करती और न ही पति के विरुद्ध आवाज बुलन्द कर के वातावरण को प्रदूषित करती है ।

जेतुन की माँ निम्न वर्ग की अशिक्षित नारी है लेकिन उसके विचार एवं मान्यतायें बहुत ही उच्च कोटि की है ।

पात्रों की रुग्ण मनोवृत्ति

"चांद चलता रहा" कहानी में नायिका रोहिणी की रुग्ण मानसिकता का मूल कारण मंगेतर अरविन्द की कामनाओं की पूर्ति न कर पाने का गम है । यह एक कुंठा का रूप धारण कर लेता है । अपनी शारीरिक पवित्रता को विवाह से पूर्व नष्ट न करने के उद्देश्य से वह अरविन्द की कामनाओं को ठुकरा देती है और दो दिन बाद अरविन्द की अकाल मृत्यु हो जाती है तो उसे जबरदस्त सदमा पहुँचता है ।

परम्परागत आदर्शों से युक्त होने के कारण वह अपने मंगेतर की इच्छाओं की पूर्ति नहीं कर पायी । यह धारणा उसके मन में घर कर लेती है । पश्चाताप और आत्मग्लानि की अग्नि में वह झुलसने लगती है । कई तरह की आधारहीन मान्यतायें उसके मन में जन्म लेने लगती है । अरविन्द की मृत्यु का कारण स्वयं को मान कर अपने आप से बदला लेने को वह तैयार हो जाती है । नित नये लोगों के शयन कक्ष की शोभा बन कर, दीर्घ काल से सुरक्षित अपने शरीर की पवित्रता को वह नष्ट कर देती है ।

रोहिणी के चरित्र की उच्छृंखलता रुग्ण मानसिकता का ही द्योतक है । उसके हर आचरण के पीछे कुंठा ग्रस्त मनोवृत्ति विद्यमान है । अपने आप से बदला लेकर आत्मतुष्टि का अनुभव करनेवाली रोहिणी की मानसिक स्थिति पूर्ण रूप से बिखर गयी है ।

अत्यधिक आधुनिकता के जुनून में उच्छृंखल होकर मानसिक रूप से अस्वस्थता का अनुभव करने वाली नारी है "पुरिसर्विमया" की सनु । एक प्रकार से वह मिसफिट पात्र का उदाहरण प्रस्तुत करती है । जीवन के सब अरमानों की पूर्ति में के बावजूद भी सनु सन्तुष्ट नहीं है । मानसिक रुग्णता उसके सुख चैन को लूट लेते हैं वैवाहिक एवं पारिवारिक जीवन से सब प्रकार के संबंधों को तोड़ने के पश्चात पुनः उनसे जुड़ जाने की आकांक्षा सनु के मन में जागृत होती है । लेकिन स्वयं वह जानती है कि ऐसा होना असंभव है । सनु की मानसिक अस्थिरता ही उसे उच्छृंखल जीवन जीने को मजबूर करती है । कहीं एक जगह टिक न पाना सनु की विवशता है ।

एक समय वैवाहिक जीवन की मान्यताएं उसके लिए बंधन जैसे लगते थे जिससे वह निकल भागने को तड़पती थी । लेकिन सनु के जीवन में ऐसी स्थिति आ जाती है जब वह अपने स्वतंत्र जीवन से ऊब जाती है । सब प्रकार के अरमानों की पूर्ति के बावजूद भी सनु " Frustrated " लगती है । उसका यह फ्रस्ट्रेशन" उसके चारित्रिक विकार का परिचायक है । वैसे उसके अन्दर ईर्ष्या भी दिखाई पड़ता है ।

आधुनिकता के व रूप सौन्दर्य से आकृष्ट होकर उसे अपनानेवाली सनु आन्तरिक रूप से भारतीय मान्यताओं से जुड़ी हुई है । इसी वजह से वह शीघ्र ही अपने उच्छृंखल जीवन से ऊब कर पारिवारिक जीवन से जुड़ना चाहती है । अनियन्त्रित आजादी की खोज वास्तव में एक मरीचिका के पीछे भागने के समान है सनु इसका अनुभव स्वयं करती है ।

"टूटे हुए" की संगी की मानसिक रुग्णता का मूल कारण उसकी "एबनार्मल" संतान है संगी एक माँ होते हुए भी संतान के सुखों से वंचित है ।

इस कारण वह मानसिक रूप से बिखर जाती है । मानसिक अस्थिरता के कारण लीली जो पागलपन दिखाती है उसे उसका पति अनदेखा कर देता है । लीली का पागलपन एवं 'एबनार्मल' व्यवहार मनोवैज्ञानिक दृष्टि से स्वाभाविक एवं परिस्थिति जन्य है । बाह्य कारणों के प्रभाव से मानसिक रुग्णता का पैदा होना इस कहानी का प्रतिपाद्य है ।

जीवन के सभी संबंधों में अकेलेपन के कारण मानसिक रूप से रोग की शिकार बनती है "नींद" की नायिका । नायिका के व्यवहार एवं विचारों से ऐसा लगता है कि उसका एक भरपूरा परिवार था, जो काल के कठोर प्रहार से बिखर गया था । तत्पश्चात नायिका अकेली हो गयी थी ।

दीर्घ काल तक भरे परिवार में रहने के बाद अचानक एकान्तता को पा लेना एक जबरदस्त सदमा है और यही सदमा नायिका पर भी पड़ा है जिस कारण वह मानसिक रूप से रोग ग्रस्त हो जाती है ।

अन्त में नायिका का खंडहरनुमा स्थान में जाकर गहरी नींद में सो जाने की कोशिश करना, उसके मन में विद्यमान जीवन के खंडहर का बहुत ही प्रभावात्मक चित्र प्रस्तुत करता है । ऐसे इस कहानी की नायिका का व्यवहार पागलपन की सीमा तक पहुँचता है ।

"ठहरी हुई खरोंच" की दोनों बहनें अत्यधिक आधुनिकता की वजह से जीवन में पराजित है । बड़ी बहन को अपने स्वतंत्र जीवन पर गर्व है । अपने स्वतंत्र जीवन में वह अस्तित्व की खोज करती है लेकिन निराशा ही हाथ लगती है परिणामस्वरूप वह कुंठाग्रस्त हो जाती है । कुछ न पाने और कुछ न कर पाने की विवशता एक ग्रन्थी का रूप धारण कर लेती है जो बार-बार उसके व्यक्तित्व को कुरेदती रहती है ।

सेक्स के प्रति अत्यधिक उदात्त विचार होने के कारण दोनों बहनों का जीवन दो दिशाओं में बिखर जाता है । असफल प्रेम के कारण बड़ी बहन Frustration का अनुभव करती है और छोटी बहन की मृत्यु गर्भपात कराते समय हो जाती है ।

निष्कर्ष

कहानी लेखिकाओं ने नारी जीवन के विभिन्न पहलुओं को अपनी कहानियों में प्रस्तुत किया है । नये परिवेश में संघर्ष के पथ पर चलनेवाली नारी के न जाने कितने चेहरे उन्होंने प्रस्तुत किये है । विविधात्मकता से भरपूर ये चेहरे इतने भिन्न लगने लगते है कि उनमें कहीं सन्त्रास है तो कहीं चीत्कार, कहीं घुटन है तो कहीं विद्रोह ।

अन्तर्प्रेरणाओं से युक्त ये नारी पात्र कहीं समस्या की शिकार बनी है तो कहीं कुंठाग्रस्त मानसिक वृत्तियों से आहत हो गयी है । अकेलेपन के भय को ढोनेवाली नारियां एक ओर है तो असीम आजादी की तलाश करने वाली आधुनिकाएं दूसरी ओर । इस तरह परम्परा और परिवेश से जुड़ती हुई और कटती हुई नारी की इकाई को भिन्न कोणों से देखने का और उनकी आन्तरिक छटपटाहट को पकड़ने का प्रयास लेखिकाओं ने किया है ।

समस्याग्रस्त नारी पात्रों में लेखिकाओं ने विशेष रूप से आर्थिक एवं वैयक्तिक समस्याओं को ही अभिव्यक्ति प्रदान की है । आर्थिक समस्याओं को उजागर कर लेखिकाओं ने यह स्पष्ट किया है कि अर्थ ही आधुनिक जीवन का आधार स्तम्भ है । सारे रिश्ते नाते अर्थ पर टिके हुए है और अर्थ के अभाव ये सब क्षीण हो जाते हैं ।

आधुनिक युग में पुरुषों की तरह स्त्रियाँ भी परिवार के दायित्वों को निभाती है और पुरुषों की तरह ही घर की समस्याओं के प्रति वे सचेत रहती हैं इस सत्य की ओर लेखिकाओं ने इशारा किया है। घर की समस्याओं को सुलझाने के लिए अपने सूझ-बूझियों को आकृति देने को भी आधुनिक शिक्षित स्त्रियाँ तैयार होती हैं। ऐसी अनेक नारियों के जीवन पर लेखिकाओं ने लेखनी चलायी है। कुछ स्त्रियाँ ऐसी भी होती हैं जो समस्याओं को ढोते-ढोते, जब कोई शुभ परिणाम नहीं निकलता तो कुंठाग्रस्त हो जाती है। लेकिन इसके विपरीत कुछ स्त्रियाँ ऐसी भी होती है जो समस्याओं के पहाड़ टूट पड़ने पर भी अपने व्यक्तित्व की दृढ़ता नहीं छोड़ती। ऐसी नारियाँ परिवेश एवं परिस्थितियों से मुकाबला कर नये सिरे से जीने का संकल्प लेती हैं।

उधर, अकेलेपन के शिकार पात्रों के माध्यम से लेखिकाओं ने आधुनिक जीवन की विसंगतियों को झेलने के लिए मजबूर नारी पात्रों के कुंठित एवं निराशाग्रस्त जीवन को उभारा है। आधुनिकता के जीवित तत्व कुंठा, निराशा सन्त्रास आदि से ये नारी पात्र आक्रान्त लगते हैं। कभी-कभी अत्यधिक स्वतंत्रता भी नारी के जीवन को कुंठित कर देती है।

लेखिकाओं ने कुछ ऐसे पात्रों की एकान्तता को वाणी दी है जो उचित संगी साथी के अभाव में कुंठाग्रस्त हो गयी है। और कुछ ऐसे पात्र है जो योग्य साथी के होने के बावजूद भी अकेलेपन का अनुभव करती है क्यों कि उन पात्रों में परायेपन के भाव अधिक दिखायी देते हैं। इस प्रकार ऐसी स्त्रियाँ अपनों के होते हु ए भी तन्हाई में जीवन बिताने को मजबूर हो गयी है।

आज के हमारे यान्त्रिक युग में परम्परागत मान्यताओं को आधार मान कर जीवन यापन करने वाले कुछ उच्च, मध्य एवं निम्न वर्ग की स्त्रियाँ भी है जो अपने आदर्शों से एक कदम भी पीछे हटने को तैयार नहीं होती। लेखिकाओं ने स्त्रियों के जीवन की ओर विशेष ध्यान दिया है। ऐसी

स्त्रियाँ हजारों की संख्या में तो कम जरूर हैं, लेकिन हम दावे के साथ कह सकते हैं कि आज भी हमारे समाज में वे भी विद्यमान हैं ।

पात्रों की रोगग्रस्त मानसिकता को लेखिकाओं ने मनोवैज्ञानिक दृष्टि से आंकने का प्रयास किया है । मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों के आधार पर लेखिकाओं ने ऐसे पात्रों की मानसिक स्थिति का विवेचन किया है ।

इस तरह लेखिकाओं ने अपनी रचनाओं में कई प्रकार के पात्रों के माध्यम से जीवन्तता का विधान किया है।स्थूल घटनाओं के बीच सूक्ष्म प्रतिक्रियाओं को आंकने की कोशिश में मन के आचरण की विचित्रता को भी लेखिकाओं ने भरपूर स्थान दिया है । समकालिक बोध से प्रभावित होने के कारण इन लेखिकाओं ने कहानियों में आये पात्रों की मानसिकता को विभिन्न आयामों से जोड़कर देखने की कोशिश की है । पात्रों की मानसिकता और उनके मन का विश्लेषण आदि पर तथ्यपूर्ण और यथार्थपूर्ण दृष्टि डालना ही इनका लक्ष्य रहा है । इस कारण फ्रायड या पावलोव के सिद्धान्तों के अनुसार ही पात्रों का मनोविश्लेषण न कर लेखिकाओं ने सामाजिक परिवेशों से प्रभावित पात्रों की प्रतिक्रियाओं को अपने सही अर्थों में प्रस्तुत किया है । अतः कुंठा से युक्त और ग्रन्थियों से पीड़ित मनोविश्लेषण के सैद्धान्तिक पक्षों पर मात्र प्रकाश डालने वाले पात्र यहां कम ही दिखायी देते हैं । इस वजह से पात्रों का मनोविश्लेषणात्मक स्वरूप अधिक स्वाभाविक और यथार्थपूर्ण लगता है । सैद्धान्तिक नहीं । फ्रायड, पावलोव और युंग इस कारण कम चर्चा के विषय हैं ।

जहाँ तक आर्थिक समस्याओं से ग्रस्त पात्रों की मानसिक स्थिति का सवाल है लेखिकाओं ने ईमानदारी के साथ अपने दायित्व को निभाया है । बदलती सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियों में जीवन का स्वरूप कितना बोझिल

बन जाता है और जीवन की तंग-तंग परिस्थितियाँ आदमी को किस तरह गिरने को मजबूर करती है । यह एक विचारणीय समस्या है । टूटते बिखरते परिस्थितियों की चोटों से आहत असहाय नारी की विवशता, रोटी के टुकड़ों के लिए जीवन की खुशियों को दफनाने के लिए विवश यौवन की चीत्कार, आदि के पीछे अर्थ का जो भाव है उसे प्रभावात्मक ढंग से इन लेखिकाओं ने चित्रित किया है । इसलिए आर्थिक विवशता से ग्रस्त पात्रों की मानसिक स्थिति पूर्णतया स्वाभाविक एवं भारतीय परिस्थितियों में सत-प्रतिशत स्वीकार्य है ।

अकेलेपन के शिकार पात्रों की मानसिक स्थिति का विवेचन करते समय कहीं कहीं लेखिकाओं का मन भटकने भी लगा है । यहाँ का अकेलापन पाश्चात्य देशों के अलगाव [एलियनेशन] की भावना से ग्रस्त नहीं है । नयी आर्थिक एवं सामाजिक परिस्थितियों से प्रभावित होने के कारण समाज में उठने वाली समस्याएं भी नवीनता को लिए हुए है । परिवार में रहकर जिस अकेलेपन का बोध स्त्री एवं पुरुष को होने लगता है उसका कारण भारतीय सामाजिक जीवन से आये हुए दृष्टिदोष का परिचायक ही नहीं अपितु आर्थिक दबावों से प्रभावित स्वार्थ एवं अपने में ही सिमट जाने की संकीर्णता से भी उपजा हुआ है । अकेलेपन को उभारने वाली कहानियों में इसी दृष्टि से संबंध और स्थितियों का चित्रण प्रस्तुत किया गया है । कहीं-कहीं संबंधों की शिथिलता से भी व्यक्ति के मन में अकेलेपन का भाव जन्म लेने लगता है । इसलिये यह अकेलापन सौ फीसदी भारतीय है, आयातित नहीं ।

रुग्ण मानसिकता वाले पात्रों की मानसिक स्थिति का विवेचन पूर्ण रूप से वैसे मनोवैज्ञानिक तथ्यों के आधार पर नहीं हुआ है । आंशिक रूप से ये पात्र कुंठाग्रस्त एवं ग्रन्थियों से पीड़ित लगते हैं । अधिकतर उनकी रुग्णता किसी न किसी बाह्य प्रतिक्रिया से उपजी हुई लगती है जीवन में घटित होने वाली किसी न किसी घटना का प्रभाव या अचानक आने वाला सदमा इसके

पीछे विद्यमान है । परिस्थिति एवं प्रतिक्रियाओं से उत्पन्न यह रुग्णता मनोविज्ञान की गहरी गुत्थियों का परिचय नहीं देती और न ही इसकी व्याख्या के लिए मनोविज्ञान के सिद्धान्तों की छान-बीन करनी पड़ती है।इस कारण रुग्णता से ग्रस्त पात्रों के कार्य स्वाभाविक लगते हैं । कहीं भी अतिरंजित और अति यथार्थपूर्ण नहीं लगते ।

सात्विक स्वरूप को उभारनेवाले पात्रों में परम्परागत जीवन बोध को भरने की कोशिश लेखिकाओं ने की है।संस्कार और आदर्श से युक्त इनकी मानसिक स्थिति एक सीमा तक ही विश्वसनीय लगती है क्योंकि आधुनिक समाज में इस तरह के आदर्श पात्रों के दर्शन कम ही होते हैं। फिर भी समाज ऐसे पात्रों से पूर्ण रूप से वंचित नहीं है । इस कारण आदर्श एवं सात्विकता को उभार कर रखनेवाली कहानियों के पात्रों की मनोवृत्ति परम्परागत मान्यताओं के अनुरूप है उनमें कोई नवीन मनोवैज्ञानिक तथ्य की खोज करने की आवश्यकता नहीं है ।

चौथा अध्याय

कथ्य की विविधता

चौथा अध्याय

कथ्य की विविधता

कथ्य की भूमिका

कथ्यात्मक विविधता स्वातन्त्र्योत्तर कहानियों की सबसे बड़ी विशेषता है । इन कहानियों में उभरा हुआ यथार्थ भोगी जा रही जिंदगी का नग्न सत्य है जिसमें कुरूपता भी है साथ साथ सौन्दर्य भी । इन कहानियों का फलक इतना व्यापक एवं विस्तृत है कि कहीं भी एकरसता का या स्थूलता का आभास नहीं होता 'आज की कहानी का कथ्य उभरकर आया सामाजिक यथार्थ सामयिक सन्दर्भों में उभरे मान-मूल्यों का वाहक है । इसके सहारे लेखक समाज में व्याप्त अनास्था असंतोष आदि अस्वस्थ पक्षों को उद्घाटित करने तथा विकृत मनःस्थितियों को वाणी देने की स्वस्थ एवं सर्जनात्मक दृष्टि प्राप्त करता है और कहानी को सीमित दायरे से निकालकर एक बृहद् आयाम देता है इससे कहानी गाँवों, कस्बों, नगरों एवं महानगरों की सड़कों को नापती हुई राष्ट्रीय ही नहीं अन्तर्राष्ट्रीय क्षितिज भी छूने लगी है ।'[1]

---

1. डॉ॰ शिवशंकर पाण्डेय, स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी कहानी कथ्य और शिल्प - पृ॰ 89

परिवर्तित हो रहे जीवन मूल्यों की सहज स्वीकृति के साथ नारी जीवन की संश्लिष्ट अभिव्यक्ति हिन्दी कहानी के कथ्य की एक विकसित दिशा है और इस दिशा में लेखिकाओं की प्रतिभा विशेष रूप से जुड़ी हुई है ।

जीवन के बदलते मूल्यों के साथ संघर्ष करती हुई नारी सिर्फ लेखिकाओं के लिए ही नहीं समस्त कथाकारों के लिए सबसे बड़ी चुनौती है । इसलिए कथ्य के रूप में उभरा नारी जीवन एकांगी न होकर वैविध्यपूर्ण है । नारी जीवन के विविध रूपों का आकलन लेखिकाओं ने सूक्ष्मता के साथ किया है । परम्परागत मान्यताओं पर चलनेवाली ग्रामीण स्त्री पात्रों के साथ साथ विद्रोह को अपनाते हुए संघर्ष के पथ पर चलने वाली आधुनिकाएं भी इनकी कहानियों में दिखायी पड़ती हैं । लेखिकाओं ने अपनी कहानियों में नारी जीवन के उन और छोरों को पकड़ने की कोशिश की है जो ग्रामीण अंचलों की झुग्गी झोपड़ियों से लेकर शहर के व्यस्त नगर वीथियों तक फैला पड़ा है। इस लिए कथ्य के अन्दर ग्रामीण व शहरी के माहौल का स्पष्ट स्वरूप उभर आया है । कथ्य के अन्तर्गत दिखायी पड़ने वाली स्थिति परक विविधता पात्रों को पहचानने और उनकी मानसिकता को आंकने में सहायक सिद्ध हुई है । इस तरह कथ्य की विविधता व परिस्थिति की विशदता कहानियों को गहरी बना देती है ।

अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से विभिन्न शीर्षकों में कथ्य को प्रस्तुत करने का प्रयास हमने किया है ।

नारी की स्वतंत्र मनोवृत्ति को उभारने वाली कहानियाँ

आज के बुद्धिवादी एवं संघर्ष प्रधान युग में पुरुषों के समान स्त्रियाँ भी अपने व्यक्तित्व की खोज में स्वनिर्मित एवं परिस्थिति निर्मित परिवेशों से गुजर रही है। अपने स्वतंत्र अस्तित्व की खोज में सर्वप्रथम नारी को उन परम्परागत मूल्यों का उन्मूलन करना पड़ा जिनके बोझ से दबी वह अपने निर्णय की शक्ति खो चुकी थी।

स्वाधीनता के पश्चात सामाजिक जागृति और बदलते नैतिक बोध के कारण नारी के प्रति परम्परागत दृष्टिकोण बदलने लगा। स्त्री अबला है, वह पुरुष के चरणों की दासी है आदि परम्परागत धारणाओं को आधुनिक नारी ने नकारने की कोशिश की है। लेकिन पूर्ण रूप से उसे इसमें सफलता नहीं हासिल हो रही है क्यों कि समाज की सारी मान्यताएं पुरुष स्वार्थ के मुद्दे पर नजर रख कर ही निर्धारित की गयी है। अधिकांशतः यह देखा जाता है कि नारी आर्थिक रूप से परावलंबी न होकर भी पति पर आश्रित रहती है। पति की इच्छा के विरुद्ध वह कोई ठोस निर्णय नहीं ले सकती। अपवाद के रूप में वे ही स्त्रियाँ आती हैं जो पति को मात्र "बेड पार्टनर" के रूप में देखती है।

उभरती हुई नारी चेतना को स्वर देने के प्रयास में जितनी भी कहानियाँ लिखी गयी है, उनमें एक अन्वेषण की दृष्टि दिखायी पड़ती है। बंधनों से मुक्त होकर पुरुष की अधीनता को नकारते हुए अपने ही निर्णयों पर अडिग रहने के संकल्प को नारी फिर से दुहराने लगती है परन्तु कहानियों में आने वाली ये नारी पात्र बहुमत का तो प्रतिनिधित्व नहीं करती, लेकिन अल्पसंख्यक संघर्षवादिनी नारियों के कार्यों का प्रतिनिधित्व जरूर करती है।

वैसे लेखिकाओं ने इनके तेवरों को बड़ी सफलता के साथ उभार कर रखने का प्रयास किया है । इस कारण नवलेखन की मुखमुद्रा अधिक आकर्षक बनने लगी है ।

(क) मन्नू भण्डारी की कहानियाँ

लेखिकाओं ने नारी के बदलते स्वरूप और उनमें जागृत हो रही नयी चेतना की ओर विशेष ध्यान दिया है । मन्नू भण्डारी की बहुतेरी कहानियाँ नारी की स्वतंत्र मानसिकता और उनके दृढ व्यक्तित्व को उजागर करनेवाली है । "इनके भी जैसा" कहानी में लेखिका ने विद्रोह करती हुई एंजिला के माध्यम से धार्मिक क्षेत्र का शोषण एवं धार्मिक आचार्यों की काम केलियों का भंडाफोड़ किया है । कहानी की नायिका एंजिला दृढ व्यक्तित्व वाली नारी है जो अपने व्यक्तित्व की दृढता के द्वारा फादर के वासनात्मक पंजे से छटपटाकर मुक्त हो जाती है और चर्च की चार-दीवारी से निकल भागती है । इस घटना के पश्चात एक दो सिस्टर्स जो फादर की वासना की शिकार हो चुकी थी, चर्च से निकल भागती हैं । वे विद्रोही एंजिला के पदचिन्हों पर चल कर अपने आप को कृत्रिम दुनिया की बेड़ियों से मुक्त करती है ।

मन्नू भंडारी ने चर्च की चार दीवारी के अन्दर दम घुट कर मरने वाली महिलाओं की दर्द भरी कहानी इ एंजिला के माध्यम से प्रस्तुत की है एंजिला एक प्रतीक है उस नारी का जो घुटन से भरपूर वातावरण में धर्म के नाम पर लूट भी जाती है । अधिकतर, ईसाई वर्गों में घटित होनेवाली कोई भी बात जन साधारण तक नहीं पहुंच पाती । क्योंकि गोपनीयता की चादर हर सिस्टर को ढकी रहती है । मन्नू भण्डारी ने इस चादर के अन्दर घटनेवाली होनेवाली जिंदगी की सही तस्वीर प्रस्तुत कर दी है ।

धार्मिक दृष्टि से विद्रोहात्मक प्रतिक्रिया प्रस्तुत करनेवाली यह कहानी यथार्थ के धरातल पर खड़ी होकर अनुभूति की सम्पन्नता से लैस होकर हिन्दी की इनी-गिनी कहानियों में एक बन जाती है

{ख} मृदुला गर्ग की कहानियाँ

वैयक्तिक स्वतंत्रता के उत्तुंग शिखर पर आसीन होकर आधुनिक अपने आदर्श एवं मान्यताओं को मटियामेट करनेवाली नारी है मृदुला गर्ग की कहानी "एक और विवाह" की कोमल। वह आधुनिक विचारों वाली अहंग्रस्त नौकरीपेशा नारी है जो भारतीय आदर्श एवं मान्यताओं को आधारहीन मानकर पाश्चात्य सभ्यता से प्रभावित होकर जीवन निर्वाह करती है। कोमल प्रेम के आधुनिक रूप पर विश्वास करती है।उसके अनुसार शारीरिक संबंध के लिए विवाह की आवश्यकता नहीं है।विवाह तो उसके लिए एक रस्म, एक रिवाज मात्र है।विवाह से बढ़ कर वह शारीरिक संबंध को ही महत्ता देती है। अर्थात् उसके लिए विवाह जैसे पवित्र बंधन सेक्स और रोमांस के सामने मूल्यहीन है।

अपनी इच्छानुसार कोमल मदन नाम के एक व्यक्ति से विवाह तय कर लेती है। शादी के पश्चात् प्रथम रात में कोमल की स्वतंत्र मनोवृत्ति को देखकर पति दंग रह जाता है। वह कहता है 'वाह तुम तो अमरीकन स्त्रियों को भी मात करती हो'। कोमल को पति के इन शब्दों से भारी ठेस पहुँचती है। उसे अपने प्रयोग में सफलता तो मिलती है। लेकिन वह आत्मतुष्टि से वंचित हो जाती है।

आधुनिकता के व्यामोह में पड़ कर अपना कौमार्य नष्ट करनेवाली नारी है "कितनी मेढें" कहानी की मीना। मीना पहले साधारण सी लड़की थी। लेकिन माँ के उपदेश और फैशन की ओर बढ़ने का प्रोत्साहन उसके चरित्र को भ्रष्ट कर देता है। आधुनिकता की बाढ़ में पागल बनी मीना बौद्धिक

होकर नशीले पदार्थों का सेवन कर खुले आम लड़कों के साथ घूमती-फिरती है । इसी बीच खेल खेल में मीना की इज्जत लुट जाती है । मीना की जिंदगी एक नये मोड़ की ओर मुड़ जाती है । वह अब माँ के अत्याचारों को सह कर घर की चारदीवारी में कैद हो जाती है । एक शुभ मुहूर्त पर उसका विवाह सम्पन्न होता है। विवाह के पश्चात् उसे जीवन के नये अनुभवों के प्रति कोई विशेष रुचि नहीं होती क्योंकि शादी से पूर्व ही वह सेक्स का आनंद लूट चुकी होती है। एक दिन मीना मनोज के सामने अपने अतीत के जीवन की गांठ खोलती है। मीना के अतीत के किस्से सुनकर मनोज दंग रह जाता है । मीना मनोज के लिए एक चुनौती बन जाती है वह सोचता है "क्या वह मीना की पिछली जिंदगी के शिकंजे से बरी हो सकेगा इस औरत के साथ सहज स्वाभाविक जिंदगी जी सकेगा ।"[1]

मीना मात्र मनोज के लिए ही एक समस्या नहीं है बल्कि बदलते समाज और उस समाज में जीने वाले समूचे नारी-वर्ग के लिए भी एक समस्या है ।

नारी की स्वतंत्र मानसिकता को मृदुला गर्ग ने "हरि बिन्दी" कहानी में प्रस्तुत किया है । कहानी की नायिका पति द्वारा निर्मित सीमित दायरे में घुट कर जीना नहीं चाहती । वह स्वतंत्रता चाहती है। उसे कुछ समय के लिए स्वतंत्रता हासिल भी हो जाती है, जब उसका पति दौरे पर जाता है । नायिका की खुशी का ठिकाना नहीं होता । वह सोचती है "बहुत देर तक सोने में कितना आनंद आता है राजन होता है तो सुबह 6 1/2 से ही उठ कर

---

1. मृदुला गर्ग - कितनी कैदें, कितनी कैदें - पृ. 30

फटाफट शुरू हो जाती है । चाय नाश्ते की तैयारी .... न जाने राजन को यह जल्दी उठने की क्या सनक है । खैर आज वह स्वतंत्र है।[1]

पति की गैर हाजिरी में नायिका अपनी सारी आशाओं की पूर्ति करती है अत्यधिक उल्लास और आनन्द के कारण वह बेतुके ढंग से शृंगार करती है । अपने इच्छानुसार सब छेड़ कर वह चिल्लाती जाती है और बीच-बीच में ठहाके मार कर हंसती है, काफी हाउस जाकर ठंडे और गर्म को एक साथ खाती है। इस प्रकार एक ही दिन में वह अपनी सारी अरमानों की पूर्ति करना चाहती है ।

नायिका के ऐसे विचित्र व्यवहार से यह साफ जाहिर हो जाता है कि वह पति के क्रमबद्ध नियमों में आबद्ध होना नहीं चाहती और जीवन को अपनी इच्छा के अनुसार जीना चाहती है ।

(ख) <u>दीप्ति खंडेलवाल की कहानियाँ</u>

दीप्ति खंडेलवाल ने आधुनिक नारी के उच्छृंखल व्यवहार को "डूबने से पहले" कहानी में चित्रित किया है शैला कपूर एक दफ्तर की टाइपिस्ट है जो सेक्स को बहुत ही साधारण दृष्टि से देखती है। गैर पुरुष से शारीरिक संबंध जोड़ना उसके लिए मामूली सी बात है । तरक्की पाने के लिए वह बॉस के हाथों की कठपुतली बनती है । अपने सौन्दर्य को सबके समक्ष प्रस्तुत कर उनके द्वारा प्रशंसित होना ही उसका लक्ष्य है शैला कपूर के विचारों में परिवर्तन आता है

1• मृदुला गर्ग हरि बिन्दी कितनी कैदें - पृ•3।

अशोक जो उसके ही दफ्तर में नौकरी करता है। रेखा कपूर अशोक के पास शारीरिक संबंध जोड़ने का प्रस्ताव रखती है लेकिन अशोक उसे ठुकरा देता है । अशोक का नकारात्मक उत्तर सुन कर रेखा कपूर के विचार कुछ परिवर्तित हो जाते हैं । सेक्स को प्रधानता देनेवाली रेखा कपूर समझ जाती है कि संसार में सेक्स से ज्यादा महत्व प्यार का है ।

रेखा कपूर के समान जीवन बितानेवाली बहुत नारी महिलाएं हमारे समाज में है लेकिन उनके विचारों को खंडित करने वाले अशोक जैसे पुरुष बहुत कम है ।

जीवन में मात्र देह सेक्स को प्रधानता देनेवाली उच्छृंखल नारी है "देहगंध" कहानी की प्रतिमा । प्रतिमा अपने चंचल बातों से पड़ोसी मनोहर को अपनी ओर आकर्षित करती है । दोनों का लगाव और आकर्षण बढ़ते - बढ़ते शारीरिक संबंध तक पहुंच जाता है और प्रतिमा के दिन चढ़ जाते हैं । इसी बीच प्रतिमा के लिए एक रिश्ता आता है । मनोहर प्रतिमा को अपनाना चाहता है लेकिन प्रतिमा एक बेवफा नारी के समान उसके प्यार और वफा को ठुकरा देती है ।

कई सालों के बाद अचानक मनोहर की मुलाकात प्रतिमा से होती है । प्रतिमा पुनः अतीत के संबंधों को ताजा करना चाहती है लेकिन मनोहर की चेतना में से प्रतिमा की गंध लुप्त हो गयी होती है । वह वायवी आकर्षण को त्याग कर यथार्थ के ठोस धरातल पर जीने का संकल्प करती है ।

प्रतिमा के व्यक्तित्व में नारी के दो रूप देखे जाते हैं वह न आदर्श पत्नी है न योग्य प्रेमिका । इस तरह की स्त्रियाँ समाज में पत्नी और प्रेमिका के स्वरूप को आधारहीन बनाती हैं । साथ-साथ पति-पत्नी के पावन संबंध को कलंकित करती हैं।ऐसी स्त्रियाँ स्वयं अपना जीवन तो बर्बाद करती है और दूसरों के जीवन को बर्बादी की ओर ले जाती हैं ।

[ग] शिवानी की कहानियाँ

शिवानी ने "सती" कहानी में आधुनिक नारी के परिवर्तित हो रहे नये स्वरूप का सार्थक चित्र खींचा है ।

कहानी की नायिका विशाल काया सी सती चलती गाड़ी में दौड़ कर महिला डिब्बे में कूदती है । डिब्बे में अन्य तीन चार महिलाएं होती हैं । सती सबको अपना परिचय देती है वह अपना नाम मदालसा सिकारिया बताती है जो प्रिटोरिया की वासिनी है । वह भारत अपने मृत पति के साथ सती होने के लिए आयी है जिसकी मृत्यु एक साल पूर्व भारत में हुई थी ।

सती की करुण कहानी सुन कर अन्य महिलाएं दुखी हो जाती है । उनमें एक समाज सेविका होती है जो मदालसा को अपने आश्रम में रहने को आमन्त्रित करती है लेकिन मदालसा आदर्श नारियों के समान उस समाज सेविका के प्रस्ताव को ठुकरा देती है ।

भोजन के समय मदालसा शिष्टाचार वश उन्हें अपना भोजन सौंपती है और स्वयं उन तीनों का भोजन कर लेती है । भोजन के पश्चात् तीनों संतरी स्वप्नों में खो जाती है । आंख खुलने पर उन्हें अजीब सा नशा सा

हँसने लगता है और सामने से मदालसा गायब साथ साथ अन्य महिला यात्रियों के बहुमूल्य सामान भी यह कहानी एक यथार्थ घटना सी लगती है क्योंकि आधुनिक युग में स्त्रियाँ पुरुषों से ज्यादा चोरी डकैती के क्षेत्र में माहिर हो गयी हैं। मदालसा जैसी अनेक स्त्रियाँ हैं जो लोगों को उल्लू बना कर अपना काम बना लेती हैं। आज के युग में स्त्रियों का स्तर कितना गिर चुका है इस तथ्य की ओर यह कहानी संकेत करती है।

'लोप' कहानी में शिवानी ने एक उच्छृंखल नारी के गिरे हुए चरित्र को प्रस्तुत किया है। नायिका लोप नारी समुदाय के एक ऐसे वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है जिसे न परिस्थिति परिवेश का भय है और न समाज का।

लोप को अपने व्यवहार के अनुकूल ही लोप की उपाधि मिलती है। लोप फौज से छुट्टी पाकर एक टी॰बी॰ सैनिटोरियम के पास वास करती है। वह अपने साथ तीन-चार जवान मरीजों को भी पालती है। उनमें से उसे जो पसंद आता है, उससे वह ब्याह कर लेती है। ऐसा ही एक मरीज था राजेन्द्र। राजेन्द्र के लिए वह कहा करती थी कि वह देश का एक महान वैज्ञानिक बनेगा लेकिन लोप राजेन्द्र से ब्याह कर देश के एक महान वैज्ञानिक की जान ले लेती है। राजेन्द्र की मृत्यु के पश्चात् लोप आदर्श पतिव्रता नारी के समान सादा जीवन यापन करती है। समय के करवट बदलते ही लोप प्लूरेसी से ग्रस्त एक मेडिकल स्टूडेन्ट से ब्याह कर लेती है जिसे वह एक महान डाक्टर बनाना चाहती थी लेकिन लोप की यह आशा भी अपूर्ण रह जाती है।

लेखिका ने लोप को एक अधेड़ उम्र की औरत के रूप में प्रस्तुत कर यह दर्शाया है कि कुछ आधुनिक स्त्रियाँ उम्र में अधेड़ होने पर भी मिज़ाज की रंगीन होती हैं। नौजवानों के प्रति लोप का आकर्षण सहानुभूति का

जामा पहन कर सामने प्रस्तुत होता है । रोगग्रस्त जवानों की सेवा कर उन्हें अपने चंगुल में फंसाना ही उसका लक्ष्य है । राजेन्द्र और हेमकुल जैसे नौजवानों से ब्याह कर तोष देश के एक महान वैज्ञानिक और डाक्टर की कातिल बन जाती है ।

तोष कहानी एक हद तक ही स्वाभाविक लगती है, फिर भी ऐसी महिलाओं के कार्य कलाप समाज के लिए पूर्ण रूप से अपरिचित नहीं है ।

वैवाहिक समस्याओं को उभारनेवाली कहानियाँ

वैवाहिक जीवन की सफलता पूर्ण रूप से पति-पत्नी के वैचारिक सामंजस्य और मानसिक सन्तुलन पर आधारित है । विवाह दो आत्माओं का पवित्र मिलन होता है जिसे व्यक्तिगत अहं की होड़ की भावना से कलुषित नहीं करना चाहिए ।

आधुनिक समाज में विवाह संबंधी परम्परागत मान्यताएं क्षीण हो गयी हैं । आज विवाह व्यापार की एक संस्था बन गया है । जहाँ दो आत्माओं का पवित्र मिलन नहीं दो शरीरों का व्यापार होता है जिस कारण दायित्व एवं समर्पण की भावना उनमें चिरकाल तक वर्तमान नहीं रहती । विवाह का मूल लक्ष्य काम-क्रीड़ा है विशेष कर आधुनिक युग में । पति-पत्नी का संबंध केवल सेक्स के धरातल पर ही टिका हुआ है । अतः विवाह प्रेम की नहीं सेक्स की चरम सीमा हो गयी है । इसके कारण वैवाहिक जीवन में बहुत जल्द ही ऊब और एकरसता की भावना जन्म लेने लगती है । परिणामस्वरूप पति-पत्नी गैर स्त्री-पुरुष से संबंध जोड़ने को मजबूर हो जाते हैं । आज के आधुनिक समाज में ऐसे अवैध संबंध सब स्वीकार्य है क्यों कि इसे लोग आधुनिकता के अन्तर्गत मानते हैं । आज की इस खोखली आधुनिकता से जीवन संबंधी

नारी मान्यताएं आधारहीन हो गयी है।पति-पत्नी में थोड़ा सा मन-मुटाव हुआ तो दोनों तुरन्त तलाक के लिए तैयार हो जाते हैं। समझौते की मानवना उनमें नहीं के बराबर रह गयी है।

वैवाहिक जीवन की समस्याओं का दूसरा प्रमुख कारण अर्थ है। अर्थ कभी-कभी पति-पत्नी के संबंधों के बीच दरारें डालता है तो कभी पत्नी की संवेदनाओं को रौंद कर उसकी मजबूरी का फायदा उठाता है। अर्थ के प्रति अत्यधिक मोह और आकर्षण के कारण पति अपनी पत्नी के अस्तित्व को भूल कर उसके शरीर की पवित्रता को विस्मृत कर उसे अपनी तरक्की का साधन बनाता है।दूसरी ओर पुरुषों का एक वर्ग ऐसा भी है जो आधुनिक एवं शिक्षित होने के बावजूद भी संकीर्ण विचारों वाला होता है।स्त्रियों को सीमित परिवेश में देखने के इच्छुक ये पुरुष स्वयं मनमौजीपन दिखाते हैं। यदि इनकी पत्नियां और पुरुष के साथ काफी हाउस जाये या सिनेमा घर जाये तो तूफान खड़ा कर देते हैं। गढ़े ही नेक एवं आदर्श इंसान की तरह न पत्नी के चरित्र पर चरित्रहीनता का आरोप लगाने वाले ये पुरुष यह नहीं देखते कि खुद कितने पानी में है।

आधुनिक नारी परम्परागत नारियों की अपेक्षा एक सीमा तक सुरक्षित है जिस कारण परम्परागत नारियों की तरह समर्पिता होकर पुरुष के भाग्य पर जीना उन्हें स्वीकार्य नहीं। अत: आज की नारी न पुरुष की दासी है न पुरुष उसका रखवाला।

(क) मन्नू भण्डारी की कहानियों में वैवाहिक समस्यायें

लेखिकाओं की प्राय: सभी कहानियों में जीवन की समस्याओं का स्वर प्रमुख रूप से उभरता है। मन्नू भण्डारी की कहानी "तीसरा आदमी"

वैवाहिक जीवन के तनावों को उभारनेवाली श्रेष्ठ कहानी है । इस कहानी में लेखिका ने पति-पत्नी के बीच उत्पन्न अलगाव एवं एकरसता की भावना को स्वर दिया है ।

सतीश और शकुन पति-पत्नी हैं । विवाह के दो साल तक वे अपने बीच किसी तीसरे को नहीं लाते । जब शकुन को नौकरी मिल जाती है तब वह अपने पति से तीसरे के लिए मनुहार करती है लेकिन सतीश उसके मनुहार को पूरा करने में अपने आप को असमर्थ पाता है । परिणाम स्वरूप दोनों में अनदेखी दूरियाँ बढ़ने लगती है । सतीश का आत्मविश्वास धीरे-धीरे घटने लगता है कभी कभी वह अपने को नपुंसक समझने लगता है ।

एक बार शकुन का परिचित लेखक आलोक उसके घर मिलने आता है । शकुन उसकी खूब खातिरदारी करती है जिसे देखकर सतीश के मन में कई प्रकार की शंकाएं जागृत होने लगती हैं । हीन ग्रंथि का शिकार बना सतीश दफ्तर में निश्चिंत होकर बैठ नहीं पाता वह लौट कर घर आता है । घर की खिड़कियाँ, दरवाजे सब बंद है । कहीं से कोई आवाज भी उसे सुनाई नहीं पड़ती । सतीश ईर्ष्या और क्रोध से आकुल जाता है।वह सोचता है कि दरवाजा तोड़ कर दोनों को रंगे रंगे हाथ पकड़ ले लेकिन वह कुछ नहीं कर पाता

इस कहानी में नए जमाने के पति की मानसिक कमजोरी का एक पहलू स्पष्ट हुआ है । वस्तुतः लड़ाई कुछ भी नहीं होती, सब शक ही शक होता है और उसका भी कोई ठोस आधार नहीं होता । पुरुष अब भी इस मानस ग्रंथि से मुक्त नहीं हुआ[1] ।"

1· डॉ॰ भगवानदास वर्मा - कहानी की संवेदनशीलता सिद्धान्त और प्रयोग - पृ॰222

वैवाहिक जीवन की समस्याओं को उभारनेवाली मन्नू भण्डारी की दूसरी श्रेष्ठ कहानी है "बंद दराजों के साथ"। इस कहानी में लेखिका ने संबंधों के बनते-बिगड़ते स्वरूप का जीवन्त चित्रण किया है ।

"बंद दराज" इस कहानी में समस्या का केन्द्र है । पत्नी मंजरी पति के बंद दराज को देखकर उस पर शक करती है, मंजरी की शंकित दृष्टि उसे दिन-रात परेशान रखती है । उसे लगता है कि उसके साथ सोने वाला, उसे प्यार करनेवाला विपिन पूर्ण रूप से उसके प्रति वफादार नहीं है । एक दिन वह बंद दराज को खुला देखती है जिसमें एक महिला और बच्ची की तस्वीर पड़ी रहती है जिसे देखकर मंजरी को अपना शक साकार होते नज़र आता है । मंजरी को लगता है कि विपिन के साथ उसका जीवन शून्यता की ओर बढ़ रहा है । मंजरी अपने पति से संबंध तोड़कर दिलीप से ब्याह कर लेती है । दिलीप के साथ आरम्भ के दिन कुछ हँसी-खुशी से बीत जाते हैं । फिर धीरे धीरे एक तनाव दोनों के बीच उठने लगता है । तनाव का केन्द्र है विपिन और मंजरी का बेटा असित और उसका खर्च । असित की पढ़ाई के खर्च की बात सुनकर मंजरी को बहुत बुरा लगता है । धीरे-धीरे मंजरी और दिलीप के बीच फासले बढ़ने लगते हैं । एक अदृश्य मेज मंजरी के कमरे में उभर आती है जो दो भागों में विभाजित है व्यक्तिगत और पारिवारिक । मंजरी हालातों के थपेड़ों से विवश हो जाती है और यह विवशता उसे विपिन की यादों की ओर खींच ले जाती है । उसे लगता है कि विपिन ने अपनी ही नहीं उसकी भी ज़िंदगी को दो टुकड़ों में विभाजित किया है । मंजरी को अपनी ज़िंदगी अभिशप्त सी लगती है । वह अतीत और वर्तमान के द्वंद्वमय वातावरण में जीवन यापन करती है ।

वैवाहिक जीवन में आने वाली समस्याओं के कारण जब पुनर्विवाह किया जाता है तब समस्याएं और भी विकट रूप धारण कर लेती हैं ।

"कील और कसक" कहानी में लेखिका ने पति से उपेक्षित पत्नी की विवशता को मनोवैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत किया है। शादी की प्रथम रात्री से लेकर रानी अपने पति के लिए परायी है। पति का लक्ष्य दिन-रात मेहनत कर अपना कर्ज पूरा करना है जिस कारण वह पत्नी की भाव संवेदनाओं को उपेक्षा कर अपने लक्ष्य प्राप्ति में ही लगा रहता है।

प्रेम की प्यासी रानी पड़ोसी शेखर की ओर आकृष्ट हो जाती है। रानी अपनी इच्छा के अनुसार शेखर को भोजन बना कर खिलाती है और शेखर द्वारा प्रशंसित होती है। शेखर के मुंह से प्रशंसा के शब्द सुन कर विश्वास से प्रशंसा के लिए तड़पता "मन पुलक उठता है हाथों की गति बढ़ गई और एक बार उसने सकोच से सामने बैठे व्यक्ति पर उड़ती सी नज़र डाली।[1]" पति से वांछित प्यार के अभाव में रानी को जब शेखर का प्यार मिलता है तो वह पूर्ण रूप से तृप्त हो जाती है। लेकिन शेखर का प्यार और लगाव अल्पकाल तक ही रहता है क्यों कि उसकी शादी हो जाती है रानी अब शेखर की ओर से भी उपेक्षित हो जाती है। ईर्ष्या और दु:ख से उसका मन कुण्ठित हो जाता है। छोटी-छोटी बातों को लेकर वह शेखर की पत्नी से झगड़ने लगती है। शेखर द्वारा अपना विवाह कर लिए जाने पर रानी की विकृतियाँ उसकी हीन-भावना के रूप में प्रकट होती है "सेक्स की अतृप्ति नारी को कितना कुण्ठित और हीनता ग्रन्थियों से कितना ग्रस्त कर देती है, रानी के चरित्र के माध्यम से इसे पूरी मार्मिकता के साथ देखा जा सकता है।[2]"

---

1. मन्नू भण्डारी - कील और कसक, मैं हार गई - पृ.116
2. सुशीला मीत्तल - आधुनिक हिन्दी कहानी में नारी की भूमिकाएं - पृ.186

लेखिका ने नारी मनोविज्ञान का प्रश्रय लेते हुए नारी की मानसिकता का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया है ।

"दरार भरने की दरार" में मन्नू भण्डारी ने नारी की अस्थिर मानसिकता के कारण वैवाहिक जीवन में पड़ने वाले दरारों का सार्थक चित्र खींचा है । श्रुती दी और उनके पति दोनों दो स्तर के है । दोनों के विचार और मान्यताएं आपस में मेल नहीं खाते परिणामस्वरूप पति-पत्नी एक दूसरे से अलग रहने को सोचते हैं । दोनों के बीच मिलाप का काम करती है मंदी । मंदी श्रुति दी की सहेली है वो उनसे बहुत छोटी है फिर भी बहुत समझदारी के साथ श्रुति दी की समस्याओं को वह हल करती है । पति से अलग रहने का सुझाव मंदी ही देती है । श्रुति दी के कहे अनुसार मंदी उनके लिए घर का इन्तजाम भी करती है । लेकिन ऐन वक्त पर श्रुति दी के विचार बदल जाते हैं । दोनों पति-पत्नी समझौते की अन्तिम सीढ़ी तक पहुंच जाते हैं और दोनों फिर से एक नयी जिंदगी जीने को तय कर लेते है श्रुति दी और उनका पति समझौता कर एक हो जाते है और अवाक् रह जाती है मंदी । अपने नये जीवन संवारा देख कर श्रुति दी खुश होकर मंदी को एक उपहार देती है जिसे पाकर उसे लगता है "जैसे बच्चे को पहले कोई बहुत बड़ा अच्छा आश्वासन दे और फिर एक दो टॉफी से बहला कर चलता बने"।[1]

(ख) उषा प्रियम्वदा की कहानियाँ और वैवाहिक समस्यायें

लेखिकाओं में उषा प्रियम्वदा ने भी बड़ी सफाई के साथ वैवाहिक जीवन की समस्याओं को उभारा है। उषा प्रियम्वदा की कहानी "जाले" में पति-पत्नी के जीवन संबंधी नयी मान्यताओं का स्पष्टीकरण हुआ है ।

1. मन्नू भण्डारी - दरार भरने की दरार?, त्रिशंकु - पृ.64

नायिका कौमुदी स्वतंत्र ऐसा आत्मनिर्भर नारी है जो जीवन को अपनी स्वतंत्र रूप से जीना चाहती है। उसके अनेक पुरुष मित्र हैं जिनसे उसका अच्छा संबंध है। "लेकिन उनकी पत्नियों की संकुचित जीवन परिधि, उनकी असमय वृद्धावस्था और जिद्दी बच्चों को देखकर वह मन ही मन सिहर उठती है। किसी पुरुष की देखभाल, कि कमीज में बटन है कि खाना समय से बन गया है, कि कमरे साफ सुथरे हैं, इन सबसे अपना ठहरावदार यौवन छोटा सा घर और अपनी स्वतंत्रता कौमुदी को अत्यधिक प्यारी और मूल्यवान लगती है।[1]" लेकिन यही कौमुदी अपने प्रोफेसर राजशेखर से प्रेम विवाह कर लेती है। विवाह के पश्चात उसके दायित्व बढ़ने लगते हैं और उसकी स्वतंत्रता धीरे धीरे क्षीण होने लगती है। उसके पुरुष मित्रों की संख्या धीरे धीरे घटने लगती है। कौमुदी को बहुत जल्दी ही अपने वैवाहिक जीवन में घुटन का अनुभव होने लगता है। परतंत्रता की बेड़ियाँ उसके जीवन को एक सीमित दायरे में आबद्धित कर देती हैं। उसे लगता है कि विवाह के बंधन ने उसके स्वतंत्र जीवन पर अंकुश लगा दिया है। मात्र कौमुदी को ही नहीं प्रोफेसर राजशेखर को भी ऐसा अनुभव होता है। "उन्हें लगता है कि जैसे जीवन मकड़ी के जाले में घिर कर रह गया है। उसके तार दूर से बहुत सुकुमार बहुत आकर्षक लगते हैं पर एक बार उसमें फंस जाने के बाद निवृति की कोई आशा ही नहीं"[2]।

इस कहानी में वैवाहिक जीवन की असंतुष्टता एवं जड़ता व्यक्त हुई है। कौमुदी के लिए प्रोफेसर राजशेखर एक अनिवार्य आवश्यकता बन जाते हैं लेकिन उनसे परिणय के सूत्र में बंधने के पश्चात उनके प्रति लगाव व आकर्षण धूमिल होने लगता है।

---

1. उषा प्रियम्वदा, जाले, जिंदगी और गुलाब के फूल - पृ.90
2. वही - पृ.49

पति - पत्नी के बीच उठने तनाव एवं पति की विचित्र मानसिकता को लेखिका ने "स्वीकृति" कहानी में चित्रित किया है । वैवाहिक जीवन में औपचारिक रूप से बंधे हैं सत्य और उषा । उषा आम पत्नियों की तरह विवाह के सारे सुख भोगना चाहती है लेकिन सत्य उषा को उन सुखों से वंचित रखता है । उषा सत्य से अलग एक दूसरी जगह नौकरी करती है वहाँ उसकी मुलाकात वाम नाम के एक व्यक्ति से होती है । पति की ओर से उपेक्षित उषा को जब वाम का सहारा मिलता है तो वह उसकी ओर आकर्षित हो जाती है लेकिन दोनों के बीच कोई अवैध संबंध नहीं होता । सत्य की निष्ठुरता परोक्षतः उसके प्रति बरकरार रहती है । वाम से उषा का संबंध सत्य जानता है या नहीं इसका कहीं कोई संकेत नहीं है ।

सत्य उषा को लेकर एक निर्जन स्थान में वर्षगांठ मनाने जाता है जहाँ जाने से या तो संबंध दृढ़ हो जाता है या टूट जाता है । उस निर्जन स्थान में पहुँच कर उषा सब कुछ सत्य को बता देना चाहती है । लेकिन सत्य उसे कुछ कहने से रोकता है । वह उषा से वापस लौटने की बात करता है । सत्य के ऐसे व्यवहार से ऐसा आभास होता है कि वह उषा से संबंध तोड़ने के लिए ही उसे निर्जन स्थान पर ले आया है ।

सत्य का व्यवहार बहुत ही क्रूर एवं अस्वाभाविक लगता है । सत्य जैसे पुरुषों के कारण स्त्रियों का जीवन नरक तुल्य हो जाता है । विवाह के पश्चात् पत्नियों को उनके अधिकारों से वंचित रखना उनके प्रति अन्याय ही नहीं बल्कि उनके अस्तित्व को नकारना भी है ।

समझौते के अभाव में पति-पत्नी के जीवन में उठने वाली समस्याओं को लेखिका ने नये मूल्य के साथ "दृष्टि दोष" कहानी में प्रस्तुत किया है । चन्द्रा और सामन्त पति-पत्नी हैं । दोनों दो वर्गों का

प्रतिनिधित्व करते हैं । चन्द्रा आधुनिक विचारों वाली नारी है इसके विपरीत साम्ब परम्परागत मान्यताओं एवं परम्परागत रीति-रिवाजों का अनुकरण करता है । साम्ब से चन्द्रा का ब्याह उसकी पदवी के कारण ही संपन्न हुआ था । विवाह के पश्चात् चन्द्रा को लगता है कि उसके सपनों का अन्त हो गया है, क्योंकि साम्ब अपने परिवारवालों द्वारा नियन्त्रित है ।

साम्ब और चन्द्रा का एक बेटा होता है जिसका नामकरण भी साम्ब के परिवार वालों के इच्छानुसार होता है । नाम की खिल्ली उड़ाते हुए चन्द्रा कहती है तुम्हारी माँ को ऐसे ही नाम सूझते हैं स्कन्द साम्ब साम्ब और चन्द्रा के बीच विचारों का खंडन होता ही रहता है । परिणामस्वरूप दोनों अलग अलग जीवन बिताने को मजबूर हो जाते हैं । चन्द्रा एक जगह नौकरी कर स्वतंत्र जीवन यापन करती है चन्द्रा की सहेली है मधुर जो चन्द्रा के समक्ष जीवन की एक हकीकत को स्पष्ट करती है । मधुर एक विवाहित पुरुष से प्रेम करती है । उसकी खुशी एवं प्यार के लिए वह चिरकाल से सुरक्षित अपना कौमार्य त्याग देती है । एक अनजान और पराये व्यक्ति के प्रति इस कदर त्याग और प्रेम की भावना को देख कर चन्द्रा की आँखें खुल जाती हैं । वह अपने गर्व, अहं को त्याग कर पति के पास लौट जाती है और पति आनन्द के साथ उसे स्वीकार कर लेता है ।

साम्ब और चन्द्रा के जीवन की समस्याएं उनकी अपनी बनायी हुई है । समझौते का अभाव ही उनके जीवन में समस्याएं उत्पन्न करती है ।

(ग) दीप्ति खंडेलवाल की कहानियों में वैवाहिक समस्यायें

दीप्ति खंडेलवाल की अधिकांश कहानियाँ पति-पत्नी के टूटते-बिगड़ते संबंधों पर ही केन्द्रित है । "वह तीसरा" अहंग्रस्त पति-पत्नी के तनावग्रस्त जीवन को स्पष्ट करनेवाली एक लम्बी कहानी है। रंजिता और संदीप प्रेम विवाह करते है लेकिन विवाह के पश्चात् प्रेम क्षीण होने लगता है। क्योंकि उन दोनों के बीच एक "तीसरा" उभर आता है और वह है उनका अहं जो एक दूसरे के बीच खाइयाँ बनाता है । रंजिता चाहती है कि संदीप अपने अहं को कुछ कम करें जब कि संदीप अपनी जिद से टस से मस नहीं होता । रंजिता भी कम अहंग्रस्त नहीं है।प्रेम करते समय उसका सिर संदीप के सीने पर झुकता था लेकिन संदीप के जिद के समक्ष कभी वह झुकना नहीं चाहती । विवाह के कुछ समय बाद ही दोनों में मनमुटाव होता है।एक दूसरे के पास होते हुए भी दोनों फासले का अनुभव करते हैं । एक बार संदीप कहता है "आज आफिस में कितनी बक-बक होगयी, मैं भी झुकने वाला नहीं हूँ,सारे मेरा बिगाड़ क्या सकते हैं । संदीप का आहत दर्प बोल रहा था हाँ, तुम क्यों झुकोगे ? मैं ने एक व्यंग्य और किया आज मेरी बारी थी न । मैं संदीप की चोट को सहला सकती थी । मैं उनके आहत दर्प पर मरहम लगा सकती थी मैं उन्हें बाहु में समेट सकती थी लेकिन मैं ने ऐसा किया नहीं, कर नहीं सकी .... या करना नहीं चाहा । उस अहं नागिन की तृप्ति के अतिरिक्त मैं ने कुछ नहीं किया । संदीप कई बार, डंस चुके थे आज डंसने की बारी मेरी थी ।[1]" इस प्रकार परस्पर एक-दूसरे को डंसते-डंसते संदीप और रंजिता एक छत के नीचे रहते हुए भी, एक पलंग पर सोते हुए एक दूसरे के लिए अजनबी बने रहते है । संदीप चाहता है कि रंजिता परम्परागत नारियों के समान झुके,

---

1• दीप्ति खंडेलवाल, वह तीसरा, वह तीसरा - पृ•20-22

उसकी हाँ में हाँ मिला दे, जैसे दासी माँ करती है लेकिन नीला आधुनिक एवं शिक्षित नारी है जिसे अपने अस्तित्व पर संदीप के समान ही गर्व है। स्नेह के संबंध जब अहं के शिकार बन जाते है तब पति पत्नी भी अजनबी बन जाते हैं।

ऐसे ही एक अहंग्रस्त पति-पत्नी हैं "संधि-पत्र" का रोहित और सोमा। सोमा आधुनिक विचारों वाली आत्मनिर्भर नारी है।अपने पति के अवैध संबंधों को जानकर भी सोमा अनजानी बनी रहती है। लेकिन इसके विपरीत रोहित सोमा के बनाव-श्रृंगार, भड़कीले वस्त्र आदि का सूक्ष्म निरीक्षण करता है। सोमा नहीं चाहती है कि रोहित उसके व्यक्तिगत मामलों पर हस्तक्षेप करे। क्योंकि वह रोहित की निजी मामलों में दखल नहीं देती है। एक बार सोमा अपने अफसर मिस्टर वर्मा के साथ सिनेमा देखने जाती है इस पर रोहित उसे बुरा-भला कहता है। सोमा नाराज होकर घर से निकल जाती है कुछ समय बाद रोहित को अपनी गलती का एहसास होता है उसकी आत्मा उसे धिक्कारती है "यह स्वयं का ऐसा अधिकार तुमने भी सोमा को दिया है ? क्या सोमा को तुमने कभी चाह कुछ दिखाई है[1]।" सोमा और रोहित को एक दूसरे का अभाव खटकने लगता है वह रात को घर लौट आती है और रोहित से यह कह कर समझौता कर लेती है कि "मेरे लिए एक मात्र पुरुष तुम नहीं रोहित लेकिन शायद .... शायद मेरे पुरुष तुम्हीं हो, रोहित भी यही कहता है "मेरी एक मात्र नारी तुम नहीं सोमा, किन्तु मेरी नारी शायद तुम्हीं हो[2]।"

---

1. दीप्ति खण्डेलवाल - संधि पत्र-वह तीसरा - पृ.51

2. वही - पृ.53

इस कहानी में आधुनिक पति पत्नी के बीच पड़नेवाले दरारों का सूक्ष्म अंकन हुआ है । पत्नी पर अधिकार जमाने की अपनी आदिम मानसिकता का कोई पति कभी त्याग नहीं सकता ।

"मोह" कहानी में सविता और सुदीप का एक सुखी पारिवारिक जीवन है। सविता पत्नी और माँ बन के अपने सारे दायित्वों को निभाती है । एक बार सफर में सविता की मुलाकात आशिष से होती है और यह मुलाकात मोह में परिणत हो जाती है । आशिष परिवार का एक सदस्य बन जाता है। एक विशेष प्रकार का लगाव, सुनापन, अपनापन की भावना सविता को आशिष के प्रति होती है । आशिष सविता के वस्त्रों की, उसके सौन्दर्य की, उसके हाथों से बने भोजन की बड़ाई कर सविता को खुश करता है जब कि पति सुदीप को न तो सविता के वस्त्रों का ध्यान रहता है और न ही वह उसके सौन्दर्य की अभ्यर्थना ही करता है । सविता सोचती है "सुदीप से चीख कर पूछें - तुम, तुम क्यों नहीं कहते यह सब लेकिन रोष से फड़कते अपने होठों को एक स्निग्ध मुस्कान से ढक कर चुप रह गई ।"[1]

एक बार सविता के बीमार पड़ने पर आशिष तीन चार दिन की छुट्टियाँ लेकर उसकी सेवा करता है जब कि सुदीप से आग्रह करने पर वह नहीं सकता । सविता को आशिष का मोह और स्नेह असमंजस में डाल देता है । उसे लगता है कि आशिष के प्रति उसका मोह एक भारतीय कुलवधू की हैसियत से पाप है क्योंकि पत्नीत्व और मातृत्व का पूरा सुख उसे अपने पति से मिला है "लेकिन पाप की कोई ग्लानि मन में कहीं भी तो नहीं ...... एक निर्दोष मोह के अतिरिक्त यह कुछ भी तो नहीं है लेकिन यह मोह निर्दोष नहीं । इस मोह में डूब कर मैं ने अपने सारे संबंधों को फिर से अपनाया है

---

1. दीप्ति खंडेलवाल - मोह, वह तीसरा - पृ.56

यह मोह जैसे एक शक्ति है ..... सारी स्थूलता से परे एक ऐसी सूक्ष्मता जिसकी तलाश शायद हर सचेतन नारी मन को होती है ।[1]

"मोह" एक ऐसी कहानी है जहाँ पति-पत्नी के चरमराये हुए संबंधों की ओर इशारा किया गया है । पत्नी बनने के बाद स्त्री के प्रति पुरुष का लगाव कुछ कम हो जाता है अर्थात् उनके बीच औपचारिकता नहीं के बराबर रह जाती है । आशीष एक गैर पुरुष है जो औपचारिकतावश सविता के साथ पेश आता है जब कि संदीप अपनी पत्नी के साथ औपचारिक रूप से प्रेम दर्शा कर अपने दृढ़ संबंध को छोटा नहीं करना चाहता है । लेकिन कहानी की यह विडंबना है कि पत्नी पति के इस भाव को समझ नहीं पाती, अगर समझती भी है तो उसे गले के नीचे उतार नहीं पाती ।

दाम्पत्य जीवन में पुरुषों की कायरता की वजह से उठनेवाली समस्याओं को दीप्ति जी ने "प्रेत" कहानी में रेखांकित किया है । शादी की प्रथम रात्री से ही नीलिमा को भविष्य के प्रति संजोये सारे सपने टूटते नजर आते हैं । नीलिमा के सारे अरमान उस छोटी सी कोठरीनुमा कमरे में बिखर जाते हैं । प्रथम रात्री से ही उसे अपने आनेवाली नयी जिंदगी की रूप रेखा मिल जाती है । नीलिमा को पति का प्यार मिलता है वह भी बहुत सीमित क्योंकि अविनाश माँ के कहे अनुसार ही पत्नी से मिलता और उसे खुश करता है । अविनाश पर और घर पर माँ का कठोर नियन्त्रण है । नीलिमा को ऐसे घुटन भरे परिवार में छटपटाहट होने लगती है । अविनाश पति होते हुए भी पति के कर्तव्यों से विमुख है । माँ के दकियानूसी विचारों के आगे वह पत्नी की संवेदनाओं को रौन्द देता है । माँ को खुश करने के लिए एक बार अविनाश अपनी नयी नवेढा दुल्हन पर हाथ उठाता है । 'नीलिमा न रोई न चीखी, स्थिर कदमों से आकर उसी खटिया पर बैठ गई ।

---

1. दीप्ति खंडेलवाल - मोह, वह तीसरा - पृ. 59

जिस पर अविनाश की भुजाओं से गोली थी, उसके चारों ओर तानपूरे के टुकड़े बिखर गये थे और हर टुकड़ा कराह रहा था सखी री मुझे मन के गीत मिले ।[1]"

अस्तित्वहीन पुरुषों की कायरता के परिणामस्वरूप नारी की विवशता और मजबूरी की कराह इस कहानी के मूल में है । पुरुष के सामने माँ और पत्नी के बीच होने वाला संघर्ष सवाल खड़ा कर देता है माँ को खुश करने के लिए पत्नी के प्रति अत्याचार करना वास्तव में पुरुष की कायरता का ही परिचायक है परन्तु ऐसे पतियों के साथ जीते हुए नरक यातना का भोग करनेवाली स्त्रियों की संख्या भी कम नहीं है ।

दाम्पत्य जीवन की एकरसता एवं उबाहट के विभिन्न रूप को लेखिका ने बौना कहानी में व्यक्त किया है । सुधीर और प्रतिमा की जिंदगी में एक प्रकार का नकारात्मक बोध है जिंदगी में सब कुछ होते हुए भी कुछ नहीं का बोध हमेशा उन्हें सालता रहता है । "जीवन में कार और बंगले की हैसियत है केवल एक बेटी है । प्रतिमा की आँखों में आकाश के रंग हैं सुधीर की बुद्धि में मूल्यों की चेतना है । और फिर भी एक 'कुछ नहीं' प्रतिमा और सुधीर के बीच टंगी तलवार की लटकती रहती है । यह तलवार चलती है । बस ही रक्त बिखर जाता है .... तलवार को उठा कर कोई फेंक नहीं पाते .... शायद उठाकर फिर बीच में टांग लेते हैं ।[2]" पारस्परिक समझौते के अभाव में सुधीर और प्रतिमा एक दूसरे को पहचानने की कोशिश नहीं करते । दोनों में अहं की भावना है लेकिन सुधीर में पुरुष होने का अहं कुछ ज्यादा है । अपने अहं एवं निरर्थक मान्यताओं के कारण वह पारिवारिक सन्तोष को खो बैठता है ।

1· दीप्ति खंडेलवाल - प्रेम, वह तीसरा - पृ·70

2· वही - पृ·108

प्रतिभा आदर्श पत्नियों की तरह सुधीर के प्रति अपने सारे कर्त्तव्यों को निभाती है। फिर भी उसके जीवन में एक विराट शून्यता समायी रहती है। सुधीर प्रतिभा के कर्त्तव्य एवं उसकी त्याग की भावना को अनदेखा कर उसके अस्तित्व पर आघात करता है। मिसेज साहनी क्या बढ़िया काफी बनाती है यह सुन कर प्रतिभा का सर्वांग जल जाता है। ईर्ष्या से नहीं बल्कि वह सोचती है सुधीर क्यों नहीं उसकी बनायी काफी के स्वाद में डूब पाते हैं। सुधीर से बदला लेने के उद्देश्य से वह कहती है कि अंजना भाभी भी कितनी खुश किस्मत है वह एक साल केलिए फोरन जा रही है भैया के साथ। यह कह कर वह अपने पर लगे आघात का बदला ले लेती है। यह आघात तीखे बाण की तरह सुधीर पर चुभता है। ईर्ष्या और क्रोध से सुधीर भयानक हिंस्र पशु की तरह हो जाता है। पति का ऐसा भयंकर रूप देख कर प्रतिभा सुधीर के समक्ष झुक जाती है लेकिन सुधीर न अपनी गलती स्वीकार करने को तैयार रहता है और न ही समझौता करने को।

अत्यधिक अहं और गहरा अस्तित्व बोध होने के कारण सुधीर जैसे पुरुष अपने पारिवारिक जीवन को, समस्याओं का जमघट बना देते हैं।

(ख) मृदुला गर्ग की कहानियों में वैवाहिक संबन्ध

मृदुला गर्ग ने "उसकी कराह" कहानी में आधुनिक दाम्पत्य जीवन के खोखलेपन को उजागर किया है। सुधा मृत्यु शैया पर पड़ी है और उसका पति सुमित अपनी नयी खुली फैक्टरी के उत्पादन के प्रति चिन्तित है। वह सोचता है "उसकी बीमारी आयी भी गलत समय पर है। अभी-अभी उसने नौकरी छोड़ कर साइकिलों की फैक्टरी लगायी है। अगर इस वक्त उसकी देखभाल नहीं करे तो सारा पैसा डूब जायगा। अगर सुधा चार-छह महीने बाद

बीमार पड़ती तो बात और होती।[1]" बहू को मृत्यु शैया पर लेटे देख कर सास जी दूसरी बहू लाने का निश्चय करती है ।

आधुनिक युग में रिश्ते नाते सब अर्थ और स्वार्थ के बलबूते पर टिके है। सुमित के लिए सुधा से भी बढ़ कर उसकी फैक्टरी है । संबंधों की शिथिलता इस कहानी में विशेष रूप से उभर कर आयी है ।

"मिसेज़ आॅफ दी डेमी" कहानी में लेखिका ने वैवाहिक जीवन की समस्याओं को नये सिरे से प्रस्तुत किया है । नायिका मिसी शिक्षित के क्रूर प्रहार से पीड़ित नारी है। मिसी का प्रेम विवाह होता है लेकिन विवाह के पश्चात् सब कुछ उसका शराबी पति नष्ट कर देता है । जीवन के सारे अभावों को वह हंस कर छुपा लेती है। मिसी की हंसी के पीछे गम का गहरा बोझ है यह कोई नहीं जानता । असंतुष्ट वैवाहिक जीवन के समस्याग्रस्त होने पर भी वह समाज के सामने अपने को सुखी साबित करती है ।

मिसी जैसी स्त्रियाँ समाज में विरले ही मिलती हैं । पति के पियक्कड़ होने के बावजूद भी वह उसके साथ समझौते का जीवन बिताती है

{ङ} निरूपमा सेवती की कहानियों में वैवाहिक समस्यायें

निरूपमा सेवती ने भी अपनी कहानियों में वैवाहिक जीवन की विडम्बनाओं को सूक्ष्मता के साथ उभारा है। "सुनहरे देवदार" के पति-पत्नी किसी कारणवश तलाक लेते है । दोबारा तीन साल बाद जब दोनों की भेंट होती है तो दोनों एक दूसरे के करीब आना चाहते हैं । नायक सोचता है "दौड़ कर रश्मि को अपनी ओर से अपनी बाहों में भर लें कि उसके होंठ चीख की

1. मृदुला गर्ग - उसकी कराह, टुकड़ा-टुकड़ा आदमी - पृ.115

मुद्रा में उसी मोलेपन से खुले रह जायें।[1]" लेकिन नायक ऐसा नहीं कर पाता क्योंकि दोनों के बीच अब कोई संबन्ध नहीं रह गया है। नायक को जब पता चलता है कि उसकी पत्नी विवाहिता है तो वह आपे से बाहर हो जाता है पत्नी को भला-बुरा कह कर अपने आप को कोसता हुआ निकल जाता है।

आधुनिक स्त्री पुरुष का मानसिक धरातल कितना कमजोर है इसका ज्ञान उक्त कहानी द्वारा मिलता है। एक बार तलाक लेने के बाद पुन: जुड़ने का आग्रह निराधार और बचपना लगता है। छोटी-मोटी बातों को लेकर पति-पत्नी तलाक लेने को तैयार हो जाते हैं तत्पश्चात बीते हुए लम्हों को ताजा कर पुन: उनमें खो जाने का प्रयास करते हैं। परन्तु यह सब व्यर्थ मात्र है। खामोशी को पीते हुए "कहानी में एक पत्नी और माँ की विवशता को प्रस्तुत किया गया है। कहानी की नायिका एक माँ है लेकिन अपनी संतान के लिए मात्र वह आंटी है क्योंकि पति से उसका संबंध विच्छेद हो चुका है"शायद यही है कि मैं एक सही माँ भी नहीं हूँ, यह सबसे बड़ा ममता का रूप भी मुझमें नहीं है जो आशु को अपने पास से खोये दे रही हूँ, न ठीक पत्नी और न ठीक माँ।[2]"

नायिका का पति अर्थ संपन्न व्यापारी होता है और नायिका गरीब घराने की एक लड़की। दोनों दो वर्ग के हैं जिस कारण उनके विचार आपस में मेल नहीं खाते। परिणाम स्वरूप दोनों अलग जिंदगी जीने को बाध्य हो जाते हैं।

---

1. निरुपमा सेवती - तुम्हारे देवदार, खामोशी को पीते हुए - पृ.2
2. निरुपमा सेवती - खामोशी को पीते हुए, खामोशी को पीते हुए - पृ.121

पति-पत्नी के ऐसे उलझे हुए संबंधों के बीच लटके रहते हैं, बेचारे मासूम से बच्चे। उन्हें न माँ की ममता मिलती है और पिता का प्यार। ऐसे बच्चे बचपन में वांछित प्यार के अभाव में गुमराह हो जाते हैं।

(च) मेहरुन्निसा परवेज की कहानियों में पति पत्नी

मेहरुन्निसा परवेज ने पति-पत्नी के संबंधों की अस्थिरताहीन को नये सन्दर्भ में नये ढंग से "खामोशी की आवाज" में स्पष्ट किया है। अनु और रमेश दोनों भिन्न-भिन्न स्वभाव वाले हैं। अनु बहुत ही चंचल और मस्ती पसंद नारी है जब कि रमेश बहुत ही शान्त मिजाज वाला पुरुष। रमेश के साथ अनु दोहरे व्यक्तित्व को लेकर जीती है। अनु और रमेश के जीवन में समस्याओं की चिनगारियों को भड़काने के लिए आती है अनु की एक सहेली। वह अनु के कमजोर पक्ष को सामने रख कर रमेश को अपनी ओर आकर्षित करने का प्रयास करती है "रमेश के हर बात में हर समय झूठे ही सहमियत देना मुझे अच्छा लगता था। शायद यह मेरे मन की कमजोरी थी या मैं अनु की सुख न गृहस्थी की आग में अपने हाथ सेंकना चाहती थी।"[1]

अनु रमेश से संबंध विच्छेद कर स्वतंत्र जीवन बिताती है लेकिन वह अपने स्वतंत्र जीवन में नाखुश है। उसे टूटने और बिखरने का अहसास होता है। एक बार अनु अपनी सहेली से मिलती है। वह उसके सामने अपने जीवन की निजता से उस सच्चाई का पर्दाफाश करती है। जिसे वह चिरकाल से अपने अन्दर छुपा रखी थी। वह कहती है "मेरे सपनों की चोरी तुमने की है

---

1. मेहरुन्निसा परवेज - खामोशी की आवाज, टहनियों पर धूप - पृ.88

पर अब वह भ्रम भी नहीं रहा .... अच्छा ही हुआ जिन तिनकों को मैं बिखेर आई, तुमने उन्हें सहेज लिया ...... मुझे गृहस्थी टूटने का कोई दुःख नहीं है, वह तो होना ही था, मुझे मेरा विश्वास के झूठे हो जाने का दुःख है।[1]"

दाम्पत्य जीवन के टूटने का प्रमुख कारण समझौते का अभाव और कोई 'तीसरे' का आगमन है। जब पति-पत्नी के जीवन में समझौते का अभाव रहता है तभी कोई तीसरा उनके जीवन में कदम रखने का साहस करता है। इस कहानी में इसी सत्य को लेखिका ने उभारा है। तीसरे के आगमन में परिणामस्वरूप तबाह होती एक निस्सहाय स्त्री की सिसकियाँ कहानी में गूंजती हैं।

विवाहेतर स्त्री पुरुष संबंध और समस्याएं

वर्तमान समाज में वैवाहिक जीवन की परिणति प्रायः ऊब और एकरसता की भावना में हो रही है। विवाह के कुछ दिनों अथवा कुछ महीनों पश्चात् विवाह पूर्व संजोये सारे सपने डगमगाने लगते हैं। परिणामस्वरूप पति-पत्नी के जीवन में एक प्रकार की नीरसता और शिथिलता का आविर्भाव हो जाता है और उनमें आपसी दायित्व की भावना भी क्रमशः घटने लगती है। फलतः किसी तीसरे की ओर उनके लगाव के अनभिज्ञ सन्दर्भ आते जाते रहते हैं। कभी-कभी परिस्थितिवश वे "तीसरे" से नया संबंध जोड़ भी लेते हैं। प्रत्येक नये संबंध के शुरू होने के पश्चात् पुराने संबंध अस्तित्वहीन से लगते हैं, पर पूर्ण रूप से वे टूटते भी नहीं। क्योंकि विगत संबंधों की

---

1. मेहरुन्निसा परवेज, खामोशी की आवाज, खामोशी की आवाज - पृ.77

प्रतिध्वनियों से वे बराबर घिरे रहते हैं, चाहकर भी वे उन प्रतिध्वनियों के घेराव से मुक्त नहीं हो पाते ।

विवाहेतर स्त्री-पुरुष संबंध हमारे समाज में विशेष कर महानगरों में अति साधारण माने जाते हैं, क्योंकि इसे वे लोग आधुनिकता के अनुकूल मानते हैं । आधुनिक विख्यात लेखिका कमलादास ने अपने लेख में जीवन के निजी अनुभवों के अनुसार यह सिद्ध किया है कि हमारे समाज में 96 % पुरुष और 73 % महिलाएं विवाहेतर संबंध रखती हैं ।

विवाहेतर स्त्री-पुरुष संबंध पति-पत्नी के संबंधों की असारत्वहीनता एवं खोखलेपन को दर्शाते हैं। विवाहेतर संबंधों के पीछे जो मानसिकता है वह कई प्रभावों से बनती दिखायी पड़ती है । एक ओर अतृप्त काम वासना है तो दूसरी ओर मनचाहे प्रेम की प्राप्ति का अभाव है । बड़े-बड़े शहरों में स्त्री-पुरुष नये अनुभव और थ्रिल के लिए विवाहेतर संबंध रखते हैं । वैसे इनमें परम्परागत आत्म समर्पण की भावना नहीं के बराबर रहती है ।

लेखिकाओं ने आधुनिक परिवेश से उत्पन्न स्त्री पुरुष की ऐसी विशेष मानसिकता को, उनकी नैतिक विमुखता को भली-भांति अंकित किया है ।

(क) विवाहेतर स्त्री पुरुष संबंध और समस्याएं उषा प्रियम्वदा की कहानियों में

"कितना बड़ा झूठ" कहानी की किरन विवाहिता और दो बच्चों की माँ है। अपना एक सुखी परिवार होते हुए भी वह परिवार से कट कर एकान्त वास करना चाहती है क्योंकि "वह अपने पति विरथ से पूर्णत: ऊब चुकी है, पर केवल दो बच्चियों के कारण परस्पर समझौता सा करके दिन

बिता रही है । ऊब तथा एकरसता को तोड़ने के लिए वह विवाहेतर काम संबंध भी रखती है ।[1] इसमें किरन को अपने विवाहेतर संबंध से निराशा ही हासिल होती है क्योंकि उसका प्रेमी मेक एक अन्य लड़की से विवाह कर लेता है । किरन न तो मेवल की बेवफाई पर प्रश्न कर सकती है और न ही उस पर किसी प्रकार का आरोप लगा सकती है । क्यों कि किरन एक पत्नी और माँ है वह अपने आक्रोश को अन्दर ही अन्दर पीकर कुंठित सी हो जाती है ।

विवाहेतर स्त्री-पुरुष संबंध को उजागर करनेवाली मेहिला की श्रेष्ठ कहानी है 'प्रतिध्वनियाँ'। प्रतिध्वनियाँ की नायिका वसु पति के अंकुश से बाहर निकल कर नित-नये पुरुषों के बाहों में झूलती है। एक समय ऐसा आता है जब वह अपने वर्तमान से ऊब कर अतीत की दुनिया को संवारना चाहती है लेकिन वह जानती है कि इसके ये उसका पति तैयार नहीं है । वसु जीवन की सारी खुशियों को रौंद कर उच्छृंखल जीवन बिताने को मजबूर हो जाती है ।

"ट्रिप" कहानी में एक पत्नी पति की हाजिरी में, पति के इच्छानुसार एक तीसरे व्यक्ति से संबंध जोड़ती है । सोनी का पति एक प्रोफेसर है जो दिन रात पेय पदार्थों के नशे में डूबा रहता है । इन नशीले पेय पदार्थों के समक्ष न बीवी है, न बच्चे । प्रोफेसर के विचार बहुत ही सेक्शन्स हैं । उसके अनुसार वैवाहिक जीवन का अन्तिम चरण 'अन-रोमैन्टिक' होता है जिस कारण वह अपनी पत्नी से किसी प्रकार संबंध जोड़ना नहीं चाहता । परिणामस्वरूप वैवाहिक जीवन में अतृप्ति के कारण पत्नी सोनी स्टीफन नाम के एक व्यक्ति से संबंध स्थापित करती है । प्रोफेसर पत्नी की अवैध संबंध के बारे जानता है । वह पत्नी से दो प्रमुख बातें कहता है - "एक दि वह

---

1. डा॰ वीरेन्द्र सक्सेना, काम संबंधों का यथार्थ और समकालीन हिन्दी कहानी - पृ॰76

अपने अफेयर चुपचाप एडजस्ट करेगी, दूसरे इस आयु में वह नये बच्चे की जिम्मेदारी नहीं लेगी । इसका वह ध्यान रखेगी ।"[1] सोनी बिना विवाह के स्टीफन से अपना संबंध बनाये रखती है ।

इस कहानी में आधुनिक जीवन के विशेष पहलुओं को उभारा गया है जहां परम्परागत संबंध अपना शाश्वत मूल्य खो चुके हैं । पति-पत्नी के संबंध कितने मौतिक और बेमानी हो सकते हैं, इसका सशक्त उदाहरण यह कहानी प्रस्तुत करती है ।

(ख) मृदुला गर्ग की कहानियाँ और विवाहेतर संबन्ध

मृदुला गर्ग ने पति और प्रेमी के बीच उलझी एक पत्नी की विशेष मनोवृत्ति को और उसके अनोखे व्यवहार को "अवकाश" कहानी में उभारा है । महेश और उसकी पत्नी जीवन के दो-राहे पर खड़े हैं। महेश की पत्नी समीर से गहरा प्रेम करती है । पति महेश से तलाक लेकर वह प्रेमी समीर के साथ एक नयी ज़िंदगी शुरू करना चाहती है । महेश के बहुत कहने पर भी वह अपने निर्णय पर अडिग रहती है ।

नायिका प्रेमी समीर के साथ ज़िंदगी को एक नया रूप देना चाहती है तो दूसरी ओर उसे पति को छोड़ते हुए भी उसे दुःख होता है क्योंकि महेश ने उसे जीवन की सारी खुशियाँ दी है, जिस कारण अन्तिम घड़ी में वह अपना सारा प्यार महेश पर उंडेल देती है और कहती है "महेश दुःख मत करना ...... मेरा बेचारा प्यारा महेश .... तुम भी सुखी हो सको मेरी तरह सुखी ।"[2] इस तरह कह कर पति को तन्हाई में छोड़ कर नायिका नयी ज़िंदगी बसाने चली जाती है ।

1. मृदुला गर्ग - अवकाश, टुकड़ा-टुकड़ा आदमी - पृ.40

इस कहानी में आधुनिक नारी की दोहरी मानसिकता एवं अस्थिर विचारों को रूप दिया गया है। ऐसी ही, अस्थिर विचारों वाली नारी है "रुकावट" की नायिका रीता। रीता एक उच्छृंखल नारी है जो स्नेही पति के होते हुए भी मदन नाम के एक दिल फेंक व्यक्ति के प्रेमपाश में उलझ जाती है। जब वह उसके अतीत की लीलाओं को सुनती है, तो उसे अपनी करनी पर बहुत दुःख होता है। वह सोचती है "उसका स्नेही, सज्जन, संवेदन शील पति। ..... उसकी हर इच्छा की पूर्ति करने के लिए तैयार रहता है ..... कोई संशय नहीं, अविश्वास नहीं, अशान्ति नहीं, क्या रखा था इस प्रेम संबंध में।"[1] रीता सोचती है कि अब वह अपने दिल फेंक प्रेमी से मिलेगी नहीं क्योंकि होटल के लिफ्टमैन से लेकर मैनेजर तक उसे पहचानने लगे हैं। लेकिन आते ही पुन उसके विचार बदले जाते हैं। मदन से विदा लेते समय पुनः आने का वादा कर वह चली जाती है।

मृदुला गर्ग की अधिकांश कहानियों का रचना विधान पति-पत्नी के वैवाहिक जीवन की विडम्बनाओं और पत्नियों की उच्छृंखल प्रवृत्तियों पर आधारित है।

मेहरुन्निसा परवेज़ ने पति पत्नी के नये संबंधों को वाणी दी है। "नंगी आँखों वाला रेगिस्तान" की मीरा को अपने अधेड़ उम्र के पति से पिता का स्नेह मिलता है। वांछित प्रेम के अभाव में उसका, अतृप्त, प्यासा मन अमित के आकर्षक व्यक्तित्व की ओर खिंच जाता है। अमित उसे पूर्ण रूप से अपना नहीं पाता। क्योंकि वह एक विवाहित पुरुष और दो बच्चों के पिता है। हालात से मजबूर होकर मीरा एक नयी दिशा की ओर बढ़ती है।

---

1. मृदुला गर्ग - रुकावट, टुकड़ा-टुकड़ा आदमी - पृ.95

भिन्न लेखिकाओं की कहानियों पर विचार करने से लगता है कि विवाहेतर संबन्ध कहीं कहीं परिस्थिति जन्य होता है। कहीं आधुनिकता के कुप्रभाव से जन्म लेता है। महानगरीय संस्कृति इसको पनपने देती है।

प्रेम के आधुनिक स्वरूप को उजागर करनेवाली कहानियाँ

आधुनिक प्रेम के सन्दर्भ में एक बारगी सारे परम्परागत नैतिक मूल्य रूढ हो गये हैं। प्रेम की पुरानी परिभाषा जड हो गई है। वर्तमान जीवन में प्रेम को त्याग और बलिदान की कसौटी में न कस कर जीवन की यथार्थ कसौटी पर कसा जाता है। अत: आज "प्रेम" शब्द एक निरर्थक भाव को व्यक्त करता है। फिर भी यह शब्द जन-जन के मन में मृदु भाव जागृत करता है। प्रेम संबधों में यह परिवर्तन यान्त्रिकता एवं भौतिकता के कारण आया है। मशीनी युग बोध से उत्पन्न हुई जडता एवं निरीहता के अपकारी प्रभाव ने प्रेम संबंधों पर जबरदस्त प्रहार किया है।

श्रीकान्त वर्मा के शब्दों में कहा जा सकता है कि "प्रेम अब भी एक जीवित शब्द है और उसे सुनते हमारी धडकन में एक और ही धडकन भर जाती है। अन्तर केवल इतना है कि अब वह भावुकता से भरा हुआ एक पीला बीमार और एकांगी शब्द नहीं रहा, बल्कि वह एक भयानक मगर मनुष्य के सबसे कीमती अनुभव के रूप में स्पष्ट होता जा रहा है।"[1]

आज के परिप्रेक्ष्य में प्रेम का व्यापक परिवर्तन होने पर भी प्रेम शब्द के मूल में एक संवेदना जुडी हुई है और इसी संवेदना के आधार पर प्रेम रस से हर प्रेमी जोडी अपनी आत्मा को स्निग्धता पहुँचाना चाहती है।

---

1. श्रीकान्त वर्मा - नयी कहानी, दशा, दिशा संभावना (सं.श्री सुरेन्द्र) - पृ.229

परन्तु इस प्रयास में वह असमर्थ है क्योंकि आज के युग में प्रेम करते नहीं, प्रेम का अभिनय करते हैं ।

प्रेम के इस बदलते स्वरूप को लेकर लेखिकाओं ने अनेक कथानकों की रचना की है जिनमें संवेदनाओं से रिक्त प्रेमी-प्रेमिकाओं के संबंध उभर कर आने लगते हैं । कहीं-कहीं यह संबंध शारीरिक आकर्षण के बाहरी पक्ष तक ही आकर रुक जाते हैं । परिवेशजन्य स्थितियों के कारण संबंधों को मन की चारदीवारी के बाहर खड़ा करने के लिए मजबूर नायक नायिकाएं भी कहीं-कहीं दिखायी पड़ते हैं । आज के मूल्यबोध ने मानव के इस नैसर्गिक संवेदना को कितना मटमैला बना दिया है और किस तरह प्रेम एक घटिया और अर्थहीन शब्द बन गया है इसका बहुत ही सशक्त चित्रण कई कहानियों में उपलब्ध होता है ।

(क) मन्नू भण्डारी की कहानियों में प्रेम का आधुनिक स्वरूप

मन्नू भण्डारी की कहानी "चश्मे" में प्रेम के परिवर्तित स्वरूप का प्रभावात्मक चित्रण हुआ है । "चश्मे" का नायक अपने अतीत से घबराता है । जब भी उसे अतीत की स्मृतियाँ आक्रान्त करती हैं वह परेशान हो उठता है । आत्मग्लानि के बोध में वह बौना हो जाता है ।

मिस्टर वर्मा शैल नाम की एक लड़की से प्रेम करता था । दोनों की शादी तक तय हो चुकी थी कि अचानक उसे क्षय रोग हो जाता है । मिस्टर वर्मा धीरे-धीरे शैल के जीवन से दूर होने लगता है । प्रेमी के ऐसे निष्ठुर व्यवहार से शैल पूर्ण रूप से बिखर जाती है । शैल के पिता मिस्टर वर्मा से अपनी बेटी की जिंदगी मांगते हैं लेकिन वर्मा क्षयग्रस्त शैल को अपनी पत्नी बनाने में हिचकता है । शैल की मृत्यु उसी दिन होती है जिस दिन वर्मा और शैल की शादी तय हुई थी ।

मिस्टर वर्मा को अपनी बेवफाई का अहसास ज़रूर होता है जिस कारण वह अपनी पत्नी के साथ सहज ज़िंदगी जी पाने में असमर्थ होता है। जब भी उसे अपनी प्रेमिका की याद आती है उसे लगता है वह समुद्र की अतुल गहराई के अंधकार में डूबता जा रहा है।

इस कहानी में आधुनिक प्रेम की जड़ता, क्षणभंगुरता और स्वार्थपरता का पर्दाफाश हुआ है। मिस्टर वर्मा जैसे अनेक प्रेमी हैं जो प्रेम को मात्र स्वार्थ और भोग के तराजू में तोलते हैं। यही आधुनिक प्रेम का वास्तविक स्वरूप है। आज न संबंधों में गहराई है न रिश्ते पक्के होते है, न वादे निभाये जाते हैं। पल दो पल का साथ देकर सारी देह से संबंध जोड़ का खुशियाँ लूटना ही नये प्रेम का स्वरूप लगता है। पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाव से रंगीन यह मानसिक वृत्ति, संबंधों के खोखलेपन और प्रेम के नाम पर किये जाने वाले स्वार्थ परक व्यवहार पर प्रकाश डालती है। वास्तव में यह मोह है। किसी को लूटने का और तबाह करने का नया तरीका है।

लेखिका की कहानी "आते जाते यायावर" में एक बेवफा प्रेमी की दगाबाजी की कथा है। नरेन एक "फ्लर्ट" किस्म का व्यक्ति है यायावर प्रवृत्ति का नरेन विदेशी सभ्यता से प्रभावित है। नरेन विवाहित है लेकिन किसी कारणवश उसकी पत्नी उसे छोड़ देती है। नरेन अपने आकर्षक व्यवहार से लड़कियों को फंसाता है। इस प्रकार के कृत्रिम दुलार और छद्म प्रेम से ही स्त्रियाँ भटकाव और शोषण की शिकार बनती है। लेकिन आत्म सजग और प्रबुद्ध मिताली नरेन के इस कृत्रिम दुलार से बच निकलती है।

प्रेम के वायवीय स्वरूप का चित्रण इस कहानी में हुआ है। आधुनिक प्रेम संवेदनाओं के धरातल पर न होकर शारीरिक आकर्षण पर आधारित है

सौन्दर्य, मादकता, और अर्थ के अभाव में स्त्री कभी भी प्रेम के क्षेत्र में सफल नहीं हो पाती है ।

प्रेम के एक दूसरे रूप को लेखिका ने यही सच है[1] कहानी में प्रतिष्ठित किया है । मन्नू भण्डारी की यह कहानी प्रेम कहानियों के बीच बहुचर्चित है । कहानी एक प्रेमिका और दो प्रेमियों के बीच उलझी हुई है । नायिका दीपा के दो प्रणय बिन्दु हैं संजय और निशिथ । निशीथ दीपा का किशोरावस्था का प्रेमी था लेकिन किसी कारण वश दोनों में अन-बन हो जाती है ।

दीपा कलकत्ते से कानपुर आती है।रिसर्च करते हुए उसकी जिंदगी में संजय का आगमन होता है । संजय से वह बेहद प्यार करती है । निशीथ के बारे वह संजय से सब कुछ बता देती है और संजय को विश्वास दिलाना चाहती है कि उसका प्रेम बिलकुल ही निराधार था क्योंकि अठारह वर्ष की आयु में किया हुआ प्यार एक प्रकार का पागलपन मात्र होता है ।

दीपा एक इण्टरव्यू के सिलसिले से कलकत्ता जाती है वहाँ उसकी मुलाकात निशीथ से होती है । पहले वह सोचती है कि निशीथ से बदला लेगी । पहले वह सोचती है कि निशीथ को पहचानने से इन्कार कर वह अपने प्रति किये गये अपमान का बदला लेगी । लेकिन वह ऐसा कर नहीं पाती है । क्योंकि उसके दिल की अतल गहराई में अठारह वर्ष में किये गये उस प्रेम की कुछ संवेदनाएं अब भी जाग्रत थी । तभी तो वह सोचती है "निशीथ कितना दुबला पड गया है, लगता है जैसे मन में कहीं गहरी पीड़ा छिपाये बैठा है।

1· मन्नू भण्डारी - यही सच, मन्नू भण्डारी के श्रेष्ठ कहानियाँ - पृ·129

"निशीथ ने अभी तक विवाह क्यों नहीं किया"।[1]

निशीथ दीपा को नौकरी दिलाने केलिए भरसक प्रयत्न करता है। इस दौरान घूमते घूमते दीपा सोचती है कि वह निशीथ को संजय की बात बता देगी, लेकिन दीपा कह नहीं पाती है क्योंकि वह सोचती है कि कहीं निशीथ नौकरी दिलाने में दिलचस्पी कम न कर दे। इसके साथ-साथ अनजाने में उसे निशीथ के प्रति मोह सा होने लगता है। "दीपा के सम्मुख बार-बार संजय के स्थान पर निशीथ की आकृति आ खड़ी होती है और वह सोचने लगती है कि संजय से उसका प्यार का नहीं कृतज्ञता का था। वह उसी कृतज्ञता को ही प्यार समझने लगी। संजय एक पूरक था। वह गलती से उसे प्रियतम समझ बैठी। वह सोचती है कि अब यह बात अच्छी तरह जान गयी है कि प्रथम प्रेम ही सच्चा प्रेम होता है। बाद में किया हुआ प्रेम तो अपने को भूलने का, भरमाने का प्रयास मात्र होता है"।[2] कानपुर लौटते समय निशीथ दीपा को विदा करने के लिए स्टेशन आता है। गाड़ी छूटते ही वह उसका हाथ पकड़ लेता है। दीपा मन ही मन सोचने लगती है कि "मैं सब समझ गयी, निशीथ, सब समझ गयी। जो कुछ तुम इन चार दिनों में नहीं कह पाये वह तुम्हारे इस क्षणिक स्पर्श ने किया"।[3]

कानपुर लौट कर दीपा निशीथ की यादों में खो जाती है। वह बेसब्री के साथ निशीथ के पत्र का इन्तजार करती है। उसे उसका तार आता है कि नौकरी पक्की हो गयी। तत्पश्चात् निशीथ की औपचारिकता भरी लिखी एक चिट्ठी भी उसे मिलती है। वह निशीथ की चिट्ठी में खोयी रहती है। तभी संजय ढेर सारे रजनीगंधा के फूल लिये द्वार पर

---

1. मन्नू भण्डारी - यही सच, मन्नू भण्डारी की श्रेष्ठ कहानियाँ - पृ.130
2. वही - पृ.142
3. वही - पृ.144

खड़ा होता है । वह शून्य दृष्टि से उसे देखती रहती है और दौड़ कर उससे लिपट जाती है "तुम कहाँ चले गये थे संजय" दीपा का स्वर टूटने लगता है । संजय पर दीपा की जकड़ कसती जाती है । रजनी गंधा की खुशबू चारों ओर बिखर जाती है । वह अपने गालों पर संजय के अधरों का स्पर्श महसूस करती है । उसे लगता है संजय के बाहों का बंधन, उसका स्पर्श, उसके साथ बीत रहे क्षण ही सत्य हैं बाकी सब मिथ्या है ।

इस कहानी में लेखिका ने प्रेम के त्रिकोण को नये ढंग से प्रस्तुत किया है। प्रेम के बारे में आधुनिक प्रबुद्ध नारी के मन में जो कशमकश है उसका विवरणात्मक चित्रण इस कहानी में दृष्टिगत होता है । इस कहानी के संबन्ध में लेखिका के विचार इस प्रकार हैं - "एक लड़की को दो युवकों से समान रूप से लगाव, यह स्थित-प्रचलित परम्परा से थोड़ी हट कर है और शायद इसी वजह से यह कहानी एक "बोल्ड अटेम्प्ट" के रूप में बहुचर्चित हुई थी एक साथ दो व्यक्तियों से लगाव और इस स्थिति में दुविधा और अनिर्णय के मानसिक ऊहापोह से गुजरना कोई अनहोनी बात तो नहीं है.............. निर्णय किस ओर जाता है यह और कई बातों पर निर्भर करता है । निर्णय मेरेलिए महत्वपूर्ण नहीं था । महत्वपूर्ण थी वह दुविधामय मानसिक स्थिति[1] ।"

[ख] प्रेम का नया स्वरूप उषा प्रियम्वदा की कहानियों में

आधुनिक प्रेम के बदलते स्वरूप की गवाही उषा प्रियम्वदा की कहानियों में मिलती है । "मोहबंध कहानी में प्रेम के आधुनिक स्वरूप को बड़ी मार्मिकता के साथ प्रस्तुत किया गया है ।

---

1. मन्नू भण्डारी - सुदर्शन नारंग और अशोक अग्रवाल के साथ अंतरंग बातचीत [सारिका, अगस्त 31, 1970] - पृ.20

अल्पा और नीलू दो सहेलियाँ है।अल्पा बहुत ही भावुक एवं आदर्श विचारों वाली है जो देवेन्द्र से प्यार करती है।इसके ठीक विपरीत नीलू रंगीन मिज़ाज की है जो जिंदगी को मात्र आस्वादन के अर्थ में लेती है । जिंदगी का आस्वादन करते करते नीलू अपनी सहेली से उसके प्रेमी को छीन लेती है।अल्पा बेबस पंछी की तरह तड़पती रह जाती है । नीलू की शादी राजन नाम के एक व्यक्ति से होती है लेकिन शादी के बाद भी वह अपने रंगीन मिज़ाज पर काबू नहीं पा सकती है । शादी के पश्चात् उसका संबंध कई पुरुषों से होता है।राजन को अहसास होने लगता हैकि नीलू के जीवन में उसका गौण स्थान है । नीलू की ओर से उपेक्षित राजन अल्पा के करीब आता है और दोनों को करीबी का अहसास भी होता है।अल्पा पूर्ण रूप से राजन को पा लेती है उसे लगता है कि उसका नारीत्व सार्थक हो गया है क्योंकि अपने प्रेमी को छीनने वाली नीलू से उसने उसका पति छीन लिया है ।

"मोहबंध" कहानी के शीर्षक से ही व्यक्त हो जाता है कि यहाँ प्रतिपादित संबंध पारस्परिक मेल-मिलाप पर आधारित न होकर सिर्फ मोह पर ही केन्द्रित है । मोह का बंधन क्षणिक होता है और इस कारण समय के साथ वह धूमिल भी हो जाता है । आधुनिक पति-पत्नी के संबंध भी इस तरह समय के साथ धूमिल होने लगते हैं और इन संबंधों में कोई भी ठोस बात नहीं रह जाती । पति को बदलना या पत्नी को बदलना और पति के होते हुए किसी दूसरे से संबंध जोड़ना आदि आधुनिक "तथाकथित प्रेम" के स्वरूप है जिसे नकारा नहीं जा सकता । मोहबंध इसका प्रमाण है । प्रेम के क्षेत्र में नारी के प्रतिक्रियाजन्य द्वेष को उषा प्रियम्वदा ने "मछलियाँ" कहानी में उजागर किया है । विजी और मनीश प्रेमी प्रेमिका हैं । ऐसी ही एक युगल जोड़ी है मुक्की और नटराजन की । मनीश प्रेमिका विजी से पिंड छुड़ाने के लिए मुक्की से प्रेम का नाटक रचता प्रतीत होता है । विजी की दयनीय स्थिति देखकर नटराजन उसके प्रति सहानुभूति दर्शाता है।विजी नटराजन को अपना भाई मानती है क्योंकि एक भाई की ओर से अपेक्षित सहायता विजी को नटराजन से

मिलती है । विजी के प्रति नटराजन की सहानुभूति और दायित्व को देखकर मुन्नी अपने प्रेमी नटराजन को गलत समझ बैठती है । विजी मनीश की करोबी से टूट सी जाती है। वह भारत लौटने को निश्चय कर लेती है । नटराजन 1500 डालर का चेक देकर उसकी सहायता करता है । मुन्नी की ईर्ष्या को और भड़काने के लिए विजी यह बात मुन्नी से कहती है । मुन्नी ईर्ष्या और क्रोध से जलभुन जाती है । और नटराजन से विवाह का बन्धन तोड़ देती है ।

नारी चाहे कितनी भी शिक्षित एवं आधुनिक क्यों न हो फिर भी पुरुष पर मात्र अपना अधिकार स्थापित करने का उसका परम्परावादी दृष्टिकोण अब भी मौजूद है । विदेशी परिवेश में प्रेम करनेवाले युवा-युवतियों की विवशता, टूटने बिखरने की स्थिति व दिशाहीनता का सार्थक चित्रण इस कहानी में उभर आया है ।

"पिघलती हुई बर्फ" में लेखिका ने मनोवैज्ञानिक धरातल पर प्रेम में होने वाली समस्याओं को व्यक्त किया है । अक्षय शोध-कार्य के लिए विदेश जाता है । वहाँ उसकी जिंदगी में सुशीरा नाम की एक लड़की आती है दोनों एक दूसरे के बहुत करीब आते हैं । सुशीरा का एक दोस्त है वीस जिससे अक्षय को सख्त नफरत है, एक बार वीस अक्षय से उसकी गाड़ी माँगता है । अक्षय मौके का फायदा उठा कर उसे उसे एक ऐसी गाड़ी देता है जिसमें ब्रेक नहीं होती है । अक्षय ने जैसे चाहा था। वैसे ही गाड़ी की दुर्घटना होती है और उस दुर्घटना में वीस की मृत्यु हो जाती है और सुशीरा अपाहिज हो जाती

प्रेम में पागल अक्षय की मानसिक स्थिति रोगग्रस्त हो जाती अपने शत्रु को मारने के उद्देश्य को पूरा करने के साथ साथ वह अपनी प्रेमिका को भी अपाहिज कर देता है।आत्मग्लानि और गम में वह पल-पल गलने लगता है । उसे लगता है कि वीस के खून के धब्बे उसके हृदय पर बिखरे पड़े हैं । इस कहानी एक जीवन्त सत्य का उद्घाटन हुआ है। स्त्री को पाने केलिए पुरुष किसी प्रकार का घिनौना अपराध करने से बाज नहीं आता । प्रतिशोध की अग्नि में

वह इतना अंधा हो जाता है कि अन्जाम की चिन्ता किये बिना वह पागलपन दिखा बैठता है ।

अर्थाभाव के कारण प्रेम के टूटने की स्थिति का मार्मिक चित्रण लेखिका ने "जिन्दगी और गुलाब कहानी" में खींचा है । सुबोध एक बेरोजगार नौजवान है । अत्यधिक आत्मनिष्ठ होने की वजह से वह अपनी नौकरी से इस्तीफा दे देता है और बहन वृन्दा पर आश्रित रहता है । सुबोध की प्रेयसी शोभा अपने प्रेमी के घुटन भरे जीवन और पंगु व्यक्तित्व को देखकर उदास हो जाती है । गुलाब के फूल एवं सुनहरे सपनों को संजोनेवाली शोभा सुबोध के जीवन से दूर हो जाता है ।

आर्थिक पराधीनता की वजह से उत्पन्न शोषण की स्थिति के व्यावहारिक रूप को लेखिका ने इस कहानी में स्पष्ट किया है । प्रेम और स्त्री पुरुष संबन्ध सब अर्थ के अधीनस्त हैं । अर्थ के अभाव में प्रेमिका प्रेमी से अपना पल्ला छुड़ा लेती है और इस कहानी में लेखिका ने इस सत्य को उजागर किया है कि प्रेम का स्थान अर्थ के समक्ष गौण ही होता है ।

"झूठा दर्पण" कहानी में लेखिका ने अमृता और यति के प्रेम के माध्यम से आधुनिक प्रेम के नये स्वरूप को रेखांकित किया है । यतीन्द्र विवाहित और दो बच्चों के पिता हैं । लेकिन अमृता इसकी चिन्ता नहीं करती । दोनों के प्रेम संबन्ध का मूल कारण उनका मानसिक लगाव और मानसिक ऐक्य है ।

अमृता की शादी कुंवर नाम के एक संपन्न व्यक्ति के साथ तय हो जाती है अमृता अपनी शादी से नाखुश है क्योंकि वह यतीन्द्र की ओर आकृष्ट है लेकिन वह मजबूर है क्यों कि यतीन्द्र एक विवाहित पुरुष और उसकी सहेली मीरा का पति है । शादी के एक दिन पूर्व वह यतीन्द्र को एक रेखाएँ ये अभिव्यक्त करती है रेखाओं में उसे यतीन्द्र की जगह अपना भावी

पति कुँवर मिल जाता है। वह उसके साथ बैठने को मजबूर हो जाती है। अमृता सामने के दर्पण में पतीन्द्र का प्रतिबिंब देखती है दोनों की आँखें मिलती है। लेकिन वे एक दूसरे को पहचानने से इनकार कर देते हैं क्यों कि दोनों विवश हैं। यहाँ लेखिका ने मोहभंग की स्थिति को विस्तृत परिवेश में चित्रित किया है। जीवन में इस प्रकार के मोहभंग के चित्र बहुत सारे मिलते हैं। स्त्री-पुरुष संबंधों में हमेशा इस तरह की बेबसी और बेकसी बनी रहती है जो आगे चलकर एक मीठा दर्द मात्र बन कर रह जाता है।

{ग} दीप्ति खंडेलवाल की कहानियों में प्रेम तत्व

"दो पल की छाँव" कहानी में विफल प्रेम की व्यथा है। इसमें एक नारी है जो प्रेम के नाम से लूट ली गयी होती है जिसके पास प्रेमी की निशानी के रूप में उनके अवैध संबंध से उत्पन्न एक बेटा है। नायिका को जीवन की लम्बाई में कुछ पल के लिए एन्टोनी का साथ मिलता है। उसका अपनापन और उसकी आत्मीयता को देखकर वह उसकी ओर आकर्षित होने लगती है लेकिन वह उसे दो पल की ही छाँव दे पाता है क्यों कि स्वयं वह कुंठित और पराजित व्यक्ति है।

यहाँ दीप्ति जी ने आधुनिकताबोध के ही शिकार बन कर राहों से दूर भटकनेवाले स्त्री-पुरुषों के जीवन की झाँकी प्रस्तुत करते हुए एक बार फिर स्त्री की असहाय अवस्था की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट किया है। स्त्री हमेशा किसी की छाया चाहती है और पुरुष की बाहों का सहारा पाकर जीवन को सार्थक बनाना चाहती है। परन्तु कभी-कभी हम सफर दो पल की छाँव देकर बिछड़ जाते हैं। यह आधुनिक जीवन की विवशता है।

"स्वयंवर" कहानी में लेखिका ने लैला-मजनू के प्रेमादर्श को आधार बना कर आधुनिक युग में जीने वाले दो प्रेमियों के पुण्य प्रसंग पर प्रकाश डाला है। राधा और मोहन सहपाठी है। दोनों एक दूसरे को जी जान से चाहते हैं। मोहन संपन्न वर्ग का है और राधा निर्धन परिवार की। आधुनिक प्रेमियों के विचार- जैसे डोन्ट मेक नाथक टेबु" - से ये दोनों कोसों दूर है। परम्परागत प्रेमादर्श पर चलनेवाले मोहन और राधा प्रेम के क्षेत्र में इस कदर आगे बढ जाते हैं कि अनजाने में राधा गर्भवती हो जाती है। राधा की गर्भवती होने पर बदनामी के डर से दोनों आत्महत्या कर प्रेम के नाम पर अमर हो जाते हैं।

यह कहानी अत्यन्त ही अस्वाभाविक लगती है क्यों कि आधुनिक युग में ऐसे लैला मजनू कम ही नजर आते है।

5• वर्ग भेद को उजागर करनेवाली कहानियाँ

जिंदगी की विभीषिका को तीव्रता से भोगनेवाला वर्ग है निम्न वर्ग जो समाज में सबसे अधिक संत्रस्त एवं अभिशप्त है। आजादी की प्राप्ति के पश्चात इस वर्ग की स्थिति में थोडा बहुत परिवर्तन आया है। फिर भी रोटी की समस्या अब भी पूरी तरह हल नहीं हो पायी है। निम्न वर्ग के सामने मूल रूप रोटी की समस्या ही प्रमुख है। उन्हें न मध्य वर्ग के समान अपने "स्टेटस" की चिन्ता है और न ही झूठी शान की। अपनी छोटी दुनिया में रोजी रोटी, बीवी बच्चे के अतिरिक्त उनकी कोई बडी-बडी आशाएं नहीं होती। फिर भी इन आवश्यकताओं की पूर्ति में ही उनकी सारी जिंदगी गुजर जाती है। परेशानियों में उलझ कर कभी-कभी वे जीना तक भूल जाते हैं। जीवन की कोमलतम अनुभूतियों का और नित्य प्रतिदिन विकसित होनेवाली जीवन सुविधाओं का उन्हें ज्ञान तक नहीं होता। मनुष्य होकर भी ये दो पैरों के जानवरों से बदतर जिंदगी गुजारते हैं।

अर्थाभाव के कारण रोटियाँ कमाने के लिए दर-दर भटकनेवाले इस वर्ग के लिए जीवन एक अभिशाप है। जीवन की बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए दम तोड़ मेहनत करनेवाला निम्न वर्ग उच्च वर्ग की आँखों में हमेशा खटकता रहता है । आलीशान अट्टालिकाओं में सभी प्रकार के सुख एवं वैभवयुक्त जीवन बितानेवाले अमीर कभी भी इस वर्ग के प्रति सहानुभूति नहीं दिखा पाते । गरीबी को एक रोग समझनेवाले उच्च वर्ग के लोग गरीबों की साया तक से भय खाकर दूर भागते हैं । इस प्रकार आधुनिक समाज में उच्चवर्ग और निम्न वर्ग के बीच के फासले अत्यन्त गहरे बनते जा रहे हैं । इन बढ़ते हुए फासलों को मानवीय परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करने की कोशिश लेखिकाओं ने की है । इन लेखिकाओं की कहानियों में जो वर्ग संघर्ष मिलता है वह न तो मार्क्सवादी दृष्टिकोण से परिनिर्देशित हुआ है । और न ही पूँजीवादी दृष्टिकोण से । बदलते हुए भारतीय परिवेश में उभरते हुए नये यथार्थ का बोध कराने के उद्देश्य से एक सीमा तक ये कहानियाँ संचालित हुई लगती हैं ।

(क) <u>वर्ग भेद को स्पष्ट करनेवाली - मृदुला गर्ग की कहानियाँ</u>

मृदुला गर्ग ने बहुत सारी कहानियों में वर्गभेद की ज्वलन्त समस्या को अभिव्यक्ति दी है "उसका विद्रोह" कहानी में लेखिका ने उच्च वर्ग की दमननीति और निम्न वर्ग का उसके प्रति विद्रोह को सन्दर्भ सापेक्ष रूप में प्रस्तुत किया है । इसमें एक नौकर है जो एक उच्च वर्ग के घर पर काम करता है। उस नौकर का अपने ऊपर कोई अधिकार नहीं है । साहब और मेमसाहब के इच्छानुसार ही उसे अपने व्यक्तित्व को ढालना पड़ता है । वह अपने साहब मेम साहब के विरुद्ध आवाज बुलंद नहीं कर पाता क्योंकि साहब के घर की, आराम की जिंदगी को देखकर वह अपने अस्तित्व को ही भूल जाता है

उसे अपने व्यक्तित्व पर तब विश्वास होता है जब उसे अपनी शादी की सूचना मिलती है । यह सूचना उसकी जिंदगी में एक नई उमंग भर देती है। इस उमंग से उद्भूत आशा उसके मन को ढाढस बंधाती है और उसके दमित व्यक्तित्व को जागृत करती है । उसमें आत्मविश्वास की भावना विकसित होने लगती है । उसके व्यक्तित्व में दमित विद्रोह की भावना तब भड़क उठती है जब मालकिन उसकी गलती पर अपनी सहेलियों के सामने उसे भला-बुरा कहती है । नौकर गुस्से में बर्तनों को यहाँ-वहाँ उठा कर फेंकने लगता है और जोरों से दरवाज़ा बंद कर नलकी के नीचे बैठकर बेसुरे राग में गाना गा कर नहाने लगता है ताकि सब कह उठें कि पड़ोस का नौकर किस कदर उद्दंड और गुस्ताख है ।

यहाँ परिस्थिति एवं परिवेश से प्रेरित निम्न वर्ग का विद्रोहात्मक स्वरूप उभर आया है । नौकर के मन में विद्रोह एक कुंठा के रूप में पलता है। अनुकूल परिस्थिति में गुस्ताखी के रूप में वह प्रकट होने लगता है। विद्रोह का यह स्वाभाविक विस्फोट है ।

"टुकड़ा-टुकड़ा आदमी" में लेखिका ने निम्न वर्ग की निष्कपटता और भोलेपन को उजागर किया है । निम्न वर्ग की निष्कपटता का फायदा उठाने वाले उच्च वर्ग पर लेखिका ने तीखा प्रहार किया है ।

सुबोध कुमार एक सिमेंट कम्पनी का चेयरमैन है । रामदीन और धनिया निम्न वर्ग के कामगार हैं । एक बार बारिश के मौसम में गरीब कामगारों के घर पानी में बह जाते हैं। सुबोध कुमार और उस सिमेंट कंपनी के मैनेजर घटना स्थल पर आते हैं और नयी मजदूर कालोनी बनाने का वादा कर चले जाते हैं । रामदीन और धनिया जैसे निष्कपट ग्रामीण सुबोध कुमार जैसे कपटी लोगों की कृत्रिम बातों से अनभिज्ञ हैं ।

वे नयी कलोनी का सपना देखने लगते हैं । लेकिन यह सपना सपना मात्र रह जाता है । सुबोध कुमार स्वार्थ और वासना की गर्त में डूब कर गरीब जनता के समक्ष किये वादों को भूल जाता है । अपनी रखैल से किये वादे को निभाने के लिए वह गरीबों के सपनों को निर्ममता से रौंद देता है ।

उच्च वर्ग के मुखौटे धारी मनुष्य किस तरह गरीब जनता को लूट कर उनकी संवेदनाओं को नष्ट कर देते हैं, इस सत्य की ओर कहानी संकेत करती है। आजाद भारत में शोषण के कई नये रूप विद्यमान हैं । इनमें से एक की चर्चा इस कहानी में प्रस्तुत की गई है। मैनेजर बाढ से पीड़ित नौकरों के लिए मकान बनवाने का वादा करता है लेकिन वादा पूरा करता है, अपनी रखैल का । मैनेजर की आँखों में मजदूर और नौकर जानवर जैसे हैं जो किसी भी हालत में जिंदगी गुजारने के लिए अभिशप्त हैं । गरीब कामगारों के जीवनको संवारने के लिए मैनेजर के पास पैसे नहीं होते जब कि ऐश और आराम के लिए पैसों की कोई कमी नहीं होती । स्वातन्त्र्योत्तर भारत का यह एक उभरता हुआ चित्र है ।

वर्ग भेद को स्पष्ट करनेवाली दूसरी कहानी है "पोंगल पोली"। सोमम्मा, छत्तीरप्पा सेल शांतम्मा आदि निम्नवर्ग के गरीब जन हैं जो आर्कोले कस्बा के पास रहते हैं । आर्कोले कस्बा का निरीक्षण परीक्षण के लिए शहर से एक स्त्री-पुरुष मोटर में आते हैं । स्त्री का सौन्दर्य उसके आभूषण और उसके हाथों की अन्य सामग्रियों को देखकर सोमम्मा और अन्य लोग दंग रह जाते हैं । स्त्री-पुरुष ग्राम वासियों के रहन सहन को देखकर बड़े ही व्यंग्यात्मक ढंग से उनके साथ पेश आते हैं । गांववासियों की इजाजत के बिना वे वहां की मूर्तियों को उठा कर ले जाते हैं।गांव वाले उनका विरोध नहीं करते क्यों कि वे जानते हैं कि उच्च वर्गों के विरुद्ध आवाज़ बुलंद करना बेकार है ।

उच्च वर्ग के आगे घुटने टेकना एक नियम सा हो गया है । निम्न वर्ग पर आधिपत्य स्थापित करना उच्च वर्ग अपना जन्म सिद्ध अधिकार मानता है । यहाँ तक कि वह यह समझता है कि निम्न वर्ग के लोगों को पीने का अधिकार तक नहीं है । गंदगी से भरपूर वातावरण में भेड़-बकरियों के समान जीवन बिताने वाले इन लोगों की कोमल भावनाओं के प्रति उच्च वर्ग घृणात्मक दृष्टि रखता है ।

निम्न वर्ग की विवशता को लेखिका ने "मौत में मदद" कहानी में रेखांकित किया है। अनिल और उसकी पत्नी उच्च वर्ग के हैं । उनके घर का माली है बुद्धन जो सर्वहारा निम्न वर्ग का है बुद्धन पारिवारिक समस्याओं से ग्रस्त है जिस कारण बागवानी की ओर उसका ध्यान जाता ही नहीं । बुद्धन की समस्याओं को देखकर अनिल की पत्नी समय समय पर उसकी सहायता करती है लेकिन अनिल निम्न वर्ग को चाल-बाजों का वर्ग समझता है ।

एक बार बुद्धन का लड़का बीमार पड़ता है । वह अपनी मालकिन से सहायता मांगता है । लेकिन वह उसकी सहायता करने में असमर्थ रहती है। परिणामस्वरूप उचित चिकित्सा के अभाव में बुद्धन के बेटे की मृत्यु हो जाती है। बेटे की मृत्यु के पश्चात् बुद्धन फिर अपनी मेम साहब के पास जाता है पैसे के लिए, क्यों कि बेटे के अन्तिम संस्कार के लिए भी उसके पास पैसे नहीं होते । तब अनिल औपचारिकतावश उसे तीस रूपये देता है । मौत में मदद करनेवाला अनिल पुत्र की चिकित्सा के लिए पैसा नहीं देता । लेकिन पुत्र की अन्तिम क्रिया के लिए पैसे देकर उसकी "सहायता" करता है ।

इस कहानी में परोक्ष रूप से यह सूचित किया है कि निम्न वर्ग का इस दुनिया में कोई मूल्य नहीं है । जो आदमी अपनी रोटी नहीं कमा सकता, बीमारी का इलाज नहीं करा सकता उसके लिए उचित सहारा मृत्यु ही है ।

मृत्यु के मुंह में भेजने के लिए उच्च वर्ग हमेशा उनकी सहायता करता है ।

(ख) वर्ग भेद दीप्ति खंडेलवाल की कहानियों में

"कोठिया में" कहानी के मिसेज गुप्ता, मिश्र राजेन्द्र आदि उच्च वर्ग के हैं और सब्जी बेचनेवाला करीम निम्न वर्ग का । करीम का रहन-सहन और वेश-भूषा देखकर मिश्रा और राजेन्द्र उसे जानवर की उपाधि देते हैं । लेकिन उसकी वेदना और समस्याओं को समझने का प्रयास मात्र मिसेज गुप्ता करती है । करीम की बीभत्स स्थिति को देख कर उसे जानवर कहने वाला मिश्रा स्वयं जानवरों से भी बदत्तर है । जिस तरह जानवर खाने की चीज़ को देखकर लार टपकाते हैं वैसे ही मिसेज गुप्ता के उभारों को देखकर मिश्रा के मुँह से लार टपकने लगती है "जानवर कहते मिश्रा की लोलुप दृष्टि मेरी नारी देह के उभारों पर लार टपकाने लगी थी । जानवर .... हाँ जानवर है तो .... मैं ने बड़ पर आँचल ठीक करते मिश्रा की ओर देखते कहा जानवर का अर्थ मिश्रा कहाँ समझे । सेक्स के प्रति मिश्रा की भूख को देखकर मिसेज गुप्ता को कई बार दो पैरों वाले जानवर याद आते हैं ।[1]" और विवशता वश पति की तरक्की के लिए मिसेज गुप्ता को इन जानवरों का शिकार बनना पड़ता है ।

समाज में उच्च और सभ्य कहलानेवाले ये उच्च वर्ग के लोग निम्न वर्ग को जंगली जानवर कहते हैं । परन्तु अपने नाखून और दांत छिपा कर रखते हैं और मौका पाकर इनका इस्तेमाल करते हैं । इस तरह के घिनौने

---

1. दीप्ति खंडेलवाल - कोठिया में, सलीब पर, - पृ.75

आचरण पर जानवर" को भी उन पर आपत्ति हो सकती है । करीम जानवर का रूप धारण करता है, वे रोटी कमाने के लिए, जब कि मिश्रा जानवर बनता है पराधी स्त्रियों को देखकर ।

उच्च वर्ग की कृत्रिमता और निम्न वर्ग के यथार्थ को लेखिका ने जमीन कहानी में प्रस्तुत किया है । माधो निम्न वर्ग की अशिक्षित नारी है जिसका अपना मनचाहा जीवन है । पति के अत्याचार को कभी वह मूक होकर सहती है तो कभी क्रोधित होकर । फिर भी उसे अपने जीवन से कोई शिकवा-शिकायत नहीं । माधो के जीवन से ठीक विपरीत उसकी मालकिन ऐशो-आराम की जिंदगी जीती है । फिर भी उसे जीवन में कुछ अभाव खटकता है । औपचारिकता की शिकार की बनी मालकिन की जिंदगी बाहर से जितनी खूबसूरत लगती है अन्दर से उतनी ही खोखली नजर आती है।तभी तो वह माधो की जिंदगी को देखकर सोचती है "वह भी एक औरत है जैसी हूँ मैं हूँ । मेरे स्निग्ध कपोलों पर मेरी लम्बी श्यामल पलकें इन्द्रजाल रचा करती है ...... राकेश उस इन्द्रजाल को चूम लिया करते हैं .... सौन्दर्य सौरभ और संगीत के अहसास मेरे जीवन के पर्याय हैं किन्तु कूला के सम्मुख मेरे जीवन के पर्याय झूठे पड़ने लगते हैं ...... कूला मुझे वास्तविक जिंदगी का पर्याय लगती है ...... कहीं मैं कूला होती .... सोचती हूँ कांपने लगती हूँ कूला में और मुझमें अन्तर है .... स्थितियाँ काश ही न"[1] ।

1· दीप्ति खंडेलवाल - जमीन-वह तीसरा - पृ·40

इस कहानी में दो वर्गों की स्त्रियों के जीवन का तुलनात्मक चित्रण हुआ है । उच्च वर्ग की नायिका पति की स्वार्थपरता की शिकार बनी रहती है और रजनी गंधा के फूलों के समान रात की खामोशी में दुलारों की बाहों की शोभा बनती है जब कि निम्न वर्ग की नायिका अपने पति के हाथों में ही अपनी जिंदगी की खुशियों को सौंप कर चैन की जिंदगी जीती है । उसे अपने जीवन में न कहीं कोई अभाव नज़र आता और न ही उसे अपनी जिंदगी अपूर्ण लगती है ।

मन्नू भण्डारी ने भी अपनी कुछेक कहानियों में उच्च वर्ग के शोषण का विस्तार के साथ चित्रण किया है । 'खोटे सिक्के' के खन्ना साहब टकसाल के उच्च पदाधिकारी हैं । एक बार टकसाल देखने कुछ कालेज की छात्राएं आती हैं । खन्ना साहब स्वयं उनके साथ घूम-घूम कर टकसाल का विस्तृत विवरण देते हैं साथ-साथ रंगीन चुटकियों से उनका मनोरंजन भी करते हैं ऐन वक्त पर एक गरीब औरत रो-पीट कर खन्ना साहब के समक्ष याचना करती है जिसका पति दो साल पूर्व टकसाल में काम करते हुए अपाहिज हुआ था । रंग के भंग होने के कारण खन्ना साहब उसे चपरासी के द्वारा बाहर निकलवा देते हैं ।

परिस्थितियों के परिवर्तन के साथ मनुष्य किस तरह खोटा आचरण करता है इसका उदाहरण है "खोटे सिक्के" कहानी । उच्च वर्ग का खन्ना साहब निम्न वर्ग की नारी की विवशता को अनदेखा कर नवयुवतियों के साथ रंगबाजी करता है । उस वक्त उसकी खुशियों में बाधा डालने वाली उस निम्न वर्ग की स्त्री को बाहर निकाल देना जैसे एक साधारण सी घटना है । और ऐसी घटनाएं आम तौर पर देखने को मिलती भी हैं ।

परन्तु उसकी गहराई में जो भावनात्मक स्थिति विद्यमान है वह आवरण के
छिलकों को छोटा साबित करने के लिए पर्याप्त है ।

"नकली हीरे" की अर्थ सम्पन्न मिसेज हारण यद्यपि बाहर
से खुश नजर आती है लेकिन अन्दर से वह हर एक पल टूटती ही रहती है जब
कि उसकी छोटी बहन इन्दु एक साधारण से स्कूल मास्टर से विवाह करके भी
सुखी जीवन बिताती है । इन्दु का सुखी दाम्पत्य जीवन देख कर मिसेज
हारण को अपने वैवाहिक जीवन की अपूर्णता का अहसास होता है।उसे लगता है
कि उसके जीवन का वैभव सब नकली हीरे के समान है जिसकी चमक दीर्घ काल
तक नहीं रहती । इस कहानी से यह साफ जाहिर होता है कि जीवन का
वास्तविक सौन्दर्य बाहरी दिखावट पर आधारित नहीं होता । जीवन की
खुशियां चांदी के चंद टुकड़ों से खरीदी नहीं जा सकती । जहां तक वैवाहिक
जीवन की खुशियों का संबंध है यह बात पूरी तरह सार्थक निकलती है ।
हीरे असली भी होते हैं और नकली भी\लेकिन नकली हीरे कभी वह चमक
नहीं दिखा सकते जो असली हीरों में होती है ।

निरूपमा सेवती ने "सन्तुलन" कहानी में उच्च वर्ग की
निम्न वर्ग के प्रति हीन दृष्टि को स्पष्ट किया है\ अमिला और सुधीर गाड़ी
में लम्बे सफर के लिए जाते है । रास्ते में गाड़ी खराब हो जाती है ।
बहुत कहने पर कंगाल से लगते कुछ भूखे गरीब गाड़ी धक्का देने के लिए आते हैं।
वे सुधीर और अनीला से पैसे के बदले भूख को शमित करने के लिए रोटी मांगते है ।
अमिला अपना सारा भोजन उन्हें सौंप देती है । गरीब गांववासियों की
दरिद्रता एवं भुखमरी देख कर उसका मन खराब हो जाता है वह एक इलायची
निकाल कर मुंह में डाल देती है।उसे वातावरण में घुटन सी लगती है।सुधीर उस
घुटन भरे वातावरण से मुक्त होने के लिए गाड़ी की "एक्सीलेटर" पर दबाव डाल
कर रफ्तार तेज करता है ।

उच्च वर्ग और निम्न वर्ग के बीच में जो असन्तुलन है उसका सार्थक चित्रण इस कहानी में हुआ है। उच्च वर्ग गरीबी को एक संक्रामक रोग समझता है और उससे दूर बच कर भागना चाहता है। सफर के आनंद में किरकिरी पैदा करने वाले भूखे कंगालों को देखकर नायिका को उबकाई आती है जिसे रोकने के लिए वह इलायची चबाती है यहाँ लेखिका ने यह स्पष्ट किया है कि अमीरों के लिए गरीबी उस घृणित वस्तु के समान है जिसे देखकर उबकाई आती है।

6. परम्परागत मूल्यों की पराजय को उजागर करने वाली कहानियाँ

आज के नवीन वैज्ञानिक युग में परम्परागत आदर्श एवं मान्यताएं अपना मूल्य खो चुकी हैं। सत्य की नयी व्याख्या के कारण पुराने "सत्य" असत्य में परिणत हो गये है। "परम्परागत मूल्यों का विघटन मानवीय संबंधों की जिन इकाइयों में बड़ी तीव्रता से महसूस होने लगा है, उनमें 'परिवार' एक ऐसी इकाई है जहाँ स्थापित नैतिकता के कई मूल्य खोखले एवं नाकाम साबित हुए है। धर्म, देश, गाँव, जाति इन जैसी सामूहिक संस्थाओं का पारम्परिक महत्व कभी का समाप्त हो गया है और उसकी जगह युगानुकूल आदर्शों की स्थापना हो रही है। सामूहिक संस्थाओं की आखिरी कड़ी 'परिवार' है, जहाँ व्यक्ति और उससे सम्बन्धित व्यक्तियों के आर्थिक एवं मानसिक और शारीरिक संबंध परस्पर जुड़े हुए होते हैं। परिवार ही एक ऐसा बिन्दु है, जिस पर खड़े रहकर व्यक्ति और समाज के संबंधों को नापा जा सकता है व्यक्ति और समाज को जोड़ने वाले इस पुल के भीतर अब कई दरारें पड़ गई हैं[1]।"

---

1. डॉ. भगवानदास वर्मा - कहानी की संवेदनशीलता : सिद्धान्त और प्रयोग - पृ. 197

संबंधों का ठंडापन इन्हीं दरारों की वजह से है। परिवार के सारे सदस्य एक दूसरे से औपचारिक बंधनों से बंधे हुए है । पति-पत्नी, पिता -पुत्र, भाई-बहन के परम्परागत रूप अब धूमिल हो गये हैं । आधुनिक जीवन में इन संबंधों का आधार है अर्थ यानी पैसा ही संबंधों को दृढ और निर्जीव बनाता है। पैसे के अभाव में सारे संबंध ठंडे पड़ जाते हैं ।

संबंधों के ठंडेपन को कई कहानी लेखिकाओं ने कथ्य के रूप में चुना है। उदाहरण स्वरूप उषा प्रियम्वदा की "वापसी" परम्परागत मूल्यों के विघटन को रचनात्मक अर्थ देने वाली कहानी है ।

"वापसी" कहानी एक अवकाश प्राप्त पिता के अपने भरे पूरे परिवार में वापस लौटने और वहाँ से निराशावश एक नये नौकरी स्थल की ओर वापस लौटने की कथा है । अवकाश प्राप्त करने के पश्चात परिवार में कोई भी उनके अस्तित्व को स्वीकार नहीं करता। कोई भी उनके जज्बात का कद्र नहीं करता यहाँ तक कि उनकी पत्नी भी । बेटा पिता के लिए बैठक में जगह देना पसंद नहीं करता, बेटी को पिता की पाबन्दियों से घुटन होने लगती है गजाधर बाबू का घर पर रहना परिवार वालों के स्वच्छन्द जीवन में बाधक के रूप में है जिस कारण परिवार वाले उनकी उपस्थिति से नाखुश हैं ।

घर पर उनकी उपेक्षा हो रही है इसका अनुभव उन्हें होता है एक नयी जिंदगी शुरू करने के लिए वे पुनः एक दूसरी जगह नौकरी में लग जाते है । जाते समय उनकी आँखों में न आंसु हैं और न ही व्यथा के भाव। एक गहरी दृष्टि अपने परिवार वालों पर डाल कर दूसरी ओर देखने लगते हैं ।

गजाधर बाबू के जाते ही पत्नी अन्दर जाकर नरेन्द्र से कहती है । बाबूजी की चारपाई कमरे से निकाल दे । उसमें चलने की जगह नहीं है ।

"गजाधर बाबू की 'वापसी' उनके लिए बड़ी यथार्थ है, ट्रैजिक है जरूर, किन्तु पिता के रूप में परिवार के परम्परागत शक्ति का अन्त इसी प्रकार होना था, वह हो गया । पारिवारिक संबंधों की बदली हुई व्याख्या की सूचना यह कहानी हमें देती है[1] ।"

मृदुला गर्ग ने 'लौटना और लौटना' कहानी में एक बेटे के स्वार्थ और विकृत विचारों को अभिव्यक्ति प्रदान की है। हरीश विदेश में नौकरी करता है । वह वहाँ की सभ्यता और संस्कार से प्रभावित है । उसे अपने माँ-बाप के प्रति न कोई श्रद्धा है न ही आत्मीयता के भाव । अपने पिता की इच्छा के अनुसार वह एक भारतीय नारी से ब्याह करता है । और नकद रकम दहेज के रूप में लेता है। पिता के आग्रह के अनुसार वह एक मकान भी बनवाता है लेकिन पिता के लिए नहीं अपने लिए । विदेश लौटते वक्त उसे किराये पर देकर वह लौट जाता है ।

इस कहानी में एक पीढ़ी भर की विवशता और मजबूरी का सार्थक चित्रण हुआ है । हरीश के पिता पुरानी पीढ़ी के हैं । प्राचीन मूल्यों के आधार पर अपने जीवन के अन्तिम दिनों की सुखी परिकल्पना वे करते हैं परन्तु बदले हुए मूल्यों के कारण उनकी आशाओं पर ओले गिर जाते हैं । अरमानों

1· जगदम्बा प्रसाद शर्मा, कहानी की संवेदनशीलता सिद्धान्त और प्रयोग - पृ·214

टूटे खण्डहरों पर खड़े होकर जिंदगी की बदली हुई परिस्थितियों को पहचानने में असमर्थ यह पुरानी पीढ़ी, एक युग के अन्त की सूचना देती है ।

<u>दीप्ति खंडेलवाल की कहानियों में परम्परागत मूल्य</u>

"आधुनिक" का सुधीर विदेश से उच्च शिक्षा, ग्रहण कर एक मेम पत्नी के साथ भारत लौटता है । सुधीर के पिता उसके स्वागत के लिए एयरपोर्ट जाता है । पिता को एयरपोर्ट में देखकर सुधीर झुंझला उठता है अपनी मेम पत्नी के समक्ष बूढ़े पिता को पिता कहने में वह सकुचाता है । मेम पत्नी के पूछने पर वह कहता "जेस्ट एन ओल्ड सर्वेंट ऑफ अवर हाउस होल्ड" बेटे के मुंह से ऐसा उत्तर सुन कर पिता की आँखें भर आती हैं ।

पुत्र के कल्याण के लिए सब कुछ न्योछावर करनेवाला पिता अपने पुत्र के लिए मात्र एक नौकर बन कर रह जाता है । यही आधुनिकता का भ्रम है । संबंधों के बिखराव को स्पष्ट करने में यह कहानी अत्यधिक सफल सिद्ध हुई है ।

"सलीब पर" का हरिकिशन एक नेक और देशभक्त इंसान है । देशभक्ति के पीछे अपने परिवार तक को बलि देने को वह तैयार रहता है । पिता की ऐसी देश भक्ति देखकर उसके बेटे क्षुब्ध हो जाते हैं।देश भक्ति के पीछे लुटती संपत्ति को देखकर बेटे उससे जबरदस्ती संपत्ति का बंटवारा करवाते हैं।संपत्ति का बंटवारा होते ही पिता अन्तिम सांस खींच लेता है ।

अर्थ पर केन्द्रित आज का आधुनिक युग संबन्धों की दृढ़ता पर विश्वास नहीं करता । अर्थ को अर्जित करने की स्वार्थता मानवीय संबन्धों को पूर्ण रूप से खोखला बना देती है ।

आधुनिक युग में पिता का महत्व इतना ही है कि वह अपने परिवारवालों को आवश्यकतानुसार धन दे और उनके भावी जीवन को आर्थिक सुरक्षा प्रदान करे । जब पिता इस अर्थ से च्युत होने लगता है तब उसे पुत्रों की नफरत का पात्र बनना पड़ता है ।

दीप्ति खंडेलवाल की कहानी "कारण" का जयप्रकाश अपने परिवार वालों की अभिव्यक्ति को परखने के उद्देश्य से "हार्ट-एटेक" का नाटक खेलता है पति-पिता की बीमारी पर पत्नी-बच्चे चिन्तित हो जाते हैं चिन्ता पति-पिता की जिंदगी के लिए नहीं बल्कि स्वयं के भविष्य के लिए होती है, जिस कारण पत्नी और बच्चे उनसे विल बनाने को मजबूर करते हैं पत्नी उनसे कहती है "यदि तुम विल लिख रहे हो तो मेरा साफ-साफ अलग कर देना .... मैं आशिष पर आश्रित नहीं रहना चाहती ।[1]"

पत्नी और बच्चों के स्वार्थयुक्त विचारों से जयप्रकाश बुरी तरह आहत हो जाता है वह अपनी सारी संपत्ति को एक ट्रस्ट के नाम पर लिखकर आत्महत्या कर लेता है । जीवन के विशाल फलक को लेखिका ने यहाँ व्यक्त किया है । आपसी संबन्धों का सूनापन ही इस कहानी का आधार है वर्तमान समाज में "व्यक्ति" सत्य नहीं उसके स्थान पर "अर्थ" और "स्वार्थ" ही सत्य है रिश्ते-नाते सब अर्थ की तराजू पर ही केन्द्रित है । जीवन का बोझ आज बहुत ही असहनीय बन गया है । यहाँ मृत्यु एक स्थिति मात्र है जब कि जीवन एक लम्बा भार ।

---

1. दीप्ति खंडेलवाल - कारण - दो पल की छाँव - पृ.94

संबंधों का ठंडापन मेहरुन्निसा परवेज़ की कहानियों में

संबंधों के खोखलेपन को मेहरुन्निसा परवेज ने "गिरवी रखी धूप" कहानी में सूक्ष्मता के साथ चित्रित किया है ।

कहानी में एक रोगग्रस्त पिता है जो अपने परिवारवालों के लिए भार स्वरूप है । वह इलाज के लिए शहर के पास जाता है । घर से जाने के पश्चात घरवालों की ओर से कोई उनकी खबर नहीं लेता । दवाई के लिए उसके पेंशन से 25 रुपये भेज दिये जाते है । घरवालों के ऐसे व्यवहार से उसे बहुत दुःख होता है इलाज के बाद पुनः वापस घर लौटने पर पत्नी और बच्चों का उनके प्रति विशेष लगाव देखकर पिता को आश्चर्य होता है "यह पत्नी उनसे कितना तंग आ गयी थी, बात-बात पर ताने, पर अब परिवर्तन आ गया था ...... कुत्ते की दुम कभी सीधी हो सकती है'? पत्नी और बच्चों का विशेष लगाव देखकर उसे खुशी होती है लेकिन उनकी ही खुशियाँ भरभरा कर ढह जाती है "जब पेन्शन वाला बाबू कहता है .... तुम आ गए वरना एक पर पेन्शन देना बंद कर दिया जाता "इसे सुनकर उन्हें एक जबरदस्त धक्का पहुँचता है । अभिव्यक्ति गुस्से में पाम के पत्ते की पंख से मसल का परिवारवालों के प्रति अपनी ईर्ष्या दर्शाता है । यहाँ धन के महत्व को व्यक्ति के अस्तित्व पर साबित किया है जो आधुनिक युग की निजी वास्तविकता है । आज मनुष्य का कोई मूल्य नहीं है।मूल्य है सिर्फ धन और दौलत का ।

---

1. मेहरुन्निसा परवेज-गिरवी रखी धूप"- टहनियों पर धूप - पृ.44

"पितृ शोक" कहानी में एक ऐसे बेटे की मानसिकता को उभारा गया है जो पिता की मृत्यु का समाचार सुन कर भी आना नहीं चाहता। क्यों कि पिता ने उसे जीवन भर दुःख ही दुःख दिये हैं लेकिन समाज के इस पर्दे कानून को निभाने के लिए वह आता है और सोचता है "एक विधुर अधेड़ आदमी केलिए वह इतना पैसा फूंक रहा है इससे तो अच्छा यही था कि दोस्तों में बैठकर बढ़िया बोतल खोली जाती .... दो तीन दिन ऐश करते, ठहाके लगाते, सिगरेट की धुएं से कमरे को भर देते"[1]।

पिता और पुत्र के आधुनिक संबंधों का एक और रूप उदाहरण यहाँ पर प्रस्तुत किया गया है। आज के युग में परम्परागत पिता हैं न पुत्र ही।

कथ्य के अन्त में

स्वातन्त्र्योत्तर कालीन परिवेश में नारी की बदलती भूमिका को रेखांकित करने वाली जितनी भी कहानियाँ लिखी गयी है, उनमें पूर्व लेखन से भिन्न संवेदनायें और स्वर मुखरित होने लगते हैं। यह स्वर परिवर्तन की नयी दिशाओं की सूचना देते तो हैं, साथ-साथ हिन्दी कहानियों के कथ्यात्मक विकास के नये आयामों की ओर भी सूचित करते हैं। जैसे, चुनी हुई लेखिकाओं की रचना-प्रक्रिया को ही यहाँ प्रस्तुत किया गया है, इस कारण कथ्य की दृष्टि से उपरोक्त कहानियाँ प्रतिनिधि स्तर के अधिकारी

---

1. मेहरुन्निसा परवेज़, पितृशोक, कहानियाँ पर पृष्ठ - ६१

बन जाती है । उनमें प्रतिबिम्बित प्रवृत्तियाँ एक कालखण्ड की आशाओं और आकांक्षाओं को उभार कर रखती हैं ।

[illegible] जहाँ तक कहानियों में स्वतंत्र चेता नारी के व्यक्तित्व का सवाल है हमें यह कहना पड़ता है कि आज की आधुनिक शिक्षित नारी पूर्व कल्पित मान्यताओं से भिन्न नयी स्थितियों से गुजरती हुई नये क्षितिजों की ओर अग्रसर हो रही है । अत्यधिक स्वतंत्रता का आग्रह एवं व्यक्तित्व विकास की आकांक्षा के कारण नारी परम्परागत नैतिक आचरण संहिताओं को नकार कर वैयक्तिक आचरण संहिताओं के आधार पर जीवन निर्वाह करना उचित समझती है । ऐसे सन्दर्भ में नारी कभी उच्छृंखल होकर पथभ्रष्ट हो जाती तो कभी रोगग्रस्त मानसिकता को लेकर असन्तुलित जीवन यापन करती है । लेखिकाओं ने इस विषय की ओर विशेष ध्यान दिया है । कहानियों में आये "मिसफिट" पात्रों के माध्यम से हम अन्दाजा लगा सकते हैं कि नारी के स्वरूप में कितना परिवर्तन आया है ।

वैवाहिक जीवन संबंधी परम्परागत मान्यताएं आज आधारहीन होती जा रही हैं । आर्थिक एवं वैयक्तिक स्वतंत्रता के कारण वैवाहिक जीवन की सीमाये व्यापक तो हुई हैं । लेकिन इन गुणों से उत्पन्न व्यक्तिगत अहं पति-पत्नी के बीच तलवार के समान खड़ा हो गया है । परिणामस्वरूप जिंदगी में घिरते और मुक्त होने के अनगिनत क्षण आते रहते हैं । संबंधों की उलझन पति-पत्नी को कचहरी की सीढ़ियों तक घसीट कर ले जाती है और वहाँ संबंधों का अन्त -"डायवर्स" हो ही जाता है । लेकिन विचित्र बात यह है कि "डायवर्स" के बाद पति अथवा पत्नी पुन: अपने अतीत की ओर लौटने का प्रयास करते हैं । मिसलन लेखिका की "सुनहरे देवदार" मन्नू भण्डारी की "कहानी बंद दराजों के साथ" इसके उदाहरण हैं ।

पति-पत्नी के बीच बिखराव का प्रमुख कारण समझौते का अभाव है। अर्थ की समस्या वैवाहिक जीवन में दरारें पैदा करती है। यह दरारें बढ़ती जाती हैं और इसका अन्त तलाक या आत्महत्या में होता है।

आधुनिक पति-पत्नी अपने दैनिक जीवन में निरंतर नयी परिस्थितियों का सामना कर रहे हैं। बढ़ती हुई आधुनिकता एवं स्वतंत्र मनोवृत्ति के कारण पति-पत्नी मनचाहा एवं स्वच्छंद जीवन यापन करते हैं। इस कारण विवाहेतर संबंध पति-पत्नी को परेशानी में नहीं डालता। पति पत्नी के अवैध संबंध पर न तो क्रन्दन करता है और नहीं परेशान होता है और पत्नी भी ऐसे संबंध को न तो अनैतिक मानती है और न ही अपवित्र।

स्त्री-पुरुष की इस स्वतंत्र मानसिकता के कारण वे कहीं भी स्थिर नहीं हो पाते। प्रेम का क्षेत्र भी आधुनिक मान्यताओं के कारण खोखला हो गया है। पल दो पल की खुशी अथवा पल दो पल के साथ के लिए प्रेमी प्रेमिका प्रेम का स्वांग रचते हैं तत्पश्चात् न प्रेम होता है न प्रेम के नाम पर किये गये वादे। प्रेम का आधुनिक नाम फ्लर्टिंग है। अतः इस फ्लर्टिंग के क्षेत्र में न तो कहीं हीर रांझा नजर आयेंगे और न सोनी महिवाल। प्रेम के मूल में स्वार्थ और सेक्स की पिपासा मात्र है।

वर्ग भेद आज के युग का जीवन्त सत्य है कहानियों में जहाँ उच्च वर्ग का अहंकारयुक्त अट्टहास व्याप्त है, वहीं शोषित निम्न वर्ग की सिसकियाँ भी गुम्फित हुई हैं। जब तक हमारे समाज में अर्थ की पूजा होती रहेगी तब तक समाज में उच्च वर्ग द्वारा किया जानेवाला शोषण और निम्न वर्ग की कराह गूंजती ही रहेगी। कहानियों का कथ्य यह कहता है कि आज अर्थ के आधार पर ही इंसान इंसान को पहचानता है।

लेखिकाओं की कहानियों में इस तथ्य को समझानेवाले वर्ग भेद का सार्थक स्वरूप उभर आया है ।

तेजी के साथ परिवर्तित हो रहे मूल्य विघटन को भी लेखिकाओं ने कथ्य के रूप में चुना है । नवचेतना के आगमन के साथ-साथ परम्परागत मान्यताएं एक-एक कर टूटती जा रही हैं । इन टूटी हुई मान्यताओं के कगार पर खड़े होकर पुरानी पीढ़ी परम्परागत, अर्थात मूल्यों, से चिपके रहने का आग्रह करती है, जब कि नयी पीढ़ी इस आग्रह को नकारती है । मूल्य विघटन और नव निर्माण की नयी स्थिति को लेखिकाओं ने व्यापक आयाम प्रदान किये हैं ।

इस प्रकार लेखिकाओं ने कहानियों में नारी जीवन के विस्तृत कैनवास पर रंगों को बिखेर कर एक विशेष प्रभाव की सृष्टि की है । इस तरह यह देखा जाता है कि कहानियों में कथ्य के स्थान पर सूक्ष्म विषयों का अंकन हुआ है । इससे यह साबित हो जाता है कि लेखिकाओं की कहानियां प्राचीन कथ्यगत सिद्धान्तों को नकार गयी हैं । ये कहानियां कहीं-कहीं घटना हीन होकर भी एक ऐसा सम्यक स्वरूप लेकर सामने उभरती हैं कि पाठक के बोधफलक पर एक गहरा प्रभाव बनने लगता है कभी-कभी उसे अस्पष्टता का अनुभव भी होता है । कहीं-कहीं माडर्न आर्ट के समान अभिव्यक्ति की विशष्टता समूची कहानी को अव्यक्त बना जाती है । यहां कहानी अमूर्त पेंटिंग के समान अव्यक्त भाव गुम्फित होकर अनोखे अर्थों की ओर संकेत करती नज़र आती है ।

पाँचवाँ अध्याय

भाषा और शिल्पगत प्रयोग लेखिकाओं की रचना के संदर्भ में

पाँचवाँ अध्याय

भाषा और शैलीगत प्रयोग लेखिकाओं की रचना के संदर्भ में

रचनाकार की संवेदनाओं की गतिशीलता भाषा की सम्प्रेषणीयता पर आधारित होती है । अनुभूति की सशक्त अभिव्यक्ति के लिए बहुत ही प्रभावात्मक भाषा की जरूरत पड़ती है जिसकी खोज हर एक युग का लेखक करता है । "कहानीकार के लिए यह बहुत मुश्किल होता है कि वह अपनी भाषा का चुनाव कहाँ से और कैसे करे .... जिंदगी जो परिदृश्य सामने उपस्थित करती है वह सब भाषा में नहीं होता । कुछ दृश्य है, कुछ मूक क्षण है, कुछ संवेदनाएं हैं, कुछ अत्याचार और कुछ संत्रास हैं ..... कहने का मतलब यह कि भाषा के होते हुए भी लेखक के पास भाषा नहीं होती । हर लेखक को भाषा की खोज करनी पड़ती है, क्यों कि आदमी के अन्दर और बाहर जो खामोशी है, और उसके अन्दर और बाहर जो शोर है, वह हर समय एक सा नहीं होता और उसी को कथाकार शब्द देता है ।

अपने वक्तव्य को सही-सही प्रस्तावित कर सकने से ही उसका अर्थ प्रकट हो पाता है।[1]

कभी-कभी लेखक अपनी संवेदनाओं को सम्प्रेषित करने में असमर्थता का अनुभव करता है। ऐसे सन्दर्भों में शब्द उसके लिए अर्थहीन बन जाते हैं और शब्दों को नये अर्थों की खोज करनी पड़ती है। जहाँ परम्परागत अर्थ शब्दों के फ्रेम से निकल जाते हैं वहाँ नये अर्थों को बैठाने के लिए परिवेश एवं प्रासंगिकता का सहारा लिया जाता है। इस तरह सम्प्रेषणीयता के नये स्तर उभरने लगते हैं। जब रचनाकार अपनी साधना में सफल निकलता है तब उसकी संवेदनाएं समसामयिकता के बोध से जुड़ कर एक ऐसी रचनात्मक प्रक्रिया के अन्दर संगुम्फित हो जाती हैं कि जिसके परिणाम स्वरूप अनुभावक के भावमंडल में नया बोध जन्म ले जाता है।

<u>सम्प्रेषणीयता के नये आयाम</u>

जहाँ तक सम्प्रेषणीयता की सूक्ष्मता का सवाल है यह कहना पड़ता है कि रचनाकार बिंबों, प्रतीकों एवं फैंटेसी से भाषा के स्वरूप को संवार कर मन के अमूर्त भावों को मूर्त करने की कोशिश करता रहता है। इस कारण भाषा की सम्प्रेषणीयता पर विचार करते समय प्रतीक, बिंब, एवं भाषा की अन्य विश्लेषणात्मक शक्तियों पर भी विचार करना आवश्यक बन जाता है। इन शक्तियों का प्रयोग रचनाकार भाषागत सौन्दर्य को बढ़ाने, या चमत्कारिकता को बनाये रखने या भाषा को अलंकारिकता प्रदान करने के लिए नहीं करता अपितु मानसिक ग्रन्थियों को सुलझाने एवं भावानुभूति में सूक्ष्म ऐन्द्रियता का विस्तार करने के लिए करता है।

1. कमलेश्वर - नयी कहानी की भूमिका - पृ.200

नयी कहानी एवं साठोत्तरी कहानी का संबंध जीवन के निकटतम यथार्थ से होने के कारण इसकी भाषा भी यथार्थ के स्पन्दनों से गुम्फित अनलंकृत भाषा है। इसके भाषागत प्रयोग का कैनवास बड़ा व्यापक एवं विविधोन्मुख है। यह विविधोन्मुखता कहानी की बदली हुई संवेदना का परिणाम है। संवेदना के इस नये रूप ने कहानी के कथ्य, पात्र और वर्णन बदल दिये हैं। फलतः भाषा के संपूर्ण हो रही है। भाषा की इस विविधोन्मुखता में कहीं भी बनावटीपन या कृत्रिमता नहीं है। "आज की कहानी की भाषा कृत्रिम नहीं है वह कठिन जीवन यथार्थ को पूरी सच्चाई के साथ अभिव्यक्ति देनेवाली भाषा है, आज के विघटन एवं विद्रूप को समेटनेवाली भाषा है, जीवन में आए अन्तर्विरोधों, विसंगतियों को सहेजनेवाली भाषा है। यह नगरों, महानगरों, गावों, प्रदेशों, अंचलों में बिखरी और चारों ओर के वातावरण में समायी जिंदगी की भाषा है[1]"। अतः आज की कहानी की भाषा परिवेशजन्य स्थितियों के प्रति जागरूकता विशेषता, बिंब, संकेत एवं प्रतीकों के सहारे जटिल जीवन की उलझी हुई स्थितियों की सहज अभिव्यक्ति में सक्षम है। भाषा का यह नया रूप अपने आप को साहित्यिक एवं काव्यमयी जगत से पृथक रखता जा रहा है। परिणामस्वरूप भाषा से संस्कृतनिष्ठ एवं विशेषणयुक्त शब्द लुप्त होते जा रहे हैं। इस लिए कहा जाता है कि "साठोत्तरी कहानी ने सजावटी, बनावटी और अभिजात मुद्रा की भाषा का सर्वथा परित्याग कर दिया है और शिल्प हीन शिल्प का लिबास ओढ लिया है। आंचल प्रभाव जहाँ बढा है वहाँ आंचलिक प्रभाव ने भी करामत दिखाई है। मध्य और निम्न वर्गीय जीवन के लिए जिस जीवन्त भाषा की आवश्यकता है हिन्दी कहानी महसूसती रहती है वह आज उसे उपलब्ध है ...... आत्मोद्घाटन में निराडम्बर सत्य और व्यंग्य के लिए जिस भाषा की

---

1. कमलेश्वर - नयी कहानी की भूमिका - पृ.22।

आवश्यकता हुई, वह उसे उपलब्ध है ।[1]

बोलचाल की भाषा का प्रयोग भी बहुत से कहानीकारों ने किया है । व्याकरण के क्षेत्र में भी इन कहानीकारों ने नये-नये प्रयोग कर भाषा को काफी परिवर्तित किया है जिस कारण आज की कहानी की भाषा में न घीस-पिटापन है और न लम्बे-चौड़े भावुक वंध है । अतः आज के नये कथाकारों ने निराडम्बर सत्य को अकृत्रिम भाषा में व्यक्त करने के लिए अनुकूल शब्दों को खरीदा है, और उन्हें नये और विस्तृत अर्थ प्रदान किए है ।

भाषा का प्रयोगात्मक पक्ष

भाषा का आन्तरिक सौन्दर्य और उसके आधार

भाषा के पारदर्शी सौन्दर्य को बढाने एवं उसे बोधगम्य बनाने के लिए साहित्य में प्रतीक, बिंब एवं संकेत का प्रयोग किया जाता है इनके द्वारा भाषा को नयी अर्थवत्ता मिलती है । साथ-साथ युग की बिखरी हुई अनुभूतियों को समेटने में भी इनका प्रयोग अत्यधिक सहायक होता है ।

प्रतीक

वैसे प्रतीक विधान पाश्चात्य साहित्य की देन है । पाश्चात्य साहित्य एवं साहित्यिक प्रयोगों से प्रभावित होकर भारतीय साहित्य में भी प्रतीकों का प्रयोग होने लगा । अंग्रेजी के 'symbol' शब्द का समानार्थी शब्द के रूप मे प्रतीक का प्रयोग होता है हिन्दी साहित्य कोश में

1. मदन कवितया - समीक्षा जुलाई अगस्त 1971 - पृ.29

प्रतीक की परिभाषा इस प्रकार दी गयी है । "प्रतीक शब्द का प्रयोग उस दृश्य {अथवा गोचर} वस्तु के लिए किया जाता है, जो किसी अदृश्य {अगोचर या अप्रस्तुत} विषय का प्रतिविधान उसके साथ अपने साहचर्य के कारण करती है अथवा कहा जा सकता है कि किसी अन्य स्तर की समानुरूप वस्तु द्वारा किसी अन्य स्तर के विषय का प्रतिनिधित्व करनेवाली प्रतीक है । अमूर्त, अदृश्य, अश्रव्य अप्रस्तुत विषय का प्रतीक प्रतिविधान मूर्त, दृश्य, श्रव्य, प्रस्तुत विषय द्वारा करता है [1] ।"

प्रतीक रचनाकार के बोधमण्डल पर छायी हुई अमूर्त भावना को मूर्त एवं साकार बनाने में विशेष रूप से सहायक होते हैं । सम्प्रेषणीयता की दृष्टि से प्रतीकों का स्तर अत्यधिक श्रेष्ठ है । क्यों कि प्रतीक वहाँ पर रचनाकार के काम को सरल एवं प्रभावात्मक बना देते हैं, जहाँ भाषा एकदम अप्रभावात्मक बनती है । अर्थात् तीन-चार वाक्यों में कही जानेवाली बातों को प्रतीकों के माध्यम से एक शब्द में कहा जा सकता है । उदाहरण स्वरूप मानसिक संघर्ष और विक्षिप्त मानसिक अवस्था के लिए "आँधी" का प्रयोग किया जाता है । अतः प्रतीक बिखरे हुए भावों को एक ठोस रूप प्रदान करता है ।

Encyclopaedia Britannica में प्रतीक का विवरण इस प्रकार है । "प्रतीक उस दृश्य वस्तु के लिए प्रयुक्त शब्द है जो दृश्यात्मकता के कारण नहीं परन्तु सहधर्मिता के कारण मन में उत्पन्न होने वाले बोध का प्रतिनिधित्व करता है । यह प्रतीक के साथ साधारणतया जुड़े हुए भावों के माध्यम से सम्प्रेषित किया जाता है। इस तरह खजूर विजय का प्रतीक बनता है और "लंगर आशा का" [2] ।

---

1. हिन्दी साहित्य कोश सम्पादक धीरेन्द्रवर्मा - पृ.515
2. Symbol (a sign) The term given to a visible object representing to the mind the semblance of something which is not shown but realised by association with it. This is conveyed by the ideas usually associate with the symbol thus the palm brand is the symbol of victory and anchor of hope.
   Encyclopaedia Britanica, Vol XXVI. p.284

इस प्रकार साहित्य में प्रतीकों के सार्थक प्रयोग से अप्रस्तुत अथवा अमूर्त का चित्रण अधिक स्पष्ट एवं प्रभावात्मक हो जाता है। प्रतीकों की अर्थवत्ता कहीं कहीं गहरी एवं सारगर्भित हो जाती है जिससे सम्प्रेषणीयता का स्तर सम्यक बोध के स्पष्टीकरण में अधिक सहायक होने लगता है। जहाँ तक कहानी की रचना का संबंध है आधुनिक कहानीकार सामयिक जीवन के जटिल यथार्थ को व्यंजित करने के लिए नये एवं अनुकूल प्रतीकों का अन्वेषण करता है। "रचना में प्रवहमान अन्तर्धाराओं को वह प्रतीक द्वारा ही व्यक्त करना चाहता है। प्रतीक की विशिष्टता उसके लिए भाषा प्रक्रिया की नहीं, समस्त रचनात्मक अनुभवों को रूप देने के लिए व्यक्तित्व का जो विलयन अपेक्षित होता है वह प्रतीक को सम्मुख कर देने से ही सम्भव हो पाता है[1]।"

जहाँ तक कहानी की रचना का संबंध है प्रतीक पात्रों की मानसिकता को समझाने के साथ-साथ रचनाकार की रचना-प्रक्रिया को सीमित शब्द पंक्तियों के माध्यम से पाठक के बोध-मंडल पर अवतरित कराते हैं। विशेषकर आधुनिक रचनाकार के सन्दर्भ में प्रतीकों का अर्थ अधिक व्यापक और गहरा होने लगता है। जीवन की वास्तविकता को परखने या उसकी सूक्ष्म अभिव्यक्ति के लिए प्रतीकों को साधन के रूप में स्वीकारना चाहिए साध्य के रूप में नहीं। "महत्व या मुख्य प्रतीक या प्रतीक में नहीं होता, वह उससे मिलनेवाली अनुभूति की गुणात्मक में होता है[2]।

बिम्ब

प्रतीक की तरह बिंबों का भी आधुनिक साहित्य में सार्थक प्रयोग हो रहा है। प्रतीक से बिंब निर्मित हो सकते हैं और बिम्ब से प्रतीक का निर्माण हो सकता है। "असल का मुद्दा यह है कि कल्पना के मूर्त

1· परमानन्द श्रीवास्तव - आज की कहानी, नयी कहानी सन्दर्भ और प्रकृति (सं देवी शंकर अवस्थी) - पृ·132

2· अज्ञेय - आत्मनेपद - पृ·256

होने पर बिंबों का सर्जन होता है और बिंब की प्रतिमिति तथा उसकी पुनः पुनः प्रयुक्ति से निश्चित अर्थ में निर्धारित हो जाने पर प्रतीकों का सर्जन होता है[1]

जहाँ तक बिंबों के प्रयोग का सवाल है यह कहा जा सकता है कि बिंब सूक्ष्म मनोभावों को अभिव्यक्त कर उनको उर्वरता प्रदान करते हैं । कभी कभी अन्वेषक वह कलाकार अपने मन की बातों को व्यक्त करते समय, भाषा की असमर्थता का अनुभव करता है। ऐसी स्थितियों में बिंब उसके मन की अमूर्तता को मूर्तता प्रदान करने में सहायक सिद्ध होते हैं । अतः बिंब अमूर्त भावना की पुनः सर्जना है जो पूर्ण रूप से व्यक्ति की चेतना पर निर्भर रहती है । हिन्दी साहित्य कोश में बिंब की परिभाषा इस प्रकार है । "मनुष्य के जीवन में बिंब विधान अथवा कल्पना विधान का बड़ा महत्त्व है प्रस्तुत परिवेश के संवेदनाओं और प्रत्यक्ष के अतिरिक्त उसके मानस में अतीत की तथा कभी अस्तित्व न रखने, न करने वाली वस्तुओं और घटनाओं की असंख्य प्रतिमाएं भी रहती है। बिंब शब्द इसी मानस प्रतिमा का पर्याय है[2] ।"

साहित्य में बिंबात्मक प्रयोग के द्वारा संवेदनाओं का सार्थक चित्र उभर आता है जिस कारण सूक्ष्मातिसूक्ष्म अर्थों की गहराई स्पष्ट हो जाती है। सौन्दर्यानुभव के सूक्ष्म और पारदर्शी रहस्यों को मूर्त करने में भी बिंब सहायक होते हैं ।

---

1. डा॰ कुमार विमल, सौन्दर्य शास्त्र के तत्व - पृ॰201
2. हिन्दी साहित्य कोश भाग - 1, सम्पादक धीरेन्द्र वर्मा - पृ॰558

आज की कहानी में बिंबों का व्यापक एवं महत्वपूर्ण प्रयोग हो रहा है युग की उलझन भरी स्थितियों की जटिलता को व्यक्त करने के लिए साहित्य में बिंबों के सार्थक प्रयोग पर विशेष बल दिया जा रहा है। "बिंब रचना की प्रक्रिया पर ध्यान देने से ज्ञात होता है कि यह प्रयास एक कठिन रचनात्मक संकल्प है। रचना प्रत्यक्ष संवेदना की अभिव्यक्ति से आगे जाकर विशेष अनुभवों की अभिव्यक्ति हो, इसके लिए यह आवश्यक होता है कि रचनाकार अपनी मानसिक प्रतिक्रियाओं को समकालीन यथार्थ के प्रकाश में देखें। तात्कालिक मानसिक प्रतिक्रियाओं को अधिक गहरे स्तर पर व्यक्त करने के लिए असम्बद्ध और टूटे हुए बिंबों को सम्पूर्ण सार्थकता में उपलब्ध करने का प्रयत्न आज के कुछ आत्मचेता कहानीकारों में है इसमें सन्देह नहीं[1]।" संक्षेप में आज की कहानी की भाषा में विशिष्ट एवं सूक्ष्म इन्द्रिय बोधों को मूर्तित करने वाले बिंब की बहुलता है।

बिम्बों के प्रकार -भेद

बिंब मुख्यतः दो प्रकार के होते हैं (1) स्थूल संवेदनात्मक और सूक्ष्म संवेदनात्मक। स्थूल संवेदनात्मक बिंब पाँच प्रकार के हैं।

1. दृश्य या चाक्षुष बिंब
2. श्रव्य या नादात्मक बिंब
3. स्पर्श बिंब
4. गन्ध या घ्राण विषयक बिंब
5. आस्वाद्य बिंब

---

1. परमानन्द श्रीवास्तव - आज की हिन्दी कहानी, नयी कहानी, सन्दर्भ और प्रकृति (सं॰देवीशंकर अवस्थी) - पृ॰133

1· दृश्य या चाक्षुष बिंब

चाक्षुष बिंब का अभिप्राय नेत्रों से सम्बन्धित बिंब से है। चाक्षुष बिंब पूर्णतया चित्रात्मक एवं आकारवान् होते हैं जिस कारण इनका स्वरूप स्पष्ट बोधगम्य होता है। चाक्षुष बिंबों के आयाम अधिक मूर्त होते हैं। "यही कारण है कि ऐसे प्रत्येक अनुभव के लिए जिससे किसी भी इन्द्रिय का सीधा सन्निकर्ष होता है 'प्रत्यक्ष' विशेषण का ही प्रयोग किया जाता है[1]।"

2· श्रव्य या नादात्मक बिंब

श्रव्य या नादात्मक बिंबों का संबंध कर्णेन्द्रियों से होता है। ये बिंब स्पष्ट रूप से ध्वनि चित्र ही होते हैं। श्रव्य बिंब भावों को संवेद्य बनाते हैं जिसका प्रभाव मानव हृदय की अतल गहराई पर पड़ता है। वर्ण, ध्वनि, लय आदि श्रव्य बिंब हैं। श्रव्य बिंब ध्वनि प्रतीकों पर आश्रित भी होते हैं जैसे वीणा, वंशी आदि।

3· स्पृश्य बिंब

स्पर्शजन्य संवेदनाओं के समन्वय से निर्मित बिंब को स्पृश्य बिंब कहते हैं। कर्कश, मखमली, कोमल आदि स्पर्श के वाचक शब्द हैं।

1· डा॰ नगेन्द्र - काव्य बिंब - पृ॰90

4• गन्ध या घ्राण बिंब

विभिन्न प्रकार के गंध रूपों के प्रतीक मूलों के द्वारा घ्राण बिंबों का सर्जन होता है। दृश्य को सजीव बनाने में गंध बिंब सहायक होते हैं।

5• आस्वाद्य बिंब

आस्वाद्य बिंब अधिक जीवंत होते हैं क्योंकि सौन्दर्य का आस्वादन सुलभ होता है। इसकी अभिव्यक्ति एवं व्याख्या में आस्वादपरक बिंबों के प्रयोग अधिक होते हैं।

सूक्ष्म संवेदनात्मक बिंबों में स्थूल ज्ञानेन्द्रियों की अपेक्षा सूक्ष्म ज्ञानेन्द्रियों पर विशेष बल दिया जाता है। ये मुख्यतया दो प्रकार के हैं

1• काल्पनिक बिंब

काल्पनिक बिंब जीवन जगत से परे काल्पनिक जगत से सम्बन्धित होते हैं।

2• स्मृति बिंब

जब स्मृति द्वारा बिंबों की सृष्टि होती है तो कल्पना निष्क्रिय रहती है। "स्मृति जन्य बिंब पूर्वगामी अनुभूति का पुनरास्वाद मात्र होता है, जैसे अपने किसी मित्र की याद करने पर उसके रूप, स्वर आदि की दृष्ट और शब्द प्रतिमाएं हमारे मन में आ जाती हैं।[1]"

1• हिन्दी साहित्य कोश - भाग - 1. प्र·सं·धीरेन्द्र वर्मा. पृ·558

इस प्रकार विविध स्तरीय बिंबों के माध्यम से रचनाकार लेखकीय संवेदना और पाठकीय संवेदना के बीच तादात्म्य स्थापित करता है और अपनी अभिव्यक्ति को अनुभूति परक बनाने का प्रयास भी करता है इससे भाषा का स्वरूप विशेष आकर्षक लगने लगता है। इस प्रकार बिंब अनुभूति एवं अभिव्यक्ति के कार्यक्षेत्र में बेजोड़ योगदान के अधिकारी बन जाते हैं।

सांकेतिकता

सांकेतिकता कहानी साहित्य की महत्वपूर्ण उपलब्धि है। बिंब और प्रतीक की भांति संकेत भी भाषा के सौन्दर्यात्मक वैशिष्ट्य को बढ़ाता है। साथ ही साथ उसकी संवेदनशीलता को भी गहन बनाता है। संकेत और प्रतीक एक से लगने पर भी उसमें कुछ अन्तर अवश्य है। "संकेत और प्रतीक दोनों में व्यापकत्व और संकोचन का अन्तर है। प्रत्येक प्रतीक संकेत हो सकता है, पर प्रत्येक संकेत प्रतीक नहीं हो सकता। संकेत का भाषा प्रतीक से अधिक अनिश्चित और अनेकविध होता है।[1]"

डॉ० रघुनाथ सिंह ने डॉ० जुंग के अनुसार प्रतीक और संकेत के पारस्परिक अन्तर को इस प्रकार स्पष्ट किया है :- जब परोक्ष अथवा अज्ञात वस्तु का चित्रण किया जाता है, वहाँ उस चित्र को प्रतीक कहा जाता है और जब किसी प्रत्यक्ष एवं सूक्ष्म भावात्मक सत्ता की अभिव्यक्ति अपेक्षाकृत सामान्य और स्थूल वस्तु के चित्रण द्वारा होती है तो उसे संकेत कहते हैं

---

1. पाण्डेय शशिभूषण 'शीतांशु' - नयी कहानी के विविध प्रयोग - पृ.143

प्रतीक के द्वारा जहाँ अप्रस्तुत विषय को प्रस्तुत किया जाता है वहाँ संकेत के माध्यम से अप्रस्तुत की ओर इशारा ही किया जाता है। इस प्रकार संकेत और प्रतीक एक से लगने पर भी दोनों में पारस्परिक भिन्नता है ।

सांकेतिकता नयी कहानी और साठोत्तरी कहानी की एक प्रमुख उपलब्धि है । सांकेतिकता की प्रवृत्ति प्रेमचन्द कालीन कुछ कहानियों में देखी जा सकती है । लेकिन नयी कहानी से ही उसे स्पष्टता एवं व्यापकता मिली । अत: सांकेतिकता का सही विकास नयी नई कहानी से ही मान सकते हैं । आज की कहानी में सांकेतिकता का अधिक सूक्ष्म उपयोग किया जा रहा है और यह कथन युक्ति पूर्ण है कि "नयी कहानी संकेत करती नहीं, बल्कि स्वयं संकेत है[1] ।"

भाषा का आन्तरिक सौन्दर्य लेखिकाओं की कहानियों के सन्दर्भ में

वर्तमान युग के कहानीकारों ने आधुनिक मानव की जटिल मनोवृत्ति को व्यक्त करने के लिए प्रतीकों का अर्थपूर्ण प्रयोग किया है । लेखिकाओं में भी यह विशेषता देखी जा सकती है । प्रतीकों के सार्थक प्रयोग से न केवल भाषागत सौन्दर्य ही बढ़ता है अपितु रचनात्मक प्रक्रिया में कुछ वास्तियत भी नजर आने लगती है। "प्रतीकों का महत्व इतना ही नहीं, इससे कुछ अधिक है । उनकी सांकेतिक प्रकृति ने जहाँ गम्भीर अर्थवत्ता को पकड़ने और उनके सम्प्रेषण की "साधारणीकरणता" की दिशा में अनेक प्रयोग करने का गौरव दिया, वहाँ व्यक्ति के अपने अनुभवों को तटस्थ होकर देखने की निर्व्यक्तिकता भी दी[2] ।"

1• नामवरसिंह - कहानी : नयी कहानी - पृ•42
2• राजेन्द्र यादव - एक दुनिया समानान्तर भूमिका - पृ•67

मन्नू भंडारी की कहानियों में प्रतीकों का व्यापक एवं चमत्कारपूर्ण प्रयोग हुआ है। चश्मे, श्मशान, कील और कसक, खोटे सिक्के, बन्द दराजों के साथ, आदि कहानियाँ प्रतीकात्मकता को सार्थक करनेवाली है। "कील और कसक" कहानी में से एक उदाहरण "आँखें उस समय भी उसकी भरी, और उससे भी ज्यादा भरा उसका मन। तागे से एक कील निकली थी रानी ने देखा नहीं और जाने कैसा पकड़ा कि कील अंगुली को हाथ खींचते ही खून बह आया।[1]"

यहाँ कील प्रतीक है शेखर का जिसके समझाने में संतोष और कर रानी को कसक ही कसक हासिल होती है। यहाँ कील न केवल शेखर को प्रतीकित करता है, पु स्थूल पुरुष के दोहरे रूप को भी उभारता है।

प्रतीकात्मक कहानियाँ, उषा प्रियम्वदा ने भी बहुत सारी लिखी है जैसे - श्मशान, चामे, जिंदगी और गुलाब के फूल, टूटा दर्पण आदि। वापसी कहानी में लेखिका ने प्रतीक का स्पष्ट प्रयोग किया है, जैसे :- "गजाधर बाबू की पत्नी सीधे चौके में चली गई। बची हुई पठरियाँ को कटोरदान में रखकर अपने कमरे में लाई .... फिर बाहर आकर कहा, बाबूजी की चारपाई कमरे से निकाल दो उससे चलने को तक की जगह नहीं।[2]" यहाँ चारपाई प्रतीक है गजाधरबाबू की, जिस तरह चारपाई के कमरे में होने से चलने फिरने में दिक्कत होती है, उसी तरह गजाधर बाबू के घर पर रहने से घर वालों के स्वतंत्र जीवन में बाधा पड़ती है।

---

1. मन्नू भंडारी - कील और कसक, मैं हार गई - पृ॰ 133
2. उषा प्रियंवदा - वापसी - जिन्दगी और गुलाब के फूल - 65

प्रतीक के द्वारा पात्रों की कुण्ठाग्रस्त मनःस्थिति को आंकने का प्रयास दीप्ति खंडेलवाल ने किया है । "वह तीसरा" एक प्रतीकात्मक कहानी है जिसमें "तीसरा" प्रतीक है व्यक्तिगत अहं का जो तलवार की भांति पति पत्नी के बीच लटका रहता है । इस कहानी का एक उद्धरण दृष्टव्य है - "सुहाग सेज पर हम दोनों के बीच कोई तीसरा इतनी जगह घेर चुका था कि हम दूर-दूर जरा-सी जगह पर टिके-भर रह गये थे । और मुझे लगता था, मैं किसी भी क्षण छपरखट से गिर सकती हूं । यह डर मेरी आंखों की नींद ले गया, मेरे मन का चैन भी[1] ।"

उक्त प्रसंग में सुहाग सेज प्रतीक है जिंदगी रूपी सेज की, जिस पर दो अहं ग्रस्त पति-पत्नी दूर-दूर लेटे हुए हैं और उनके बीच पड़ा है उनका अहं जो किसी भी पल किसी एक को धक्का देकर नीचे गिरा सकता है। यहाँ अहं को एक अनदेखे प्रतीक के रूप में चित्रित कर लेखिका ने टूटते हुए संबंधों को एक नये क्षितिज पर पहुंचा दिया है ।

निरुपमा सेवती ने जीवन के आन्तरिक अनुभवों को प्रतीकों द्वारा अभिव्यक्ति दी है । उनकी प्रतीकात्मक कहानियां हैं ठहरी हुई खरोंच, कुछ होने की स्थिति, खामोशी को पीते हुए, टुकड़ा आदि । टुकड़ा कहानी का एक उदाहरण - "सतसुहाग बादल मनःआसन्न से सांवले गये थे । इस तरह के सलियाले बादलों के साथ उसका गहरा संबंध है । ऐसे में न चाहने पर भी अक्सर वह शाम याद आती है[2] ।"

---

1. दीप्ति खंडेलवाल - वह तीसरा, वह तीसरा, पृ.24
2. निरुपमा सेवती - टुकड़ा, खामोशी को पीते हुए, पृ 36

उक्त संदर्भ में महलुहान बादल नायिका की घायल जिंदगी का प्रतीक है। महलुहान बादल बादलों का जिक्र कर लेखिका ने नायिका के जीवन की किसी दर्द भरी दास्तां को प्रतीकात्मक रूप से चित्रित करना चाहा है। शायद "वह शाम" नायिका के लिए बहुत उदास एवं रंगहीन रही होगी और उस रंगहीन शाम की याद मटियाले बादलों में समायी सी उसे लगती है।

प्रतीक के द्वारा जीवन के यथार्थ को गहराई के साथ आंकने आंकने का प्रयास मृदुला गर्ग ने भी किया है। मृदुला गर्ग की कई कहानियां प्रतीकात्मक हैं यथा किली आफ दी वेली, कितनी कैदें, टुकड़ा-टुकड़ा आदमी, गुलाब के बगीचे तक आदि। लिली आफ दी वेली में प्रतीकात्मक प्रयोग का एक अच्छा उदाहरण स्पष्ट है।

"वह कैक्टस पर खिले हुए उस पुष्प के समान थी जिसे घर-घर फूलदान में नहीं सजाया जा सकता।"[1]

उक्त उद्धरण में कैक्टस का फूल प्रतीकात्मक शब्द के रूप में प्रयुक्त हुआ है। कैक्टस के फूल में सुन्दरता होती है लेकिन खुशबू नहीं होती। एकान्त में सबसे तिरस्कृत होकर खिलने के कारण उस फूल को तोड़ने वाले कम होते हैं। इस दृष्टि से फूलदान में सजाने की संभावना भी कम है। रेगिस्तान के फूल रेगिस्तान में ही मुर्झा जाते हैं यहां लेखिका ने नायिका को भी कैक्टस पर खिले हुए फूल के समान माना है। जीवन की परेशानियां उसे कैक्टस का फूल बनने को बाध्य करती हैं।

---

1. मृदुला गर्ग - लिली आफ दी वेली, टुकड़ा-टुकड़ा आदमी - पृ. 126

कृष्णा सोबती की "बादलों के घेरे" "दो राहें : दो बाहें" आदि प्रतीकात्मक कहानियाँ हैं । बादलों के घेरे कहानी का शीर्षक स्वयं ही प्रतीकात्मक है। इस कहानी में प्रतीकात्मकता को उभारने वाला एक प्रसंग दृष्टव्य है -

"मंदिर के बंद कपाटों के आगे माथा टेक मन्नो उठी तो मानो मन्नो ही नहीं उठ रही थी । ऐसे दिखा कि यह झुकी मन्नो नहीं, मन्नो की व्यर्थ हो गयी विवशता थी, जिसने भाग्य के इन कपाटों के आगे माथा टेक दिया था ।[1]"

यहाँ मन्दिर के बंद कपाट मन्नो के भाग्य के बन्द कपाट के समान हैं । मन्नो की रोगग्रस्त जिंदगी उसके लिए एक विवशता है। उसकी विवश जिंदगी भाग्य के बंद कपाटों के आगे नतमस्तक है। अर्थात् एक नकारात्मक स्थिति से गुजरती हुई जीवन की हार को अपनाने की विवशता उस पर छाया की तरह मंडराती रहती है। वही छाया भाग्य के सामने माथा टेकनेवाली मन्नो पर और भी काली पड जाती है ।

लेखिकाओं की कहानियों में बिंबों का प्रयोग

प्रतीक की तरह बिंब भी परिवेश जन्य परिस्थितियों का बोध कराने में सक्षम है । लेखिकाओं ने मानव एवं प्रकृति के सूक्ष्म रहस्यों को रेखांकित करने केलिए बिंब विधान पर विशेष बल दिया है । बिंबों के अनेकानेक रूप इन लेखिकाओं की लेखनी में देखा जा सकता है ।

---

1. कृष्णा सोबती - बादलों के घेरे, बादलों के घेरे - पृ.26

प्र य: सभी लेखिकाओं की कहानियों में दृश्य बिंब, नाद बिंब, घ्राण बिंब, काल्पनिक बिंब आदि का सन्दर्भ सापेक्ष निर्वाह हुआ है ।

दृश्य बिंब का उदाहरण

"जैसे ही बरामदे में पैर रखा, मैं हैरत में आ गई । एक बहुत ही खूबसूरत मन हाथ पैर पटक-पटक कर बुरी तरह चिल्ला रही थी । सारी सिस्टर्स उस संभाले हुए थी, मगर बड़ी बेचैनी से उसे शान्त करने की कोशिश कर रही थी । तीन चार सिस्टर्स ने उसे पकड़ रखा था, उसके बावजूद वह बुरी तरह हाथ पैर पटक रही थी । उसे मैंने जो पास देखा तो लगा कि ऐसा रूप मैंने आज तक नहीं देखा[1] ।"

उक्त उद्धरण में चित्रात्मकता है। इसे पढ़ने के बावजूद ऐसा अनुभव होता है कि सारे दृश्य हमारे सामने घट रहे हों । यह दृश्य बिंब की विशेषता है

दृश्य बिंब का एक और उदाहरण उषा प्रियम्वदा की कहानी "स्वीकृति" में प्रयुक्त है - "तट के किनारे सघन वृक्ष, जिनके पत्ते पतझर के आगमन की सूचना देते हुए इनके पीले पड़ गये हैं, दाईं ओर एक सार्व जनिक टेलीफोन बूथ, तट से सटा एक कैफे, जिसकी दीवारों का सफेद रंग पानी में धुल-धुल कर मैला हो गया है[2] ।"

यहाँ लेखिका ने सूक्ष्म विवरणों के माध्यम से दृश्य को जीवन्त बनाया है। इस तरह के दृश्य बिंबों के माध्यम से कहानी की भाषा का सौन्दर्य तो बढ़ता है साथ-साथ आस्वादन की सीमाएं भी गहरी होने लगती हैं ।

1. मन्नू भंडारी - ईसा के घर इंसान - मैं हार गई, - पृ.19
2. उषा प्रियम्वदा - स्वीकृति, कितना बड़ा झूठ - पृ.82

कृष्णा सोबती ने भी दृश्य बिंब के माध्यम से कई कहानियों में बिंबात्मकता को उभारने का प्रयास किया है यथा - "सांझ दोहरी होने को आयी। सूरज की डूबती छाँया ऊँचे गुम्बद पर फिर आयी झाड़ियों में खड़े पके पत्तों के पेड़ हवा में खड़खड़ाये और छाती पर बिखर गये।"[1]

उक्त दृश्य बिंब में स्पष्टता के कारण लगता है कि चित्रकार ने लकीरों के माध्यम से समूचे दृश्यात्मकता को सामने उतार दिया है।

स्पर्श बिंब

"वह गाड़ी के साथ कदम आगे बढ़ाता है और मेरे हाथ पर धीरे से अपना हाथ रख देता है मेरा रोम-रोम सिहर उठता है मन करता है चिल्ला पड़ूँ - मैं सब समझ गई, निशीथ सब समझ गई।"[2]

स्पर्श के साथ रोम-रोम के सिहरने में बिंबात्मकता है। इस बिंब के माध्यम से नायिका की मानसिक प्रतिक्रियाओं की स्पष्ट झलक हमें मिल जाती है। नायक एवं नायिका की अनुभूतियाँ स्पर्श के कारण एक चरम बिन्दु पर केन्द्रित होती दिखायी पड़ती है।

स्पर्श बिंब का एक मनोरम चित्र उषा प्रियम्वदा की कहानी प्रतिध्वनियाँ में चित्रित है - "आँखें बंद रहने पर भी अंगुलियों के स्पर्श से सारे शरीर में रह-रह कर रोएं सरसरा उठते हैं। वह कुछ और पास

---

1. कृष्णा सोबती - दोहरी सांझ, बादलों के घेरे - पृ. 99
2. मन्नू भण्डारी - यही सच है और अन्य कहानियाँ - पृ. 170

सिमट आई।[1]"

रोएं खड़-खड़ उठते हैं - यह अनुभूति स्पर्शजन्य संवेदनाओं के समन्वय से उत्पन्न है संवेदनात्मक अनुभूति की अभिव्यक्ति में स्पर्श बिंबों का विशेष महत्व है।

<u>घ्राण बिंब</u>

"हाथ दुखने लगा तो उसने बिना सोचे ही पास में उतारकर रखा राजन का कोट सिर के नीचे लगा लिया। करवट ली तो उसकी सांसों में बरसों बाद पुरुष-शरीर की अपनी विशिष्ट गंध भर गई, तम्बाकू पसीने और अनाम हल्की सी सुगन्ध, सूखी धरती पर पानी की पहली बौछार-सी फिर प्रिय, फिर सुलभ।[2]"

उक्त उदारण में घ्राण बिंब के आधार पर तुलनात्मक विवरण के द्वारा पुरुष शरीर की गंध का बिंबात्मक चित्रण हुआ है। सूखी धरती पर पानी की पहली बौछार जितनी प्रिय और सुलभ लगती है वैसे ही बरसों बाद किसी पराये पुरुष के शरीर से निकली पसीने और तम्बाकू की गंध नायिका को उत्तेजित करती है।

घ्राण बिंब का सूक्ष्म चित्रण मन्नु भण्डारी ने भी किया है। जैसे "गुलमोहर की टहनियाँ छत की मुंडेर को ढकती हुई छत पर आ गई थी

---

1. उषा प्रियम्वदा - प्रतिध्वनियाँ, कितना बड़ा झूठ - पृ.43
2. वही - मोहबंध - पृ.107

और तारों और फूल और बत्तियाँ बिखरी पड़ी थीं । ठंडी महकती बयार धीमे-धीमे चल रही थी ।[1]"

यहाँ गुलमोहर की खुशबू बयार को भी सुगन्धित कर देती है । ठंडी महकती बयार से सारा वातावरण महक उठता है ।

घ्राण बिंब का प्रयोग दीप्ति खंडेलवाल की कहानियों में भी हुआ है । "गुलदस्ते के फूलों में भीनी भीनी गन्ध उठ रही है और सुरुचि से सजे कमरे की किसी भी चीज पर जरा भी धूल नहीं ....।[2]"

उक्त उदाहरण में भीनी-भीनी गंध उठ रही है प्रयोग में फूलों की खुशबू का स्पष्ट विवरण है ।

<u>ध्वनि बिंब</u>

"मैं अपने स्पर्श से उसके मन में तारों को झनझना देना चाहती हूँ पर वैसा अवसर नहीं आता । जिस वही देता है मुझ से तो विरोध भी नहीं किया जाता ।[3]"

---

1. मन्नू भंडारी - एखाने आकाश नाई, मन्नू भंडारी की श्रेष्ठ कहानियाँ - पृ.103
2. दीप्ति खंडेलवाल - झोंका - वह तीसरा - पृ.105
3. मन्नू भंडारी - यही सच है - मन्नू भंडारी की श्रेष्ठ कहानियाँ - पृ.37

"मन के तारों को झनझना देना" इस प्रयोग में एक प्रकार की नादात्मकता है जो हृदय की गहराई में उतर कर भावों को सहलाती है और संगीतात्मक बनाती है । इससे रूमानी वातावरण की सृष्टि तो होती है और साथ-साथ प्रेम जनित भावुकता का सौन्दर्यात्मक स्वरूप भी अंकुरित होने लगता लगता है । उषा प्रियम्वदा ने ध्वनि बिंब के जरिये परिस्थिति का सार्थक चित्रण किया है जैसे - "हाथ शिथिल और कान अन्दर और बाहर के विभिन्न स्वर सुनते रहे । खिड़की के पास से गुजरते दो बच्चे, सड़क पर किसी गाड़ी की बेसुरी बजाती बाँसुरी, खट-खट करते भारी जूते, अन्दर बर्तन की हल्की खट-खट, तरकारी में पानी पड़ने की छन्न और सीधी जाती घास पाई के पावों की फर्श में रगड़ ।"[1]

यहाँ बेसुरी बजती बाँसुरी की नादात्मकता खट-खट करते भारी जूते, बर्तनों की खट आदि के स्पष्ट चित्रण से ध्वनि बिंब का प्रत्यक्ष चित्रण उभरता है ।

ध्वनि बिंब का प्रयोग दीप्ति खंडेलवाल ने भी किया है ।

खट-खट-खट यह कौन खट खटा रहा है ? ....
खट खट ...... रोहित बीयर के नशे में था या नींद के ? ....
खट खट खट .... ।

दरवाजे पर हो रही खट-खटाहट को लेखिका ने बड़े ही मनोरम ढंग से चित्रित किया है। नशे में चूर रोहित को बाहर सुनायी पड़ने वाली खटखटाहट मन के किवाड़ पर होने वाली खट खटाहट के समान आभासित होती है ।

---

1. उषा प्रियम्वदा - जिंदगी और गुलाब के फूल - पृ.129

ध्वनि बिंब का स्वरूप मृदुला गर्ग की कहानियों में भी उजागर हुआ है जैसे - "धम-धम लय बद्ध ताल पर तीव्र आर्तनाद करती एक मां हथा ड़ार पर दिखी। फौरन त्रिविध संगीत समान पूरे कमरे में धमक और चीत्कार की संगीत गूंज उठी।"[1]

उक्त उद्धरण में नादात्मकता है। महिला के चीख-चिल्लाहट से कमरा गूंज-उठता है और संगीत मय हो जाता है। यहाँ नाद बिंब का स्पष्ट स्वरूप झलकता है।

ध्वनि बिंब का सार्थक प्रयोग निरुपमा सेवती की कहानियों में देखा जा सकता है जैसे - "कौवों का झुण्ड एक सन्ध्याले ठूंठ पेड पर से उड़ा और हवाओं में कांव-कांव का एक खाली सा शोर गूंज गया। अनिमा की आवाज में घुरघुरी थी "जल्दी करो, प्लीज, गाडी चलाओ न किसी तरह।[2]

यहाँ हवाओं में कांव-कांव का एक खाली सा शोर" में ध्वन्यात्मकता का आभास होता है और इसके माध्यम से परिवेश की भीषणता भी निर्मित होती है।

स्मृति बिंब

मेरे सामने तो पटना में गुजारी सुहानी सन्ध्याओं और चांदनी रातों के वे चित्र उभर आते हैं, जब घण्टों समीप बैठे, मौन भाव से हम एक दूसरे को निहारा करते थे। बिना स्पर्श किए भी जाने कैसी मादकता तन मन को विभोर किए रहती थी, जाने कैसी तन्मयता में हम डूबे रहते ..... एक विचित्र सी स्वप्निल दुनिया में।"[3]

---

1. मृदुला गर्ग - दुनिया का कायदा, कितनी कैदें - पृ.105
2. निरुपमा सेवती, सम्बुलन, खामोशी को पीते हुए, - पृ.68
3. [illegible]

यहाँ नायिका दीपा अपने स्मृति पटलों को खोल कर अतीत के विस्तृत क्षेत्र में प्रवेश करते हैं अतीत के सुनहरे क्षणों को अपनी सम्पूर्णता के साथ सौन्दर्य से आलिप्त कर क्षण भर के लिए यथार्थ बनाने में स्मृति जनित यह चित्र अत्यन्त सफल निकलता है

स्मृति बिंब का एक दूसरा उदाहरण -"सत्य से शादी भी कितनी उथल-पुथल में हुई थी । सत्य पोस्ट डाक्टोरल फैलो होकर विदेश जा रहा था । पत्नी पढ़ी-लिखी हो, और दो टिकटों का प्रबन्ध दहेज में मिले धन से हो सके उसकी केवल यही दो माँगें थी । विवाह के बाद दो दिन भी चैन से न बिता सकी थी .... ।

उमा को अपने बारे में भ्रम कभी नहीं रहा हालांकि-शुरू शुरू में जब कालेज में पढ़ना शुरू किया था एक खुमार सा मन पर छाया रहता । उसे लम्बे बालों की ढीली ढीली चोटी कर सहेलियों के साथ अच्छा गेट पर घूमना अच्छा लगता था ।[1]"

उक्त उद्धरण में उमा के जीवन की अतीत की स्मृतियाँ एक प्रवाह की तरह वर्तमान में साकार हो उठती हैं । उमा अपने विवाह कालीन बातों को स्मरण कर उससे पूर्व की घटनाओं को सहलाने लगती है और सारी घटनाएं उसके स्मृति पटल में चित्र की भाँति बिम्बित हो उठती हैं ।

दीप्ति खण्डेलवाल ने भी स्मृति बिंब के माध्यम से अतीत के चित्रों को वर्तमान में साकार करने का सफल प्रयास किया है जैसे -

"कोमल क्षणों में ताज और ताजा साथ साथ उभरते । फिर लगता, गुलमोहर का लाल रंग अनुराग का नहीं प्रतिशोध का प्रतीक है ......

---

1. उषा प्रियम्वदा - स्वीकृति, कितना बड़ा झूठ - पृ.88

जो चाहता संदीप से पूछें तुमने कौन सी कसम खा ली है प्यार की या प्रतिशोध की।"[1]

उक्त सन्दर्भ में नायिका अतीत के प्रेम प्रसंग को याद कर वर्तमान से उसकी तुलना करती है लेकिन उसे लगता है कि वर्तमान के जीवन से उसका अतीत का कोई संबंध नहीं है।

स्मृति बिंब का एक चित्र कृष्णा सोबती की कहानी बादलों के घेरे में देखा जा सकता है।

-"मन्नो की याद आज भी आती है। आज भी वह याद आती है, वह दुपहरी, जब मन्नो और मैं उस बड़ी झील के किनारे से लगी पगडंडी पर झूलते रहे थे। मीठा मीठा सा दिन था। पहली बार उस भीगे चेहरे की मिठास के सम्मुख मैं पानी सा बह गया था। एक टक उन झुकाते बालों को देखता रह गया था और देखता गया था।"[2]

यहाँ बहुत ही भावपूर्ण प्रसंग को लेखिका ने स्मृति बिंब के माध्यम से चित्रित किया है। मन्नो की याद नायक को हमेशा सताती है क्योंकि वह उसे बहुत चाहता था लेकिन वह उसे अपना नहीं पाता है। इसका गम उसे आजीवन रहता है। मन्नो की याद उसकी जिंदगी की एक और बन जाती है जो रह रह कर उसे सताती है।

---

1. दीप्ति खंडेलवाल वह तीसरा, वह तीसरा - पृ.19
2. कृष्णा सोबती, बादलों के घेरे, बादलों के घेरे, - पृ.25

काल्पनिक बिंब

काल्पनिक बिंबों का प्रयोग अनेक लेखिकाओं ने किया है। जैसे निरुपमा सेवती की कहानी सुनहरे देवदार में काल्पनिक बिंब का सार्थक प्रयोग हुआ है जैसे - "मुझे लगा, वह इस क्षण पहले से भी कहीं अधिक उदास लगने लगी है। कम से कम मैं ने तो पिछले कुछ घण्टों से कोई भी ऐसी बात नहीं कही जिसका वह बुरा मान जाए, मैं ने ईमानदारी से सोचा। शायद मुझे यूं ही एक उदासी उसके चेहरे पर दिखाई दे रही होगी - पेड़ों के नीचे भीगी-भीगी सी घास थी और दूर पहाड़ियाँ कहीं बहुत नजदीक होने का आभास दे रही थीं। उतरती धूप फीकी होकर मादक हो गयी और इस सबके बीच रश्मि की ओर देखने से मैं स्वयं को नहीं रोक पा रहा था।[1]"

प्रस्तुत उदाहरण में "धूप का फीकी होकर मादक हो जाना" "पहाड़ियों का करीब आना" आदि के प्रयोगों द्वारा काल्पनिक बिंब को जिस सफलता के साथ प्रस्तुत किया है उसमें एक विशेष औचित्य है। नायक को धूप का धीमापन और मादकता में अपनी प्रेमिका की मादकता और फीकापन नजर आता है। अनुभूति की इस पारदर्शी बिंब में पात्र का मन कल्पना लोक में रम जाता है।

काल्पनिक बिंब का सहारा मृदुला गर्ग ने भी लिया है, जैसे - "बंद आँखों के सामने के धुंधलके में फोरम गुलाब का एक नन्हा सा बगीचा खिल आया। छोटा सा बगीचा खिल आया। छोटा सा बगीचा और उससे सटी खपरैल की छत वाली छोटी-सी काटेज, उसके अन्दर से झांकते दो चेहरे।[2]"

---

1. निरुपमा सेवती - सुनहरे देवदार, खामोशी को पीते हुए - पृ.17
2. मृदुला गर्ग - गुलाब के बगीचे तक, टुकड़ा-टुकड़ा आदमी - पृ.71

यहाँ लेखिका ने नायक के जीवन के सपनों को कल्पना के सार्थक बिंबों के सहारे प्रस्तुत किया है । 'गुलाब का एक नन्हा सा बगीचा नायक का सपना है जिसे वह साकार कर पाने में असमर्थ है । अतः कल्पना के सहारे वह अपनी भावनाओंको चित्रित करता है ।

इस प्रकार बिंबों के सन्दर्भ-सापेक्ष प्रयोग से लेखिकाओं की कहानियों की सांकेतिक अभिव्यक्ति में तीव्रता आयी है और ये कहानियाँ बाह्याडम्बर से मुक्त होकर अपने सही रूप को प्राप्त करने में सफल भी हुई है ।

लेखिकाओं की कहानियों में संकेतों का प्रयोग

नयी कहानी एवं साठोत्तरी कहानी की लेखिकाओं ने सांकेतिकता का सार्थक उपयोग अपनी कहानियों में किया है । सांकेतिकता के माध्यम से कहानी की गहराई को पकड़ने की कोशिश इन लेखिकाओं की रही है । अधिकतर यह संकेत उन स्थितियों में ज्यादा सहायक लगते हैं जहाँ लेखिकाएं बहुत सारी अनकही बातों को मौन रूप से कह देना चाहती हैं ।

सांकेतिकता का सफल निर्वाह मन्नू भण्डारी की कहानियों में हुआ है जैसे फिर वही मौन । "खाने में मेरा जरा भी मन नहीं लग रहा है, पर यन्त्र चालित - सी मैं खा रही हूँ । शायद वह भी ऐसा खा रहा है । मुझे फिर लगता है कि उसके होंठ फड़क रहे हैं, और छुरी पकड़े हुए उँगलियाँ काँप रही हैं मैं जानती हूँ, वह पूछना चाहता है, दीपा तुमने मुझे माफ तो कर दिया न ।"[1]

1. मन्नू भण्डारी - यही सच है, मन्नू भंडारी की श्रेष्ठ कहानियाँ - पृ.136

उक्त प्रसंग में लेखिका ने नायक एवं नायिका के शारीरिक क्रियाओं के माध्यम से मानसिक हलचल की ओर संकेत किया है । दोनों एक लंबे अरसे के बाद मिलते हैं लेकिन वे अपने विचारों को प्रकट कर पाने में असमर्थ हैं । फड़कते होंठ, कांपती उंगलियाँ आदि के माध्यम से लेखिका ने नायक के मानसिक कशमकश की ओर संकेत किया है ।

मन्नू भंडारी ने सांकेतिक प्रयोग अन्य कई कहानियों में किया है जैसे रानी माँ का चबूतरा, कमरे खाने आकाश नाई, नयी नौकरी, बंद दराजों के साथ आदि ।

सांकेतिक प्रयोग मृदुला गर्ग की कहानियों की एक विशेषता है । अवकाश कहानी में लेखिका ने बखूबी के साथ इसका निर्वाह किया है जैसे -

-"वह फौरन उठ कर बाथरूम में चली गयी । लगा धो देने से ही सब कुछ धुल जायगा । पानी डालते डालते उसने सोचा, यह तो सर्दी से ठिठुरते भिखारी पर दुशाला डाल देने जैसी बात हुई ।"[1]

प्रस्तुत अंश में दो प्रकार के अर्थ सांकेतिकता के आधार पर उभर कर सामने आते हैं । संकेत से उभरने वाला प्रथम अर्थ नायिका के भावी कार्यक्रमों की ओर प्रकाश डालता है । पति के साथ शारीरिक संबंध जोड़ने के बाद नायिका स्नान कर शरीर, को स्वच्छ करती है लेकिन यह उपक्रम ठिठुरते भिखारी पर दुशाला डालने के समान है ।

---

1. मृदुला गर्ग - अवकाश टुकड़ा-टुकड़ा आदमी - पृ.48

अर्थात् सर्दी से ठिठुरते हुए भिखारी पर दुशाला डाल देने से वह न तो पूर्ण रूप से सर्दी से बच सकता है और न ही उसकी समस्या का शाश्वत समाधान दुशाला प्रस्तुत कर सकता है यहाँ पति-पत्नी के शाश्वत संबंध को वह पानी से धो डालना चाहती है, परन्तु यह नामुमकिन है । स्वयं वह इस बात को जानती भी है ।

उक्त उदाहरण का सांकेतिकता के जरिये उभरने वाला दूसरा अर्थ इस प्रकार है । यहाँ लेखिका ने यह बात जाहिर की है कि सर्दी से ठिठुरते भिखारी के लिए दुशाला बेकार है। उसी तरह तात्कालिक रूप से पति से शारीरिक संबंध जोड़कर उसे सन्तुष्ट करने का प्रयास भी आधारहीन है ।

सांकेतिकता का सटीक उदाहरण उषा प्रियम्वदा की कहानी जिंदगी और गुलाब के फूल में दृष्टव्य है ।

"प्यार से बड़ी एक और आग होती है भूख की पेट की । वह आग धीरे धीरे सब लील लेती है ।[1]" उक्त पंक्ति में उषा जी ने जीवन की वास्तविकता की ओर संकेत किया है। जीवन यथार्थ के ठोस धरातल पर आधारित है । आदर्शात्मक वस्तु, यथार्थ की कठोर शिलाओं से टकराकर चूर-चूर हो जाते हैं । अर्थात् पेट की आग यानी भूख के समक्ष न माँ की ममता होती है न प्रेमिका का प्रेम और न ही स्वयं का अहं । यह एक ऐसी आग है जो जीवन के सारे संबंधों को जलाकर राख कर देती है ।

---

1. उषा प्रियम्वदा, जिंदगी और गुलाब के फूल - जिंदगी और गुलाब के फूल - पृ.131

निरूपमा सेवती की कहानियों में भी संकेत का प्रचुर प्रयोग हुआ है । जैसे - "मेरे दिल में कुछ पिघलने लगा था - रश्मि - रश्मि - । - और इसके बाद मैं किसी भी घटना के दृश्य को फ्रीजशॉट की सूरत नहीं देना चाहता था । बस यही क्षण यह दृश्य फ्रीज़ हो जाये ठहर जाये । छोटी सी पहाड़ी पर बना घर - कभी न भूल सकने वाली रश्मि की उपस्थिति - तीन पश्चात् यह मिलना और कुछ पिघले से एक दूसरे से जुड़ने की चाहना रखने वाले मन[1] ।"

उक्त उद्धरण में लेखिका ने नायक की क्षणानुभूति एवं क्षणों को पूर्ण रूप से आत्मसात करने की इच्छा की ओर संकेत किया है । नायक की जब अपनी परित्यक्ता पत्नी से पुनः भेंट होती है तो वह उन क्षणों को रोक लेना चाहता है, फ्रीज़ करना चाहता है । परन्तु कैसे ? नायक के मनोभावों को लेखिका ने पूर्ण रूप से सांकेतिकता के माध्यम से उभार पाने में सफल हुई है ।

सांकेतिकता का सूक्ष्म प्रयोग कृष्णा सोबती की कहानियों में भी देखा जा सकता है । जैसे -"आये दिन दवा के नये बदलते हुए रंग देखकर अब इतना तो जान गया हूँ कि इन छूटते छूटते तन में मन को बहुत देर भटकना नहीं होगा । एक दिन खिड़की से बाहर देखते-देखते इन्हीं बादलों के घेरे में समा जाऊँगा .... इन्हीं में समा जाऊँगा[2] ।"

उक्त उद्धरण में दवा के बदलते रंग के माध्यम से नायक की बढ़ती हुई बीमारी की ओर संकेत किया गया है । ज्यों-ज्यों रोग

---

1. निरूपमा सेवती - सुनहरे देवदार, खामोशी को पीते हुए - पृ.6
2. कृष्णा सोबती - बादलों के घेरे, बादलों के घेरे, पृ.24

बदला जाता है त्यों त्यों एक से बढ़कर एक रंग-बिरंगी दवाइयाँ सामने दिखायी पड़ती हैं जिसे देखकर नायक स्वयं अनुमान लगा लेता है कि वह अब चन्द दिनों का मेहमान है और कुछ दिनों के बाद वह बादलों के घेरे में समा जायगा।

दीप्ति खण्डेलवाल ने बड़ी बारिकी के साथ संकेत के माध्यम से संबंधों के अलगाव को प्रस्तुत किया है जैसे -

"सवेरे बासी होने लगे थे, शाम अनमनी। संदीप ठीक पाँच बजे ऑफिस से आते। ...... एक दूसरे के सामने खड़े हम कहीं और होते, एक दूसरे से दूर।"1

सवेरे बासी होने लगे, शाम अनमनी [illegible] [illegible], [illegible] के [illegible], [illegible] के [illegible] इस प्रकार के प्रयोग से लेखिका ने पति-पत्नी के बीच की दूरी और उनके बीच के मनमुटाव की ओर संकेत किया है। जवान पति पत्नी के लिए "सवेरे" का बासी होना" और "शाम अनमनी सी लगना उनके बीच के अलगाव को दर्शाते हैं।

भाषा का बाह्य स्वरूप - लेखिकाओं की कहानियों के सन्दर्भ में

नयी कहानी, विशेषकर साठोत्तरी कहानी की रचना-प्रक्रिया में लेखिकाओं ने जीवन के अनुभूत सत्य को सम्प्रेषित करने के लिए

---

1. दीप्ति खण्डेलवाल - वह तीसरा, वह तीसरा - पृ.20

कथ्य के अनुरूप सहज एवं जीवंत भाषा का प्रयोग किया है । अर्थात् ये लेखिकाएं उसी भाषा की हिमायती हैं जिसका प्रयोग वे सामान्य रूप से करती आ रही हैं । जीवन में नित-प्रतिदिन उठ रहे अन्तर्विरोधों एवं विसंगतियों को सहेजने में इन लेखिकाओं की भाषा सक्षम है । जहाँ एक ओर इनकी भाषा नगरों-महानगरों में समयी यांत्रिक ज़िंदगी की अभिव्यक्ति करती है तो दूसरी ओर ग्रामीण प्रदेशों एवं अंचलों में बिखरी स्थितियों को भी स्वर प्रदान करती हैं ।

भाषा की सपाटता, अपूर्ण, अधूरे वाक्य, अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग, व्यंग्य रूपक प्रयोग आदि लेखिकाओं की भाषा के बाह्य स्वरूप को अलंकृत करते हैं ।

सपाट भाषा का प्रयोग

भाषा की सपाटता आधुनिक लेखिकाओं की लेखनी की मुख्य प्रवृत्ति है । आज की कहानी जीवन की कहानी है जिस कारण उसकी भाषा भी जीवन की सपाट भाषा है । जीवन के यथार्थ को चित्रित करने के लिए लेखिकाओं ने सपाट भाषा का प्रयोग किया है । सपाट भाषा के कुछ उदाहरण नीचे द्रष्टव्य है । "गुलबदन प्याज आठ आने किलो । नये नये प्याज आठ आने किलो । अप्रैल की उस गम होते झुलसाती दोपहर को चीखता एक फटा स्वर चीख रहा है ।"[1]

---

1. दीप्ति खंडेलवाल - कोहरा में, सलीब पर - पृ.74

उक्त प्रसंग में लेखिका ने जीवन से संघर्ष करते हुए एक सब्जी वाले के स्वरूप को उभारा है जो अपनी जीविका चलाने के लिए अप्रैल की गर्म-शोले भड़काती दोपहर को चीख-चीख कर अपना व्यापार चलाता है। यहाँ उस सब्जीवाले के जीवन की परिस्थितियों के अनुकूल भाषा भी सपाट एवं साधारण बन गयी है ।

सपाट भाषा का प्रयोग मृदुला गर्ग की कहानियों में भी देखा जा सकता है ।

"अन्दर जीजी को स्टेशन छोड़ कर रश्मि और सतीश लौट आए हैं बुरा लगा है उनका जाना । उनका स्वभाव ही ऐसा है कि जब भी कुछ दिन रहकर वापस जाती है तो दुःख होता है । पूना में वे पहली बार आई थी । पर पहले उनके पास दिल्ली और लखनऊ आ चुकी है । अब दो दिन के लिए आई तो जैसे पूरा घर-हँसी-खुशी से भर उठा था ।"[1]

यहाँ लेखिका ने एक भावुक प्रसंग को प्रस्तुत किया है। लेकिन प्रसंग की भावुकता को मुखरित करने के लिए कहीं भी भावुक संवेदनशील साहित्यिक भाषा का प्रयोग नहीं किया है ।

भाषा का सपाट प्रयोग मेहरुन्निसा परवेज़ की कहानियों की भी एक विशेषता है जैसे -

---

1. मृदुला गर्ग - कितनी कैदें - पृ.38

"बड़े लड़के के साथ वे रिक्शे से उतरे पत्नी और लड़की उड़िया समझकर उन्हें उतारने रिक्शे तक आये, पर वह दोनों की उपेक्षा कर खुद उतर जाते हैं । सहारा - किस बात का सहारा ? मतलबी दुनियादार लोग उसे क्या सहारा देंगे ?"[1]

उपर्युक्त प्रसंग में लेखिका ने सार्थक एवं सन्दर्भ-सापेक्ष भाषा का प्रयोग किया है । यहाँ एक रोगग्रस्त पिता है जो अपने परिवार की स्वार्थ मनस्थिति को जानते हैं। "मतलबी दुनियादार लोग क्या सहारा देंगे" इस एक वाक्य के द्वारा लेखिका ने उस रोगग्रस्त पिता और उसके परिवार की बीच की दूरी को दर्शाया है । यहाँ शब्दों को अनावश्यक रूप से विशेषणों से अलंकृत नहीं किया है । सपाट भाषा के प्रयोग से अभिव्यक्ति अत्यधिक गहरी हो उठी है ।

मन्नू भंडारी की कई कहानियों में सपाट भाषा का प्रयोग मिलता है जैसे -

"सावित्री के यहाँ से लौटी, तो कुन्तीयों ही बहुत थकी हुई महसूस कर रही थी । उस पर से टुन्नी के पत्र ने उसके मन को और भी दुखी कर दिया । पापा को भी दो बार खाँसी का दौरा उठ चुका था । वह जानती थी कि वे बोलेंगे कुछ नहीं, पर उनका मन कह रहा होगा कि टुन्नी को वापस बुला लें । रात में लेटी तो फिर उसी पत्र को खोल कर पढ़ने लगी ।"[2]

---

1. मेहरुन्निसा परवेज़ - गिली रही धूप - टहनियों पर धूप (संग्रह)-पृ.38
2. मन्नू भंडारी - श्रेष्ठ कहानियाँ- पृ.75

प्रस्तुत उद्धरण में लेखिका ने आर्थिक परेशानियों से जूझती एक नारी की मानसिक व्यथा और उसकी समस्याओं को साधारण वाक्यों द्वारा प्रभावात्मक ढंग से प्रस्तुत किया है ।

सपाट भाषा का प्रयोग उषा प्रियम्वदा की शैली में भी दृष्टिगत होता है । यथा -

"नरेन्द्र ने बड़ी तत्परता से बिस्तर बाँधा और रिक्शा बुला लाया । गजाधर बाबू का टिन का बक्स और पतला सा बिस्तर उस पर रख दिया गया । नाश्ते के लिए लड्डू और मठरी की डलिया हाथ में लिए गजाधर बाबू रिक्शे पर बैठ गए । एक दृष्टि उन्होंने अपने परिवार पर डाली और फिर दूसरी ओर देखने लगे और रिक्शा चल पड़ा । उनके जाने के बाद सब अन्दर आए बहू ने अमर से पूछा "सिनेमा ले चलिएगा न ? बसन्ती ने उछल कर कहा, "भइया हमें भी ।"[1]

यहाँ लेखिका ने साधारण वाक्यों द्वारा परिवार के सदस्यों के स्वार्थयुक्त संकीर्ण विचारों को उभारा है । गजाधर बाबू की वापसी उनके लिए जीवन की सबसे बड़ी ट्रेजडी है । लेकिन परिवार वालों के लिए यह आनंद और उल्लास लाती है । क्यों कि जवान परिवार की खुशियों में गजाधर बाबू का अस्तित्व बाधा के समान है । इस कारण गजाधर बाबू के जाते ही सब अपनी इच्छानुसार यहाँ वहाँ जाने की तैयारी करते हैं ।

---

1. उषा प्रियम्वदा - वापसी, मेरी प्रिय कहानियाँ - पृ.73

निरुपमा सेवती ने साधारण - सपाट भाषा के प्रयोग से कहानियों में जीवन्तता लाने का प्रयास किया है । टुच्चा कहानी का एक उदाहरण द्रष्टव्य है -

"उसने दो-तीन क्रॉसिंग इतनी तेज़ी से पार किये थे कि अब उसकी सांस फूलने लगी । बस उसमें में ही ऐसी थक जाती है, तो वह इतना तेज़-तेज़ क्यों चल रही थी ? शायद सारी भीड़ तेज़ चल रही थी, इस लिए ।

वैसे भी उसे लगने लगा है वह ज़िंदगी को जी नहीं रही, उस पर बह रही है ।"[1] उपर्युक्त पंक्तियों में निरुपमा सेवती ने आधुनिक नौकरी पेशा नारी के जीवन यथार्थ को बड़े ही सहजी ढंग से प्रस्तुत किया है । नौकरी पेशा नारी के जीवनानुभव, जीवन की तन्हाई एवं उबाहट को सन्दर्भ सापेक्ष चित्रित किया गया है ।

अधूरे एवं खंडित वाक्यों का प्रयोग

अधूरे एवं खंडित वाक्यों के प्रयोग से प्रायः सभी लेखिकाओं ने भाव सम्प्रेषण का प्रयास किया है । खंडित वाक्यांशों से भाव तीखे हो उठते हैं । जैसे -

"अपने उठते विचारों को रोक लगाकर तारा ने अपने आप से कहा - "मैं सुखी हूँ । मुझे अपना काम अच्छा लगता है ।

---

1. निरुपमा सेवती - टुच्चा, खामोशी को पीते हुए - पृ.42

मैं स्वतंत्र हूं .... मेरे पास धन है .... सुखी । पर सारा जान रही थी कि इन सबके बावजूद भी उसके जीवन में एक बहुत बड़ा अभाव है .... एक दुख भी है जिसे वह बलपूर्वक अन्तराल में दबाये रखती है[1] ।"

लेखिका ने नायिका की अनिश्चित मानसिक स्थिति का चित्रण कुछ अधूरे, अस्पष्ट एवं खंडित वाक्यों के द्वारा किया है । जीवन में सब कुछ पाने के बावजूद कुछ अभाव की कसक नायिका को होती है । इसका एहसास हमें उपर्युक्त अधूरे वाक्यों द्वारा होता है । उस अभाव को नकारते समय भी अभाव का ही स्वस्थ वाक्य उभार कर रखते हैं ।

अधूरे वाक्यों का प्रयोग दीप्ति खंडेलवाल की कहानियों में भी मिलता है । "पूछती उसी पथराए स्वर में पूछती है आप हमेशा ब्रांडी साथ रखते हैं ?

पुरुष निश्चलता से उत्तर देता है - रखता नहीं हूं ...... रखनी पड़ती है ...... जैसे .... जैसे शायद हमारे जैसे जाने कितने जीते नहीं ..... उन्हें जीना पड़ता है .....[2] ।" उक्त अधूरे वाक्यांशों में, बहुत से भाव छुपे हैं, जिनका हमें अन्दाज लगाना पड़ता है । यहाँ नायक जिंदगी मजबूरीवश जी रहा है उसका कोई सहारा नहीं । मात्र सहारा ब्रांडी का नशा ही है जिसे पीकर वह सब कुछ विस्मृत कर जाता है । नायक के जीवन की मजबूरी, उदासी, अकेलापन आदि का चित्रण अधूरे वाक्यांशों के द्वारा प्रस्तुत रूप से लेखिका ने किया है ।

---

1. उषा प्रियम्वदा - वृत्ति - जिंदगी और गुलाब के फूल - पृ.7।
2. दीप्ति खंडेलवाल - दो पल की छांव - दो पल की छांव - पृ.60

कृष्णा सोबती की कहानियों में भी खंडित वाक्यों के द्वारा भाव सम्प्रेषण हुआ है जैसे - "अब मैं आज तुम्हारी कुछ नहीं हूं । आनंद के बच्चों को आनंद का सब कुछ सौंप कर तीन चार दिन में मैं यहां से चली जाऊंगी । फिर न कभी घर देखूंगी .... न घर का न नाम, न सामान से लिपटी अतीत की स्मृतियां .... कहां रहूंगी कहां जाऊंगी कुछ पता नहीं । सब अब किसे आज जानना है मैं कहां हूं - मैं क्या हूं ? मैं किसी की कुछ नहीं कोई नहीं ......[1]।"

ऊपर के अधूरे वाक्यों में नायिका का नैराश्य, जीवन से विरक्ति, सन्त्रास आदि के भाव गुम्फित है ।

मन्नू भण्डारी की कहानियों में अधूरे एवं अस्पष्ट वाक्यों का प्रयोग मिलता है जैसे -"कभी मित्र लोग 'तीसरे सदस्य' का मजाक करते, तो जाने क्यों मन एक अव्यक्त बोझ से दबने लगता ...... इस बात को वह महज मजाक में नहीं ले पाता । पर इस समय उसके मन में सामने बैठी लेखा पर जाने कैसा प्यार उमड़ने लगा ..... कितनी कमजोर हो गई है । बेचारी । कितना परिश्रम किया है ......[2]।"

ऊपर के कुछ अधूरे वाक्यांशों के माध्यम से लेखिका ने नायक के मन की अतल गहराई में छुपे भावों को व्यक्त करने का प्रयास किया है

---

1. कृष्णा सोबती - कुछ नहीं, कोई नहीं, बादलों के घेरे - पृ.84
2. मन्नू भण्डारी - एखाने आकाश नाई - मेरी प्रिय कहानियां - पृ.56

अधूरे वाक्यों का प्रयोग मेहरुन्निसा परवेज ने भी किया है -"पैसे .... हाँ ऐसे ही भरे पूरे अंचल में मौत हो सकती है ? वह भी अनु की ? यह ख्याल ही पागल करने वाला था । मौत भी कितनी खामोश .... चुप सी जैसे काला मुर्गी के चूजे को चुपचाप झपट्टा मार कर ले जाता है ।"[1]

ऊपर के कुछ खंडित वाक्यों के द्वारा मौत का विवरणात्मक वर्णन हुआ है ।

अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग

आज के कहानीकार भाषा में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग बेधड़क करते हैं । अंग्रेजी शब्दों से उन्हें कोई "एलर्जी" नहीं है । लेखिकाओं की कहानियों में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग यत्र-तत्र मिलता है । कहानियों के बीच-बीच में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग कर कहानीकारों ने यह दर्शाया है कि हमारी संस्कृति एवं सभ्यता पर अंग्रेजी का प्रभाव किस हद तक व्याप्त है ।

बातचीत के दौरान अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग करना आधुनिक लोगों का लक्षण है । तेजी के साथ परिवर्तित हो रहे आधुनिक मानव की विशिष्ट मानसिकता एवं विचारों को लेखिकाओं ने ज्यों का त्यों कहानियों में व्यक्त किया है । उदाहरण -

"ह्वाट ए ट्रेमेन्डस रायस । यू आर रियली फारचुनेट ।
ह्वाट ए वन्डरफुल सेट ऑफ टीथ यू पोज़ेस ।"[2]

---

1. मेहरुन्निसा परवेज - खामोशी की आवाज - टहनियों पर धूप-पृ.81-82
2. दीप्ति खंडेलवाल - डूबने से पहले - सलीब पर - पृ.115

उपर्युक्त वाक्यों के द्वारा किसी नारी के सौन्दर्य की अभ्यर्थना हो रही है । अभ्यर्थना देशी भाषा में भी हो सकती है लेकिन लोगों के बीच ऐसी एक मिथ्य धारणा है कि किसी बात को अंग्रेजी में कह दें तो उसका महत्व और अर्थ और भी गहरा हो जाता है ।

अंग्रेजी शब्दों पर मन्नू भण्डारी ने भी जोर दिया है जैसे -

"मिसेज वर्मन शिकायत कर रही थी । कालेज छोड़ महीना होने आया, एक बार सूरत तक नहीं दिखायी, आउट आफ साइट ......। आज "लंच" के समय आओ न साथ बैठ कर खाएंगे । तुम्हारे चले जाने से हमारा डिपार्टमेंट तो सूना ही हो गया । "लंच" के समय तो तुम्हें बहुत ही मिस करते हैं ।"[1]

यहाँ कुछ अंग्रेजी शब्दों के प्रयोग द्वारा लेखिका ने परिस्थिति की वास्तविकता को प्रस्तुत किया है जैसे "आउट आफ साइट" कहने पर नायिका की वर्तमान स्थिति पर विशेष बल पड़ता है । उसी तरह "मिस" करना आदि अंग्रेजी में औपचारिकतावश प्रयोग करने वाले शब्द हैं ।

शिवानी जैसी संस्कृत निष्ठ शैली में लिखने वाली लेखिका की कहानियों में भी अंग्रेजी शब्दों की बहुलता देखी जाती है ।

---

1. मन्नू भण्डारी - नयी नौकरी, मेरी प्रिय कहानियाँ - पृ.42

"शो डार्लिंग 'नो समोसा । तभी ऐसी चीजों का परहेज करना होगा । अभी पेचिश से उठे हो चाय लोगे ? मस्ट यू" । न हो तो एक प्याला दूध पीलो चाय तुम्हें "एग्री" नहीं करती ।"[1] शिवानी ने अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग सन्दर्भ सापेक्ष किया है क्यों कि लोप कहानी की नायिका एग्लोइंडियन है और उसके मुंह से अंग्रेजी शब्दों का निकलना स्वाभाविक ही लगता है ।

अंग्रेजी वाक्यों का प्रयोग निरूपमा सेवती की एक कहानी में निम्न प्रकार से मिलता है । "दे डोन्ट वान्ट टू हेव दी फील ऑफ हट । दे थिंक वी आर नाट ह्यूमन बीइंग्स । दे आर फ्रेस्ट्रेटेड, बेटर गेट ए माइल मेन फार युवर सेल्फ ।"[2]

यहाँ लेखिका ने अंग्रेजी वाक्यों का प्रयोग किया है । इस तरह के अंग्रेजी के सभी प्रयोग, कहानी की गति को रोक देते हैं वैसे लेखिका ने आधुनिक मानव की मनोवृत्ति और उसकी संवाद शैली को भी यहाँ दर्शाया है ।

कृष्णा सोबती का उदाहरण देखिये -
"गैलरी पार कर बेड-रूम का पर्दा उठा .... अलसाये मन गुस्सा झाग बन रूम में आ खड़े हुए ।"[3]

---

1. शिवानी - लोप - मेरी प्रिय कहानियाँ - पृ.129
2. निरूपमा सेवती - ठहरी हुई खरोंच, खामोशी को पीते हुए - पृ.31
3. कृष्णा सोबती - दो राहें, दो बाहें -बादलों के घेरे

विदेशी माहौल और वहाँ की परिस्थितियों से प्रभावित होने के कारण उषा प्रियम्वदा की कहानियों में अंग्रेजी शब्दों का एवं वाक्यों का प्रयोग स्वाभाविक लगता है जैसे -

"बट सारा, यू हैव इम्प्रूव्ड, आइ मीन,
यू आर लुकिंग एज़ इफ ..... एज़ इफ.....'।[1]

वैसे प्रायः सभी लेखिकाओं की कहानियों में अंग्रेज़ी शब्द एवं अंग्रेज़ी वाक्यों का प्रयोग मिलता है। अंग्रेज़ी भाषा के प्रति अत्यधिक लगाव कभी कभी कथ्य को कमजोर भी बना देता है। परन्तु लेखिकाओं ने चुनी हुई स्थितियों में ही अंग्रेज़ी शब्दों का प्रयोग किया है। इस प्रकार के अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग उनके अनुसार तर्क संगत भी है। अधिकतर मध्यवर्ग के जीवन से जुड़ी हुई घटनाओं का चित्रण करते समय और पात्रों की मानसिकता को व्यक्त करते समय ही लेखिकाओं ने ऐसा किया है, जैसे मध्यवर्ग के व्यक्ति अंग्रेज़ी भाषा और उसकी संस्कृति से इतना ज्यादा प्रभावित है कि अनजाने में ही अंग्रेजी शब्द अनचाहे मेहमान के समान ठहाके के साथ प्रवेश कर जाते है।

भारतीय नारी के आधुनिक स्वरूप और फैशन परस्ती से उपजे हुए नये संस्कारों को उभारने में अंग्रेजी शब्द बहुत सहायक होते हैं। कहीं कहीं अंग्रेजी शब्द इतने जबरदस्त फिट हो जाते हैं कि उनके स्थान पर कोई भी भारतीय भाषा का शब्द ठीक नहीं उतरता।

---

1. उषा प्रियम्वदा - पूर्ति-जिंदगी और गुलाब के फूल - पृ.67

साठोत्तरी कहानी लेखिकाओं की भाषा इस तरह जन-जीवन की भाषा बन गयी है । शहरों में वह अंग्रेज़ी से युक्त दिखाई पड़ती है तो गांवों में देशी और ग्रामीण प्रयोगों से प्रभावित हो जाती है। अरबी फारसी के शब्द इन कहानियों में बहुत कम मिलते हैं। मुसलमान कथा-पात्रों के पारिवारिक जीवन को चित्रित करते समय कहीं एकाध शब्द मिल जाते हैं । वैसे उर्दू के साहित्यिक शब्दों का प्रयोग भी कम मिलता है। यह इस कारण है कि नयी पीढ़ी के पाठक और लेखक एक ऐसी भाषा से प्रभावित हैं जो उन्हें आज़ादी के पश्चात प्राप्त हुई है ।

मूल्यांकन

लेखिकाओं की कहानियों के उपर्युक्त विवेचन से पता चलता है कि स्थितियों को बोधगम्य बनाने के लिए और उसे जीवन के साथ जोड़ने के लिए उन्होंने आवश्यकतानुसार बिंब, संकेत एवं प्रतीकों का प्रभावात्मक प्रयोग प्रस्तुत किया है । पात्रों की विषम मानसिक अवस्थाओं को चित्रित करते समय प्रतीक और संकेत एक व्यापक कैनवास पर बिखरे हुए रंगों की छींटों के समान समूची कथात्मकता को कलात्मकता प्रदान करते हैं । प्रतीक और संकेतों के रंग कहीं पर फीके हैं तो कहीं गहरे । उसी बीच बिंबों के विधान से स्थितियों के कुछ खंडों को प्रस्तुत कर कहानी को चित्रोपम बनाने की कोशिश भी की गयी है । साठोत्तरी कहानी लेखिकाओं की कहानियाँ इस दृष्टि से विविधात्मक एवं सौन्दर्यबोध से भरपूर है । भाषा के आन्तरिक सौन्दर्य को उभारने के साथ-साथ अभिव्यक्ति के नये क्षितिजों को ढूंढने का भी प्रयास लेखिकाओं ने किया है । इस दृष्टि से भाषा और उसकी संवेदनात्मकता नये धरातलों से हो कर प्रवहमान होती है ।

भाषा के आन्तरिक स्वरूप में जिस प्रकार संकेत, बिंब एवं प्रतीकों का प्रयोग हुआ है वैसे ही भाषा के बाह्य स्वरूप में जीवनानुभवों को रचनात्मक अनुभवों का रूप देने के लिए लेखिकाओं ने विविध प्रयोग किये हैं। भाषा की सपाटता, अपूर्णता, अधूरे वाक्यों का प्रयोग, अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग आदि इस शैली शिल्प की विशेषताएं है। इन प्रयोगों के माध्यम से लेखिकाओं ने परिवेश, परिस्थिति, एवं सन्दर्भ के चित्रण में पूर्ण रूप से सफलता हासिल की है।

जीवन में नित्य घटित होने वाले भावुक एवं साधारण प्रसंगों को संस्कृत गर्भित साहित्यिक भाषा में प्रकट न कर सीधी सादी भाषा में व्यक्त कर घटना को जीवन के हकीकत से जोड़ने का जो प्रयास इन्होंने किया है वह ध्यान देने योग्य है।

वैसे ही आधुनिक मानव की विचित्र मानसिक स्थिति, पल-पल में बदलते विचार एवं मानसिक असमंजस को अपूर्ण एवं खण्डित वाक्यों में व्यक्त कर आधुनिक यांत्रिक युग में यंत्रवत जीनेवाले लोगों की मनःस्थिति की ओर लेखिकाओं ने इशारा किया है।

पाश्चात्य सभ्यता के रंग में रंगे हो आज के समाज में मनुष्य किस प्रकार अंग्रेजियत के पीछे भाग रहा है इस तथ्य की ओर लेखिकाओं ने हमारा ध्यान आकृष्ट किया है। हिन्दी के चार वाक्यों में दो शब्द भी अंग्रेजी का प्रयोग किये बिना आधुनिकों से रहा नहीं जाता। अंग्रेजी शब्दों के प्रयोग से उनकी शान बढ़ जाती है ऐसा उनका विश्वास है। लेखिकाओं ने आधुनिक मानव के इस मिथ्य विश्वास को व्यंग्यात्मक ढंग से

गहराई के साथ कहानियों में व्यक्त किया है । वैसे कहीं कहीं अंग्रेजी शब्द परिस्थिति की गहराई को पकड़ने में अत्यधिक सक्षम होते हैं ।

शैलीगत प्रयोग

'उचित शब्दों का उचित स्थान पर प्रयोग को ही शैली कहते हैं ।'[1] उक्त परिभाषा के अनुसार हमारे समक्ष तीन विशेष शब्द उभर आते हैं । (1) शब्द (2) स्थान (3) प्रयोग । ये तीन तथ्य हैं जिन पर आधारित होकर शैली अपना स्वरूप निर्धारित करती है । शब्दों का औचित्य जब स्थान के औचित्य से जुड़ कर प्रयोगात्मक क्षमता प्राप्त करने लगता है तब शैली का आकर्षक रूप मुखरित होता है । जहाँ तक स्थान का सवाल है वह अभिव्यक्ति की सक्षमता पर आधरित है । प्रयोग भाषा की सम्प्रेषणीयता को शब्द और स्थान के साथ जोड़ कर नया स्तर प्रदान करता है । इस कारण शैलीकार का महत्व इन तत्वों पर आधारित रहता है । शैली वैसे तो वैयक्तिकता के पुट को लेकर सामने उभरती है । इस कारण व्यक्ति की आत्मसत्ता का बोध, उसकी चिन्तन क्षमता का स्वरूप और मानसिक स्थिति का प्रभाव आदि शैली पर प्रतिबिम्बित हो जाते हैं। 'साहित्यिक शैली वह माध्यम है जिसके द्वारा व्यक्तित्व का प्रकाशन दूसरों के समक्ष होने लगता है। इसलिए शैली की समस्याएं व्यक्तित्व की समस्याएं हैं, व्यावहारिक मनोविज्ञान की समस्याएं हैं'[2] ।"

---

1. Proper words in proper place, said swift makes the true Definetion of style.
   The pocket book of quatations, p.375
2. Litrary style is simply a means by which one personality means to others. The problems of style therefore, are really problems of personality of practical psychology - style
   - F.L. Lucas, p.38

एक ही विषय शैलीगत विभिन्नता के कारण अधिक या कम प्रभावात्मक बन सकता है । इसका यह तात्पर्य है कि रचनाधार का औचित्य बोध शैली की आकर्षणीयता को घटा भी सकता और बढ़ा भी सकता है। शब्द, स्थान एवं प्रयोग रचनाकार की अमूर्त भावनाओं को साकार करने में कहाँ तक सफल होते हैं।यह तो रचनाकार ही जानता है फिर भी सम्प्रेषणीयता के स्तर पर इन तीनों का सामन्जस्य सार्थक अभिव्यक्ति के लिए अत्यन्त आवश्यक माना जाता है ।

वैसे कहा जाता है कि "शैली की श्रेष्ठता एक महान व्यक्तित्व की प्रतिध्वनि है।"[1] शैली को वैयक्तिक प्रतिभा की देन मानते हुए भी कुछ इनी-गिनी प्रयोगात्मक शैलियों को साहित्य में स्थान प्राप्त हुआ है । यहाँ शैली एक पैटर्न" का रूप धारण कर लेती है । अतः कहानियों का विश्लेषणात्मक अध्ययन करते समय शैलीगत पैटर्नों पर विचार करना भी आवश्यक है ।

शैलियों के प्रकार

वर्णनात्मक शैली-वर्णनात्मक शैली कहानी की विशिष्ट शैली है । "इसमें कहानिकार एक तटस्थ द्रष्टा की भाँति कहानियों में आई घटनाओं स्थितियों और पात्रों की मनःस्थितियों का विवरण चुस्त-दुरुस्त भाषा में देता जाता है । इस प्रकार की कहानियों में लेखक को

---

1. Height of style is the echo of a great personality.
Style - F.L. Lucas, p.40

अपनी बात कहने की पूरी छूट रहती है, उसकी अभिव्यक्ति पर किसी भी प्रकार का अंकुश नहीं रहता ।"[1]

लेखिकाओं की प्रायः सभी कहानियाँ वर्णनात्मक हैं । वर्णनात्मक शैली में कथा प्रस्तुत करते समय भी लेखिकाओं का अपना अपना व्यक्तित्व अलग से उभरने लगता है । वर्गीकरण की दृष्टि से यद्यपि वर्णनात्मक शैली एक विशिष्ट कोटी में आ जाती है । फिर भी वैयक्तिक प्रतिभा कीमुद्रा उस शैली में अनेक अनदेखे शिल्पों का उद्घाटन कर बैठती है ।

वर्णनात्मक शैली के कुछ उदाहरण - " पड़ोस के फ्लैट में छोटे बच्चे के चीख-चीख कर रोने से माया की नींद टूट गयी । उसने अलसायी पलकें खोलकर घड़ी देखी, पौने छह बजे थे । फिर उसे याद आया, आज तो छुट्टी का दिन है । उसने पैर फैला लिये । पलकें आँखों पर ढलक आने लगी । वह रेशमी चादर का नरम चिकना स्पर्श गालों पर महसूस करती हुई पड़ी रही । नींद की मीठी खुमार अब भी उस पर छायी थी । कुछ खुली हुई खिड़की से सबेरे की ठंडी हवा आ रही थी, पूरी तरह से जगी होने पर भी नींद को बहला कर फिर बुलाना चाह रही थी । बच्चा था कि रोये ही जा रहा था । छोटा सा कोमल गोरा-गोरा बच्चा ।"[2]

मेहरुन्निसा परवेज की कहानी सामनेवाली की आवाज में से एक उदाहरण -

---

1· डॉ· शिवशंकर पाण्डेय - स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी कहानी : कथ्य और शिल्प - पृ·160

2· उषा प्रियम्वदा - छुट्टी का दिन-ज़िंदगी और गुलाब के फूल - पृ·44

"पतझर विदाई ले रहा था और बसन्त का आगमन था । दोनों के मेल से भरे थे वे दिन । फरवरी का महीना । करवट लेती शाम की खूबसूरती क्या आँखों के फोकस में कैद रह सकती है ? आम के मोर इस कदर आया हुआ था कि सारी टहनियाँ मोर के भार से लद कर झुक आई थी, पत्ते कम हो गये थे । सड़क के दोनों ओर लगे आम के पेड़ और मोर की मादक गन्ध थके हुए दिमाग को ······· हल्की हल्की थपकियाँ दे रहे थे । किस कदर प्यारी और रोमांटिक हो आई थी शाम ।"[1]

वर्णनात्मक शैली में लिखनेवाली लेखिकाओं में मन्नू भंडारी का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है । वर्णनात्मक शैली में लिखी उनकी एक कहानी है अकेली । मन्नू जी की शैली पर निम्नलिखित उदाहरण काफी प्रकाश डालता है ।

"सोमा बुआ का जवान बेटा क्या जाता रहा, उनकी अपनी जवानी चली गयी । पति को पुत्र-वियोग का ऐसा सदमा लगा कि वे पत्नी, घर-बार तज कर तीरथ वासी हुए और परिवार में ऐसा कोई सहारा नहीं था जो उनके एकाकीपन को दूर करता । पिछले बीस वर्षों से उनके जीवन की एकरसता में किसी प्रकार का कोई व्यवधान उपस्थित नहीं हुआ, कोई परिवर्तन नहीं आया यों हर साल एक महीने के लिए उनके पति उनके पास आकर रहते थे ।"[2]

---

1. मेहरुन्निसा परवेज, खामोशी की आवाज, टहनियों पर धूप - पृ.44
2. मन्नू भंडारी - अकेली, मन्नू भंडारी की श्रेष्ठ कहानियाँ - पृ.58

वर्णनात्मक शैली में लिखी दीप्ति खंडेलवाल की कहानी प्रेत का उदाहरण द्रष्टव्य है -

"नीलिमा ने सपनों के भार से झुकती पलकें ऊँची की तो देखा - वह एक कोठरीनुमा कमरे में है - बदरंग दीवारें, मकड़ी के जाले, दौड़ लगाती छिपकलियाँ। कोने में काफी कबाड़ भी पड़ा था। तो यह है उसका मिलन स्थल ..... और सुहाग सेज ? एक खटिया पर मैली सी चादर और दो तकिये। नीलिमा ने चादर का कोना उठाया चादर के नीचे और भी मैली दरी थी, गद्दा नहीं। नीलिमा रुआँसी हो गई। पसीने से उसका सारा बदन चिपचिपा रहा था नीलिमा ने अपने आप को देखा-गुलाबी रंग की बनारसी साड़ी, जड़ाऊ गहने, जिनके बोझ से वह दबी जा रही थी।"[1]

मृदुलागर्ग की कहानी मधुप पत्रकार वर्णनात्मक शैली में लिखी हुई है। उदाहरण -

"मधुप पत्रकार का नाम जितना मधुर है, प्रकृति उतनी ही कठिन। केवल वही पत्रिका नहीं जिसका वह सम्पादक है। देश की सभी नामी गिरामी पत्रिकाएं उसके लेख और कहानियाँ छपाना अपने अहोभाग्य मानती है। उसकी कहानियाँ सच्च है। कथ्य बेबाक। न किसी का डर, न लिहाज। देश भर में एक क्रान्तिकारी लेखक के रूप में उसकी धाक है। उस दिन दिल्ली के तमाम युवा और वरिष्ट लेखक - पत्रकार उसके घर पर आ जुटे थे।"[2]

---

1. दीप्ति खंडेलवाल - प्रेत, वह तीसरा - पृ.6।
2. मृदुला गर्ग - मधुप पत्रकार, टुकड़ा-टुकड़ा आदमी - पृ.133

१• आत्मकथात्मक शैली

आत्मकथात्मक शैली में कहानीकार आत्म परिचय के द्वारा कहानी कह कर पाठकों में आत्मीयता स्थापित कर लेता है । कहानी की सारी घटनाएं एवं सारी परिस्थितियां एक ही पात्र के अर्थात् कहानीकार स्वयं के गिर्द-गिर्द घूमती रहती है, जिस कारण कहानी के दूसरे पात्र अनदेखे रह जाते हैं । इस शैली के अन्तर्गत चरित्र का आत्मविश्लेषण उत्कृष्ट ढंग से होता है । आत्मकथात्मक शैली को अपनाते समय लेखक को बड़ी सुविधा मिलती है । मन के सूक्ष्म से सूक्ष्म कोनों में झांकने की कोशिश वह सफलतापूर्वक करता है। इस कारण उसकी अनुभूति ज्यादा यथार्थ पूर्ण बनती है ।

आत्मकथात्मक शैली में कहीं कहीं पाठक को ऐसा आभास होने लगता है कि प्रतिपाद्य विषय से सम्बन्धित अनुभूतियां लेखक की अपनी ही है । कहीं कहीं भोगे हुए क्षणों की पूरा अभिव्यक्ति का आभास होने लगता है । ऐसे प्रसंगों में अनुभूति की संश्लता आत्माभिव्यंजनात्मक स्थिति से जुड़कर हमारे सम्मुख प्रस्तुत हो जाती है । इस कारण आत्मकथात्मक शैली में लिखी कहानियां गहरी आत्मीयता के बोध को लेकर पाठक के मन में प्रभाव की सृष्टि करती है ।

आत्मकथात्मक शैली का प्रयोग प्रायः सभी लेखिकाओं ने किया है । उदाहरण - मैं उम्र के उसी विशेष दौर से गुजर रही थी जब सहसा किसी ने कहा - 'आई लव यू' । और अचानक ही सारी रगों में नदी उगी । मुझे लगा मेरी आंखों से आकाश तक रंगों के फूल खिल उठे ।[1]

१• दीप्ति खण्डेलवाल - वह तीसरा - वह तीसरा - पृ•9

मन्नू भण्डारी की कहानी "मैं हार गयी" आत्मकथात्मक शैली में लिखी हुई है। उदाहरण - "जब कवि सम्मेलन समाप्त हुआ, तो सारा हाल हँसी कहकहों और तालियों की गड़गड़ाहट से गूँज रहा था शायद मैं ही एक ऐसी थी, जिसका रोम-रोम क्रोध से जल रहा था। उस सम्मेलन की अन्तिम कविता थी बेटे का भविष्य ...... मैंने आज तक इससे भद्दी और भोंडी कविता नहीं सुनी। ...... मैं ज्यों ही जो गाड़ी में बैठी, तो सच मानिये, सारे रास्ते यही[1]।"

निरुपमा सेवती की कुछेक कहानियाँ आत्मकथात्मक शैली में लिखी गयी है। जैसे - "मैंने कुछ ऐसा ही महसूस किया, एक युग बीत गया है और हम दोनों चलते जा रहे हैं - और बस चलते ही जा रहे हैं। उस संकरी पगडंडी पर चलते हुए जब पिछले मोड़ पर वह कुछ आगे निकल गयी तो एक निर्जन सी चुप्पी हमारे बीच आ ठहरी थी ...... मैं लगातार महसूस कर उठा कि हम जाने कब से शायद हमेशा से यूं ही चले जा रहे[2]।"

आत्मकथात्मक शैली का प्रयोग मृदुला गर्ग की लेखनी में भी देखा जा सकता है।

"हम चारों कालेज में एक साथ पढ़ती थीं - मिनि, मणी, शिबा और मैं। सबसे पहले मेरा विवाह हुआ और तभी हमने एक दूसरे से वायदा किया कि हम चारों में से जिसका विवाह सबसे बाद में होगा, कम-से-कम उससे हम लोग दुबारा अवश्य मिलेंगें, चाहे कहीं भी क्यों न रहे[3]।"

---

1. मन्नू भण्डारी - मैं हार गई, मन्नू भण्डारी की श्रेष्ठ कहानियाँ-पृ.66
2. निरुपमा सेवती - सुनहरे देवदार, खामोशी को पीते हुए, - पृ.1
3. मृदुला गर्ग - डिक्की ऑफ दी डेल्ही, टुकड़ा-टुकड़ा आदमी - पृ.124

आत्मकथात्मक शैली का प्रयोग शिवानी ने भी किया है। "काश मैं अपने विदेशी अतिथि दल के साथ अक्सम के उस गहन वन में आयोजित नागा महभोज में न गयी होती। सुपारी के पेड़ और बाँसों के झुरमुट के बीच, एक विराट अग्नि स्तूप की लाल लपटें आकाश को चूम रही थी। विचित्र परिधान में अंगों को मोड़ता मरोड़ता एक नागा तरुण, हमारे स्वागत में अपने रणसिंही को आकाश की ओर फूंकने लगा .... एक बार मेरे जीवन में ऐसी ही रणसिंही और बजी थी[1]।"

कृष्णा सोबती की कहानी 'बादलों के घेरे' आत्मकथात्मक शैली से लिखी एक विशिष्ट कहानी है।

"भुवाली की इस छोटी सी कॉटेज में लेटा मैं सामने के पहाड़ को देखता हूँ। पानी भरे, सूखे-सूखे बादलों के घेरे देखता हूँ। बिना आँखों के भटक-भटक जाती धुन्धके निष्फल प्रयास देखती हूँ .... मैं लेटा रहता हूँ और सुबह हो जाती है। मैं लेटा रहता हूँ, शाम हो जाती है। मैं लेटा रहता हूँ, रात झुक जाती। दरवाज़े और खिड़कियों पर पड़े परदे मेरी ही तरह दिन-रात, सुबह-शाम अपने मौन-भाव से लटके रहते हैं[2]।"

पत्रात्मक शैली

पत्रात्मक शैली में कहानीकार पत्रों को माध्यम बनाकर कहानियों का रूप विधान करता है। इस शैली के अन्तर्गत कहानीकार एक या एक से अधिक पत्रों के माध्यम से कहानी प्रस्तुत करता है। पत्रात्मक शैली तभी प्रभावात्मक बनती है जब किसी विशेष परिस्थिति के दबाव से उत्पन्न मानसिक संघर्ष की स्थिति में लेखक लिखने को विवश होता है।

---

1. शिवानी - चीलगाड़ी, पुष्पहार - पृ.86
2. कृष्णा सोबती - बादलों के घेरे, बादलों के घेरे - पृ.9

इस शैली में कभी कभी अस्वाभाविकता उत्पन्न होती है । क्योंकि बहुत सारी अन्तरंग बातों को और पूर्व घटनाओं की स्थितियों को व्यक्त करने में कठिनाई उत्पन्न होती है । इस कारण कोई एक विशेष मानसिक अवस्था के प्रतिपादन में और तज्जन्य प्रतिक्रियाओं के अंकन में कहानीकार को ध्यान देना पड़ता है । वैसे पत्रात्मक शैली उतनी लोकप्रिय नहीं है ।

लेखिकाओं में कृष्णा सोबती और दीप्ति खंडेलवाल ने इस शैली का कुछेक कहानियों में प्रयोग किया है । कृष्णा सोबती की "पहाड़ों के साये तले" कुछ नहीं, कोई नहीं, और दीप्ति खंडेलवाल की कारण आदि कहानियाँ पत्रात्मक शैली में लिखी गई है ।

पत्रात्मक शैली में लिखी "पहाड़ों के साये तले" कहानी का उदाहरण दृष्टव्य है -

"सुखी !

डाक बंगले के बरामदे में बैठी-बैठी सोच रही हूं कि इस क्षण में पाव तले की धरती के सिवाय और कहीं नहीं हूं, कहीं भी नहीं । खड़ी हूं, सामने चांदनी में तैरता ताल है । ताल पर मचलती लहरे हैं ।"[1]

दीप्ति खंडेलवाल की कहानी का उदाहरण -

"प्रिय बोध, मेरे हमदम मेरे दोस्त ।

1· कृष्णा सोबती - पहाड़ों के साये तले, बादलों के घेरे - पृ·137

जब तक यह पत्र तुम्हारे हाथों में होगा, तुम्हारी आँखें इसे पढ रही होंगी, तब तक मैं सदा के लिए आँखें मूँद चुका होऊँगा, तुमसे बहुत दूर जा चुका होऊँगा, तुमसे, सबसे ..... बहुत बहुत दूर ......। पता नहीं मृत्यु के उस पार क्या होता है । तुम जरूर सोचोगे कि मेरा दिमाग चल गया है, यानी कि तुम्हारा यह दोस्त, शहर का सबसे काबिल प्रसिद्ध सर्जन .... पागल हो गया है .... तुम्हारा जय।"[1]

चेतना प्रवाह शैली

चेतना प्रवाह शैली का आधार मनोविश्लेषण और यथार्थवाद है । मानसिक अन्तर्द्वन्द्व जैसे मनोवैज्ञानिक स्थितियों की अभिव्यक्ति में चेतना प्रवाह शैली सक्षम है "इस शैली की विशेषता यह है कि इसमें पात्र की मानसिक घटनाओं, स्थितियों, संघर्षों और प्रतिक्रियाओं के मनोवैज्ञानिक विश्लेषण द्वारा कहानी में गतिशीलता पैदा की जाती है । पश्चिमी साहित्य में इस पद्धति का सूत्रपात जेम्स ज्वायस, वर्जीनिया वुल्फ, डॉरोथी रिचार्डसन आदि ने किया।हिन्दी कहानियों में इसके प्रयोग का श्रेय अज्ञेय को है[2]।"

पात्रों के मन में उठनेवाले स्वच्छंद विचारों को ज्यों का त्यों व्यक्त करने में यह शैली सार्थक निकलती है । नदी की धारा की तरह प्रवाहित मानव मन की विभिन्न अनुभूतियों की सफल अभिव्यक्ति में चेतना प्रवाह शैली अति उत्तम है। "चेतना प्रवाह के मूल में व्यक्ति को व्यक्ति द्वारा समझने का प्रयास किया जाता है । क्योंकि आधुनिक व्यक्ति में

---

1. दीप्ति खण्डेलवाल - कारण, दो पल की छाँव - पृ.79
2. डॉ. सुरेश सिन्हा - हिन्दी कहानी : उद्भव और विकास - पृ.69

जिस जटिल स्वरूप का निरन्तर विकास होता चला जा रहा है, उसे किसी भी परम्परित शिल्प द्वारा व्याख्यायित नहीं किया जा सकता । व्यक्ति में इतना अलगाव आ गया है कि वह एक अलग इकाई सा बन गया है और उस इकाई को सिर्फ उसी के माध्यम से समझा और अभिव्यक्त किया जा सकता है।[1]"

चेतना प्रवाह शैली का प्रयोग अधिकांश लेखिकाओं ने किया है । मृदुला गर्ग की अनेक कहानियों में इस शैली का सार्थक निर्वाह हुआ है जैसे - "उसने सोचा था, महेश न जाने कितना चंचल और संतृप्त हो उठेगा, कहीं रो न दे, तब वह भी उसके गले से हाथों मुख ढाँप कर कहेगी...... महेश, मैं ने तुम्हें प्यार किया है, अभी भी करती हूँ, अपने से लड़ती रही हूँ, अविरल, निरन्तर, पर हर बार मेरी हार हुई है । जैसे मैं दो भागों में विभक्त हूँ हारी हूँ अपने ही इस नूतन रूप से मैं क्या करूं प्यार किया नहीं, हो जाता है यह मुझे खींचे लिये जा रहा है । मुझे माफ करो मैं तुम्हें बहुत दुःख दे रही हूँ, पर मुझे जाने दो .... पिछले दो वर्षों से अनेक क्षण आये हैं जब उसने स्वयं यही सोचा है कि शारीरिक सुख के अलावा इसमें कुछ नहीं है[2]।"

उक्त प्रसंग में लेखिका ने भावों के प्रवाह को गति प्रदान की है, साथ-साथ नायिका की मानसिक चंचलता और अन्तर्द्वन्द्व को भी विशेष रूप से उभारा है ।

---

1. सन्त बख्शसिंह - हिन्दी कहानी कथ्य और शिल्प - पृ.53
2. मृदुला गर्ग - अवकाश, टुकड़ा-टुकड़ा आदमी - पृ.44

चेतना प्रवाह शैली का एक दूसरा उदाहरण दीप्ति खंडेलवाल की कहानी सन्धि पत्र में चित्रित है -

"रोहित शैया पर लोटने लगा था ...... फिर झटकर उठा, बीयर की बोतल निकाली और एक सांस में पी गया .... उसकी आंखों में सोमा के उभरने लगे थे । कौन सी सती सावित्री है कम्बख्त । सती सावित्री की बात भी नहीं, वैसे भी । ...... क्या सोमा की कमाई पर मेरा अधिकार नहीं ? सोमा की देह पर मेरा अधिकार नहीं ? फिर सोमा के साथ मेरा संबंध ही क्या ..... लेकिन रोहित क्या सोमा को तुम पर यह अधिकार है ...... क्या स्वयं पर ऐसा अधिकार तुमने भी सोमा को दिया है ? क्या सोमा को तुमने अपनी पास कुछ दिखाई है ?'

यहाँ लेखिका ने एक पति और एक पुरुष के अहं एवं मानसिक अर्न्तद्वन्द्व को वाणी दी है ।

चेतना प्रवाह शैली की विशिष्टता निरुपमा सेवती की कहानियों में भी देखी जा सकती है ।

"मैं ने सामने टंगी, घास के ऊपर किसी मरे हुए शेर के खुले जबड़े पर अपनी समस्त विचार शक्ति केन्द्रित कर लेनी चाही, जिसकी पत्थर की आंखें मुझे लगातार घूरे जा रही थी । मैं ने चाहा इसे मुंह चिढ़ा दूं ।

1· दीप्ति खंडेलवाल - सन्धि-पत्र, वह तीसरा - पृ·15

फिर एक नाम सहज ही याद आ गया था । ओह, वह कितनी लम्बी सी जीभ बाहर निकाल, जिस किसी को मजाक बना चिढ़ा देती थी । अचानक सारे वातावरण का जादू खत्म हो गया । अब मैं आज तक पहुँच स्थिति को पूरी तरह महसूस करने लगा था । अभी तक मैं बेहद लाइट मूड में कैसे रह पाया ?"[1]

उक्त सन्दर्भ में लेखिका ने नायक के मानसिक विचारों को कई प्रकार के टेढ़ी-मेढ़ी संकरी पगडंडियों से उलझा कर चित्रित किया है । कभी वह वर्तमान की जटिल परिस्थितियों से सम्बद्ध हो जाता है तो कभी अतीत की स्मृतियों में खो जाता है ।

पूर्वदीप्ति (फ्लेश बेक) शैली

पूर्व दीप्ति शैली हिन्दी कहानी की एक विशिष्ट शैली है लेकिन कहानियों में इस शैली को पूर्ण रूप से स्वीकृति नहीं मिली है । कहानी के आदि या मध्य कहीं इसका प्रयोग किया जाता है । "पूर्वदीप्ति शैली में कथा-सूत्र अतीतोन्मुख होता है, वर्तमान से सम्बद्ध घटना एवं पात्रों की स्मृति से जुड़कर किसी विगत घटना का अंश बनता है और इसी स्मृतियों में कहानी का रूप-विधान किया जाता है । इस पद्धति का मूलाधार अतीत की वे घटनाएं तथा स्थितियां हैं जो स्मृति के सहारे वर्तमान से जुड़ती है और उससे एकमेव होकर कहानी में जीवंतता लाती है ।"[2]

---

1. निरुपमा सेवती - सुनहरे देवदार, खामोशी को पीते हुए - पृ.3
2. डॉ. शिवशंकर पाण्डेय - स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी कहानी कथ्य और शिल्प - पृ.165

पूर्वदीप्ति शैली का प्रयोग कई लेखिकाओं ने अपनी कहानियों में किया है -

'कहानी सुनाने को अधीर मिसेज वर्मा बोलीं, और कहानी लेकर बैठ गई । बिना चश्मे के मिस्टर वर्मा ने अपनी अंगुलियों से अपनी आँखें बंद कर लीं, और अधलेटी मुद्रा में वे कहानी सुनने लगे .... हाथों में कागज लिए सामने बैठी मिसेज वर्मा की धुंधली आकृति और भी धुंधली हो गई .... होती गई और एकदम गायब सी हो गई मिसेज वर्मा के हल्की झुर्रियों वाले साँवले चेहरे की जगह एक कमनीय कमसिन-सा गोरा चेहरा उभर आया, फूल सा खिला हुआ ...... कहो गीत पसन्द आया ? पुस्तक बन्द करते हुए शैल ने पूछा -

चकोरी की ऐसी चाँदनी रात में ऐसा नीरस गीत ।
निर्मल ने चिढ़ाते हुए कहा ।
जाओ आगे से तुम्हें गीत नहीं सुनायेंगे ।[1]'

उक्त प्रसंग मिस्टर वर्मा यानी कहानी के नायक के अतीत, से सम्बन्धित है । वर्मा की पत्नी उसे जबरदस्त अपनी लिखी हुई कहानी सुनाती है । कहानी के कुछेक सन्दर्भ को सुन कर उसे अपनी प्रेमिका के साथ बिताये गये पल याद आते हैं और वे गुजरे हुए क्षण एक चित्र के समान उसके सामने उभर आते हैं ।

फ्लेश बेक का एक दूसरा उदाहरण उषा प्रियम्वदा की कहानी मोहबंध में स्पष्ट है ।

---

1. मन्नू भंडारी - चश्मे, मन्नू भंडारी की श्रेष्ठ कहानियाँ - पृ.45

"अचला का मन छटपटाने लगा - किसी को इतना अनुराग, सुख और मान, किसी के भाग्य में कुछ भी नहीं .... बहुत दिनों पहले का एक सपना, एक याद दबे पाव उसकी आँखों में आकर खड़ी हो गई । अचला को लगा कि नीलू उसके पास की पलंग पर बैठी है कमरे में अँधेरा है, दोनों जाग रही है, पर दोनों मौन है । .... अचला ने मुँह में आँचल दबा रखा है - नीर अश्रु उसकी कनपटियों से होकर तकिये पर गिर रहे हैं - निःशब्द क्रन्दन से उसका शरीर काँप रहा है । नीलू ने कुछ देर बाहर से आकर कपड़े बदले हैं - ..... नीलू के तकिये के नीचे एक पत्र है मुझे इस बात की खुशी है कि मुझे प्यार भी मिला तो तुम्हारी सी सुन्दर लड़की का - "मिथि देवेन्द्र की है पत्र नीलू के लिए ।"[1]

उक्त प्रसंग में अचला, नीलू के वर्तमान के सुखपूर्ण जीवन को देखकर अतीत की एक घटना को अपने स्मृतिपटल में साकार करती है ।

फैंटेसी शैली

फैंटेसी शैली लेखिकाओं के बीच उतनी लोकप्रिय नहीं है । वैसे इस शैली के माध्यम से आधुनिक मानव द्वारा निर्मित कल्पित वातावरण एवं उससे उत्पन्न जीवन की विवशताओं को अतिरंजित बनाकर प्रस्तुत किया जाता है । फैंटेसी शैली में लिखी कहानियों में चित्रित परिवेश एवं परिस्थितियाँ व्यापक और पेन्फुटास्तिक होती है जिसमें यथार्थ और वास्तविकता का कोई आधार नहीं होता ।

1· उषा प्रियम्वदा - मोहबंध, मेरी प्रिय कहानियाँ, - पृ·100

डॉ॰ नामवर सिंह के अनुसार "ये कहानियाँ एक ख्वाब भी जगाती है, और दूसरे ख्वाब में आँखें खोल देती हैं, बल्कि यह एक ऐसा ख्वाब है, जिससे जागने के बाद हर चीज ख्वाब मालूम होती है। यह एक तरह का पागलपन है। दुनियाँ को बदलने के लिए लेखनी अपनी कहानी की दुनियाँ बदल देती है, दुनियाँ के नियमों को तोड़ने के लिए लेखक अपनी दुनिया को दूसरे नियमों से बनाता है। जादू की छड़ी से छूकर हर चीज को वह और ही बना देता है। ताज्जुब नहीं कि वह जादू की छड़ी पाठक को भी छू जाए। बचपन में इस जादू की छड़ी का असर गहरा होता था। लेकिन अब इस संसार को कल्पना भी बचपना होगा।"[1]

नयी कहानी में श्रीकांत त्यागी, रामदरश मिश्र, कमलेश्वर आदि लेखकों ने अपनी कुछेक कहानियों में इस शैली का प्रयोग किया है।

परन्तु जहाँ तक लेखिकाओं का संबंध है फैंटेसी शैली से वे कोसों दूर है। जादुई वातावरण की सृष्टि और भयानक परिस्थितियों की कल्पना के साथ रचनात्मक प्रक्रिया को शायद वे ठीक नहीं बैठा पा रही होंगी। शायद इस लिये उनकी कहानियों में फैंटेसी शैली का प्रयोग नहीं के बराबर है।

नाटकीय शैली

नाटकीय शैली में दो प्रमुख शैलियों का समावेश होता है।
(1) संवाद शैली, (2) एकांकी नाटक शैली। आधुनिक कहानी साहित्य में एकांकी नाटक शैली विशेष रूप से प्रचलित है। नाटकों में जैसे दो पात्रों के बीच नाटकीय ढंग से बातें होती है। मृदुला गर्ग की कहानी "कितनी कैदें" में

1· डॉ॰ नामवर सिंह - कहानी, नई कहानी - पृ॰99

कहीं कहीं नाटकीय शैली का प्रयोग हुआ है । यथा -

"चलो नीचे चलें"
नीचे जाकर क्या होगा
क्या होगा ? नदी के भीतर पत्थरतर फूट पहुँच जायेंगी
और क्या
नहीं नहीं घुम कर ही दम घुटता है
कमाल है । अरे पानी के अन्दर छलांग
छोड़े कह रहा हूँ ।"[1]

उक्त प्रसंग में नाटकीय संवाद शैली का अनुसरण किया गया है ।

शैलीगत मूल्यांकन

सर्जनात्मक प्रतिभा का मूल्यांकन शैलीगत विशेषताएं एवं शैल्पिक प्रसंगों के आधार पर किया जाता है । समसामयिक साहित्यिक रचनाएं शैलीगत विशिष्टताओं से युक्त होने के कारण कथ्य की अपेक्षा शिल्प पर ही आधारित होने लगी है । इस दृष्टि से लेखिकाओं के शैलीगत प्रयोगों पर विचार करना अत्यन्त आवश्यक बात बन जाती है । वैसे हर लेखिका की अपनी निजी शैली होती है और इस शैली के अन्दर रचना के सन्दर्भों को जीवन्त बनाकर हमेशा केलिए प्रतिष्ठित करना उसका लक्ष्य भी बन जाता है । इस लक्ष्य प्राप्ति में वह कहाँ तक सफल हो पाती है यही मूल्यांकन के निष्कर्ष पर पहुँच उभरने वाला तथ्य है ।

1· मृदुला गर्ग - कितनी कैदें, कितनी कैदें - ८९

लेखिकाओं ने कहानियों में विभिन्न प्रकार की शैलियों का प्रयोग किया है । वर्णनात्मक शैली स्वातन्त्र्योत्तर कहानी साहित्य की एक प्रमुख शैली होने के कारण लेखिकाएं इस शैली की ओर विशेष रूप से आकर्षित है। वर्णनात्मक शैली में लिखी कुछ विशेष कहानियां हैं मन्नू भण्डारी की "ईसा के घर इंसान", "गीत का चुम्बन", "सयानी बुआ", "कील और कसक", उषा प्रियम्वदा की "चांद चलता रहा", "दृष्टि दोष", "स्वीकृति", "प्रतिध्वनियां" दीप्ति खण्डेलवाल की "वह तीसरा", "मोह भंग" "कायर", "प्रेत", मृदुला गर्ग की "कितनी कैदें" "हरि बिन्दी" "टुकड़ा टुकड़ा आदमी", "उसकी" "कराह" मेहरुन्निसा परवेज की "हत्या एक दोपहर की" शिवानी की "सती", "करिए छिमा" आदि कहानियों में लेखिकाओं ने कलात्मक सूझ-बूझ के साथ मानव जीवन की संवेदनाओं को गहराई के साथ आंका है । विवरणात्मकता और वर्णनात्मकता की स्पष्टता के कारण कहीं कहीं कहानियों में दृश्यात्मकता उभर आयी है ।

वर्णनात्मक शैली की अपेक्षा आत्मकथात्मक शैली का निर्वाह कम हुआ है। मन्नू भण्डारी की मैं हार गयी, "श्मशान", "पंडित गजाधर शास्त्री" दीप्ति खण्डेलवाल की "वह तीसरा" "आत्म रचना", शिवानी की "चीलगाड़ी", मृदुला गर्ग की "लिली आफ दी वैली" कृष्णा सोबती की "बादलों के घेरे" आदि कहानियों में लेखिकाओं ने वर्णनात्मकता की जटिलता से बच कर सहज विवरणों के द्वारा पाठकों के साथ आत्मीय संबंध स्थापित करने का सफल प्रयत्न किया है ।

चेतना प्रवाह शैली भी लेखिकाओं के बीच विशेष रूप से प्रचलित है । मृदुला गर्ग , दीप्ति खण्डेलवाल, निरुपमा सेवती आदि लेखिकाओं ने इस शैली का सार्थक प्रयोग किया है । इस शैली के माध्यम से इन लेखिकाओं ने आधुनिक मानव के अन्तर्द्वन्द्व का स्वाभाविक विश्लेषण किया है ।

वैसे लेखिकाओं ने पूर्व दीप्ति शैली, पत्रात्मक शैली, फैंटेसी शैली को अपनाया तो है लेकिन बहुत कम क्योंकि इन शैलियों के द्वारा कथ्य की अन्तरंग गहराई को पकड़ पाने की असमर्थता का अनुभव होता है । इस प्रकार विभिन्न शैलियों के प्रयोगों की सार्थकता कहीं-कहीं संवेदनात्मक धरातल से पूर्ण सामञ्जस्य बोल लेती है तो कहीं कथ्य के मर्मांतक अंशों को छोड़ कर अलग खड़ी हो जाती है । आत्मकथात्मक शैली, संगीतात्मक शैली चेतना प्रवाह शैली आदि के माध्यम से आत्माविष्कार का जो आधार ढूंढा गया है कहानियों में वह कहीं-कहीं कृत्रिम सा भी लगने लगता है । ऐसे अवसरों पर शैली आत्मानुभूतियों से वंचित होकर निरी शब्द भंगिमा की सीमा पर आकर रुकने लगती है । ऐसे भी कई उदाहरण दिखायी पड़ते हैं जहाँ शैली के पीछे लेखिकाएं सपाट भाग रही हैं और शैलीगत सूक्ष्मता उनके हाथों से छूट निकली है । आलोच्यकाल की कई लेखिकाओं ने केवल प्रतिभा के चमत्कार को प्रदर्शित करने के उद्देश्य मात्र से प्रेरित होकर रचना के क्षेत्र में रंगों को भरने की कोशिश की है । इस तरह के प्रयास पाठकीय संवेदना को न ही जागृत कर सकते हैं न ही लेखिकाओं की सर्जनात्मक क्षमता को बढ़ावा दे सकते हैं । कहने का यह तात्पर्य है कि शैली की जीवन्तता स्वानुभूत अनुभूतियों की सक्षम अभिव्यक्ति पर आधारित रहती है और जहाँ यह तथ्य भुलाया जाता है वहाँ लेखनी बेकार साबित होती है ।

छठा अध्याय

स्त्री की अस्मिता की खोज और उभरती चेतना - कहानियों के आधार पर

छठा अध्याय

स्त्री की अस्मिता की खोज और उभरती चेतना कहानियों के आधार पर

महत्वाकांक्षा मानव स्वभाव का सहज गुण है । महत्वाकांक्षा के स्वाभाविक विकास केलिए अनुकूल परिस्थिति एवं परिवेश का होना अति आवश्यक है । इस कारण युग बोध के प्रभाव से इसको स्वतंत्र नहीं किया जा सकता ।

नारी की नयी मानसिकता

स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरान्त सामाजिक चेतना का विकास समूचे राष्ट्रीय जीवन में परिलक्षित होने लगा था । परिणामस्वरूप परम्पराओं से तिरस्कृत नारी के प्रति दृष्टिकोण, तथा नारी का दृष्टिकोण दोनों बदलने लगे । ऐसे माहौल में नारी वर्ग में भी नये जीवन के प्रति महत्वाकांक्षा की

उठ मजबूत होने लगी । विकासशील समाज के अनेक नये मोर्चों पर नारी ने नयी जीवन दृष्टि के साथ विभिन्न भूमिकाओं का निर्वाह किया और समाज में नारी एक नयी शक्ति के रूप में अवतरित हुई ।

नवीन उपलब्ध स्वातन्त्र्य भावना ने नारी को अपनी अस्मिता को पहचानने की शक्ति दी । फलस्वरूप नारियों में अपने "स्व" के प्रति गहरी आस्था जन्म लेने लगी । नारी की इस बदलती मानसिकता को तत्कालीन लेखिकाओं ने अपनी कहानियों में विशेष रूप से अभिव्यक्ति दी है । इस सन्दर्भ में कमलेश्वर की निम्नलिखित पंक्तियाँ विचारणीय हैं "आधुनिक नारी अब अपनी पूरी गरिमा, देह सम्पदा और वास्तविक सम्मान के साथ आयी है । "यही सच है", मित्रो मरजानी, "लाल परादा", जिंदगी और गुलाब के फूल आदि बहुत सी कहानियों की नारियाँ निहायत प्रामाणिक संदर्भों और जीवन-प्रसंगों से जुड़ी हुई हैं, जो पुरुष के माध्यम से जीवन मूल्यों या उनके अर्थों की खोज में लुप्त नहीं, वे अपने पूरे व्यक्तित्व के साथ सहयोगी जीवन पद्धति की भागीदार हैं या स्वयं जिम्मेदार ।"[1]

पुरुष लेखकों की अपेक्षा स्त्री की अस्मिता की खोज की समस्याओं को लेखिकाओं ने ही सबसे ऊपर उठाया है। इस कारण लेखिकाओं ने इस दशक की कहानियों में स्त्री के बदलते स्वरूप का, उसकी आत्मकता और नयी अधिकार सीमाओं का अन्वेषण दिखायी पड़ता है ।

स्वतन्त्रता के बाद प्रथम दशक में लिखी गयी कहानियों में लेखिकाओं ने विशेषकर स्त्री के अधिकारों व उसकी आर्थिक विमुक्ति की ओर

---

1. कमलेश्वर - नयी कहानी की भूमिका - पृ. 18

विशेष ध्यान दिया । स्त्री का पुरुष से बराबरी करना, उच्च शिक्षा प्राप्त करना आर्थिक स्वतंत्रता का अनुभव करना आदि उस दशक की कहानियों का प्रतिपाद्य रहा है । जैसे सामान्य रूप में परिवार के लिए रोटी कमाने वाली नारी की पारिवारिक व वैयक्तिक समस्याएं स्वतंत्रता के बाद के दूसरे दशक की कहानियों में परिलक्षित होती हैं । घर और दफ्तर की दोहरी जिंदगी जीने को मजबूर नौकरीपेशा नारी की विवशता को लेखिकाओं ने गहराई के साथ आंकने का प्रयास किया है । साथ ही साथ निम्न वर्ग की महिलाओं की जिंदगी की मजबूरी, एवं पति द्वारा प्रताड़ित होने की स्थिति आदि का भी करुणाजनक चित्रण लेखिकाओं ने प्रस्तुत किया ।

साठोत्तरी कहानियों में नारी चेतना का दूसरा ही स्वरूप दृष्टिगत होता है । नारी जिन नये मूल्यों के आधार पर अपने अस्तित्व की रक्षा करती है वे ही नारी की उभरती हुई चेतना का नवीन रूप प्रस्तुत करते हैं । स्वतंत्र चेता नारी का दोहरा व्यक्तित्व कहीं-कहीं उभर आता है। किसी विषय पर निर्णय लेने में असमर्थता का अनुभव करना दोहरी मानसिकता का परिणाम है । घर की चार दीवारी से बाहर निकल कर पति और प्रेमी के बीच दिल का बटवारा करने वाली औरत के माध्यम से समकालीन प्रेम का नया स्वरूप इस दशक की कहानियों में दिखायी पड़ता है। प्रेम के इस नये समकालीन स्वरूप में नारी कभी प्रेमी और पति के बीच चक्कर काटती हुई अनिर्णय के प्रवाह में बहने लगती है । स्वतंत्र अस्मिता की खोज करने वाली नारी साठोत्तरी काल तक आते-आते अधिक अन्तर्मुखी और दुविधाग्रस्त हो जाती है । परन्तु यहाँ आकर भी अस्मिता की खोज समाप्त नहीं होती । उभरती हुई चेतना के प्रवाह में बह कर नारी विशिष्ट होती जा रही है । न वह सफल पत्नी बन कर अपने दायित्वों को निभा पाती है और न ही प्रेमिका की वफादारी को निभा पा रही है। नारी के इस उन्मुक्त स्वरूप को साठोत्तरी लेखिकाओं ने विशेष रूप से उभारा है ।

उच्छृंखलता पाश्चात्य देशों से आयातित है । सभी प्रकार के बंधनों को तोड़कर उन्मुक्त प्रेम और शारीरिक संबंध से आत्मसंतोष का अनुभव करना ही आधुनिक समाज के आधुनिक नारियों में से आत्मसंतोष का आधुनिक नारियों कुछेक का लक्ष्य है । उच्छृंखल प्रवृत्ति नारी को अन्दर बाहर से दुर्बल कर देती है जिस कारण वह मानसिक व शारीरिक रूप से असन्तुलित और रोगग्रस्त भी हो जाती है। "स्त्रियों को अपने स्वतंत्र व्यक्तित्व के विकास के लिए घर में बंद रखना नहीं है।लेकिन बाहर की वेदी पर यदि स्त्री घर को स्वाहा होने देती है तो उसे देखना चाहिए कि ऐसे समाज बनता नहीं छिन्न-भिन्न ही होता है, न बाहर कोई सार्थ अधिक प्रगति होती है, अधिक दुर्गति ही व्याप्त है ..... स्त्रीत्व को खो कर स्त्री अपनी सार्थकता कभी प्राप्त नहीं कर सकेगी।[1]"

उच्छृंखल रूप व्यवहार नारी के आत्मसत्ता के सामने नयी समस्याओं को जन्म देने लगता है।यद्यपि आत्मनिर्भरता और अहं के कारण नारी पुरुष की बराबरी कर अपने स्वतंत्र व्यक्तित्व को उजागर कर संतुष्ट हो सकती है, फिर भी सामाजिक मान्यता की दृष्टि से यह स्वीकार्य नहीं लगता । वैसे बहुत कम शिक्षित महिलाएं ही पुरुष के व्यक्तित्व को दबाकर अपनी श्रेष्ठता साबित करती हैं । समानता की मांग ही इन आधुनिकाओं का मूल उद्देश्य है और इसी उद्देश्य को ही लेखिकाओं ने प्रायः सभी कहानियों का आधार स्तम्भ बनाया है ।

---

1. जैनेन्द्र कुमार - समय, समस्या और सिद्धान्त - पृ.168

नौकरी पेशा नारी, दायित्व के चौराहे पर

समकालीन लेखिकाओं ने नारी के बदले हुए स्वरूप, सम्पन्न नौकरीपेशा नारी का स्वरूप, नारी का स्वातन्त्र्यबोध, नारी की वैयक्तिक समस्याएं आदि विषयों पर तटस्थ दृष्टि डाली है ।

बढ़ती हुई समस्याओं के कारण स्त्री के कन्धों पर भी पुरुष के समान ही दायित्व का बोझ आ पड़ा है । पुरुषों से भी अधिक आधुनिक नारी अपने दायित्वों के प्रति सतर्क है क्योंकि एक साथ ही उसे घर और दफ्तर की जिम्मेदारियों को निभाना पड़ता है ।

कहानियों में आयी दायित्व से भरपूर इन नौकरी पेशा नारियों के समक्ष नौकरी ही एक मात्र विकल्प है जो उनकी सारी समस्याओं को हल करने और अपना स्वतंत्र अस्तित्व बनाये रखने में सहायक है। "महानगरों में बढ़ती हुई महंगाई और जीवन संघर्ष की तीव्रता ने नारियों को भी आजीविका की ओर उन्मुख किया । परित्यक्ता नारियों के लिए यह आर्थिक विवशता भी है[1] ।"

ऐसी कई नौकरी पेशा कुंवारियां हैं जो आर्थिक दायित्व के बोझ से अपनी सारी खुशियों को तिलांजली देकर आजीवन अविवाहित रहने को मजबूर हो जाती हैं । घर की आर्थिक स्थिति यदि बुरी हो, और उस पर घर की बड़ी संतान लड़की हो, तो घर का सारा भार उसके कन्धे पर आ पड़ता है । छोटे भाई-बहनों को अपने पांव पर खड़े होने

---

1. कृष्ण बिहारी मिश्र - आधुनिक सामाजिक आन्दोलन और आधुनिक हिन्दी साहित्य - पृ.34।

योग्य बनाते-बनाते और परिवार की अन्य समस्याओं को सुलझाते सुलझाते उसकी उम्र ढल जाती है, उसके बाल पकने लग जाते हैं और उसकी अपनी ज़िंदगी उसके लिए बेकार साबित होती है । अविवाहित नौकरी पेशा नारियों के विराट जीवन को कई लेखिकाओं ने उभारा है । उषा प्रियम्वदा की कहानी (संबंध) मन्नू भंडारी की कहानी (क्षय) निरुपमा सेवती की कहानी (टूटा) दीप्ति खंडेलवाल की कहानी (अभिशाप) आदि इसके उदाहरण है ।

विवाहित नौकरी पेशानारियों को लेखिकाओं ने कुछ दूसरे ही ढंग से प्रस्तुत किया है। शिक्षा से प्राप्त स्वाभिमान की भावना के कारण स्त्री पराश्रित न होकर नौकरी के क्षेत्र में प्रवेश करती है और आर्थिक रूप से स्वतंत्रता का अनुभव करती है । यह स्थिति मध्य वर्ग की नारियों में देखी जाती है । निम्न वर्ग या निम्न मध्य वर्ग की स्त्रियों की यह स्थिति नहीं है । पुरुष की बराबरी करने की होड़ या अपना स्वतंत्र अस्तित्व बनाये रखने की इच्छा उनमें उतनी नहीं होती । जीवन की उलझी हुई समस्याओं से मुक्ति पाने के लिए ही वे नौकरी की ओर आकर्षित होती है । अतः इन नारियों का जीवन-संघर्ष रोज़ी रोटी तक सीमित रहता है ।

उच्च मध्य वर्गीय नौकरी पेशा नारियों का स्वरूप कुछ भिन्न है। आर्थिक अभाव इन्हें उतना सालता नहीं । अभावों से मुक्ति पाने के लिए ये नौकरी नहीं करतीं । उच्च शिक्षित एवं स्वतंत्र चेता होने के कारण उनमें अहं की भावना और स्वावलम्बन की इच्छा अधिक बलवती होती है । इस कारण नौकरी के माध्यम से अपने आप को स्वतंत्र घोषित करना ही इनका लक्ष्य होता है । कभी कभी ऐसी स्त्रियाँ 'टाइम पास' के लिए, अपनी बोरियत को दूर करने के लिए, एवं सौन्दर्य प्रसाधन खरीदने केलिए नौकरी करना चाहती हैं ।

अपने अस्तित्व पर जोर देने वाली उच्च मध्य वर्गीय नारी कभी-कभी अपने पति के लिए समस्या बन जाती है । अपने अधिकारों की रक्षा के लिए तुली रहने वाली प्रेम मे अनिवार्य अपने को पुरुष से किसी भी क्षेत्र में कम नहीं मानती । पत्नी की हैसियत से झुकना भी उन्हें स्वीकार्य नहीं होता । ऐसी स्थिति में पति और पत्नी के बीच अहं की दीवार खड़ी हो जाती है और संबंध नये मोड़ की ओर मुड़ जाते हैं । इन स्थितियों को समझाने वाली कुछ विशेष कहानियाँ हैं, दीप्ति खण्डेलवाल की (सन्धि-पत्र) उषा प्रियम्वदा की (संटीमी ठाँव, ज बे, दृष्टिदोष) आदि । अधिकतर ऐसी कहानियों में पति-पत्नी के संबंधों का विच्छेद, तदुपरान्त उभरनेवाली कुंठा और विवशता दिखायी गयी है । कई कहानियां अंत में आते आते समझौते की स्थिति तक पहुंच जाती है ।

पति-पत्नी के बीच समझौते का होना अति आवश्यक है। उनके बीच "असन्तुलन या असन्तोष का मुख्य कारण एक दूसरे के प्रति आपसी समझ का बढ़ता अभाव है । अजीब बात यह है कि जहाँ शिक्षा, आधुनिकता के तमाम प्रभाव बढ़ रहे हैं।लोग जहाँ छोटे छोटे कस्बों से निकलकर नगरों में आकर बस रहे हैं, वहीं इस 'अण्डर-स्टैण्डिंग' का अभाव क्रमशः अधिक बढ़ता दिखाई दे रहा है ।[1]" इस बढ़ते हुए 'अण्डर स्टैण्डिंग' के अभाव में पति-पत्नी के बीच उत्पन्न मानसिक विकार एक ओर संबंधों के विघटन को जन्म देते हैं तो दूसरी ओर स्त्री पुरुष संबंधों की पुनर्व्याख्या की अपेक्षा करते हैं । पति-पत्नी की इन समस्याओं को उभारने वाली कहानियाँ समूचे समाज में

---

1. डॉ॰ रघुवीर सिन्हा - आधुनिक हिन्दी कहानी समाजशास्त्रीय दृष्टि - पृ॰72

प्रवित्त रोगग्रस्त न मलिन स्थिति के परिचायक न होकर, महानगरीय परिवेश में जीनेवाले कुछ लोगों से जुड़ी होती है ।

कुछ कहानियों में लेखिकाओं ने स्त्री के अधिकारों को सुरक्षित कर उसे पुरुषों से भी अधिक सक्षम और प्रतिभा सम्पन्न दिखाने की कोशिश की है । कल्पना की अतिशयात्मकता की बात ऐसे प्रसंगों में दिखायी पड़ती है । लेकिन यह बात सत्य है कि आज की पचास प्रतिशत स्त्रियाँ पुरुष की गुलामी सहना नहीं चाहती । शिक्षित और स्वतंत्र चेता स्त्रियाँ इसके उदाहरण हैं । कभी-कभी अत्यधिक स्वतन्त्रता एवं वैयक्तिक चेतना के गहरे पश्चातापबोध के कारण नारी पतनशील प्रवृत्तियों के गिरफ्त में आकर "मिसफिट" हो जाती है । ऐसे मिसफिट नारियों के लक्ष्यहीन जीवन को दीप्ति खंडेलवाल (छूने से पहले, देहांश, वह) मृदुला गर्ग (कितनी कैदें, अगर यों होता) अवकाश, रुकावट) निरुपमा सेवती (उतरी हुई खरोंच) उषा प्रियंवदा (वापसी, मोहबंध, चांद चलता रहा, प्रतिध्वनियाँ, ट्रिप, कितना बड़ा झूठ, मछलियाँ) आदि लेखिकाओं ने विस्तार के साथ चित्रित कर यह स्पष्ट किया है कि ऐसी स्त्रियाँ एक अरसे के बाद अपने स्वतंत्र जीवन से ऊब जाती हैं । चाह कर भी वे विगत की ओर लौट नहीं पाती और लौटना उनके लिए असंभव बात भी है ।

सेक्स की समस्या

वर्तमान जीवन शैली में परम्परा के सारे मूल्य अस्तित्वहीन हो रहे हैं । सेक्स और काम के संदर्भ में एक पारंपरी सारी मान्यताएं बदल गयी हैं । मनोवैज्ञानिक अध्ययन एवं विश्लेषण ने सेक्स को

पाप की परिधि से बाहर निकाल कर जीवन के यथार्थ धरातल पर चित्रित किया है। भारतीय दर्शन के अधिकारी विद्वान एस॰ राधाकृष्णन काम को अनिवार्य एवं महत्वपूर्ण मानते हैं। उनके अनुसार "समाज के बहुसंख्यक स्त्री पुरुषों के लिए और समूचे समुदाय के लिए सेक्स संबंध अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं अति आवश्यक है।[1]"

एक समय था जब साहित्य में सेक्स को अश्लीलता का पर्यायवाची मान कर निषेधात्मक रूप से अभिव्यक्ति मिलती थी। लेकिन स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् साहित्य में सेक्स पर गंभीरता से विवेचन होने लगा। "सेक्स अब पाप-बोध देने वाली क्रिया नहीं, एक वास्तविक और अनिवार्य आवश्यकता के रूप में स्वीकृत और समादृत है। वह लेखक की कुंठा का पहरावारा नहीं, प्राणों की भौतिक और दैहिक अनिवार्य आवश्यकताओं की सहज मांग है। भोगते अब भोगते हैं, वे झूठी सती या वेश्याएं नहीं हैं ...... अब संबंधों के ध्रुव दो हैं - स्त्री और पुरुष - जो सारी संगतियों और विसंगतियों के साथ अपनी प्राकृतिक अपेक्षाओं से सीधे-सम्बद्ध हैं। भयग्रस्त संबंधों के चिड़-चिड़ाते दमदम अब नहीं है।[2]"

कहानी साहित्य में लेखिकाओं ने मानव जीवन में सेक्स की अनिवार्यता एवं सेक्स के बिना जीवन की अपूर्णता को विस्तृत रूप से चित्रित किया है। अर्थात् सेक्स के प्रति अत्यन्त सहज एवं स्वस्थ मन:स्थिति को

---

1. For the vast majority of men and women and for the race as whole the sex relation is one of the most urgent and important.
Dr. S. Radhakrishnan - Religion and society - p.150

2. कमलेश्वर - नयी कहानी की भूमिका - पृ॰19

बढ़ाने का प्रयास लेखिकाओं ने किया है । आज के समाज में यौन समस्याएं इतनी साधारण बन गयी है कि उस पर टीका टिप्पणी करना बहुत ही आसान हो गया है । ये इस कारण है कि समाज की दृष्टि यौन संबंधों के प्रति बदल गयी है । सेक्स को आज कोई "टैबू" नहीं मानता । जीवन की नैसर्गिक आवश्यकता के रूप स्त्री और पुरुष के स्वस्थ संबंधों को मान्यता मिल गयी है । स्वातन्त्र्योत्तर लेखिकाओं ने अपनी दृष्टि को तर्कसंगत और वैज्ञानिक बनाते हुए नारी की सेक्स की समस्याओं को आधुनिक मान्यताओं के अनुसार सुलझाने की चेष्टा की है । कहीं कहीं सेक्स के उदात्त स्वरूप पर इन लेखिकाओं ने व्यंग्य भी किया है।ऐसी कहानियां है उषा प्रियम्वदा की कितना बड़ा झूठ, प्रतिध्वनियां ट्रिप, शिवानी की पुष्पहार, लोप, मृदुला गर्ग की अवकाश, रूकावट, दीप्ति खंडेलवाल की देहगंध, वह इत्यादि ।

सेक्स के व्यापारिक पक्ष को भी कहानियों में उभारने का प्रयास लेखिकाओं ने किया है । आर्थिक प्रगति और पदोन्नति के लिए किस तरह सेक्स पर आधारित संबंध व्यापार की कसौटी तक पहुंच जाते हैं इसका स्पष्ट उदाहरण कई कहानियाँ प्रस्तुत करती हैं । तरक्की एवं पदोन्नति के लिए स्त्री के मांसल शरीर को काम में लाने वाले समाज के कड़वे यथार्थ को मृदुला गर्ग ने"कोशिश में'निरुपमा सेवती ने "टूक्या" कहानी में और दीप्ति खंडेलवाल ने"डूबने से पहले"कहानी में प्रस्तुत किया है ।

इस प्रकार कहानी लेखिकाओं ने सेक्स के प्रति आधुनातन विचारों को भिन्न-भिन्न कोणों से आंकने की कोशिश की है ।

आधुनिक नैतिक बोध

दूसरे महायुद्ध के उपरान्त विश्व की परिस्थितियों में इतने परिवर्तन आये हैं कि मूल्यों के प्रति पुनः चिन्तन की जरूरत पड़ गयी । युद्धकालीन विभीषिका ने जन-समुदाय में फैली स्वार्थपरता, बेईमानी, धोखेबाजी आदि का ऐसा पर्दाफाश किया कि परम्परागत मूल्यों से आस्था डगमगाने लगी । नैतिक क्षेत्र में बिखराव उस कदर होने लगा कि नयी पीढ़ी नये बोध की नैतिक प्रासंगिकता को मन ही मन आँकने लगी "स्वातंत्र्योत्तर भारत में नैतिकता और सदाचार का व्याख्यान देने वाले महापुरुषों ने अपनी इतनी गंदी व्यावहारिक तस्वीर पेश की जिससे युवा वर्ग घृणा की हद तक उनके लिए अपने मन में असम्मान संजो बैठा है । पर उसके पास उन्हीं के साथ चिपटने के अलावा कोई दूसरा रास्ता भी नहीं है । प्रत्येक आदमी को जीने के लिए रोटी, कपड़ा, और दूसरी मामूली चीजों की आवश्यकता है ही । पर ईमानदारी से वह इन्हें भी नहीं पा सकता । फिर अपने ही सामने वह अपने से कम मेहनत करनेवालों को मौज उड़ाते देखता है । श्रम का इतना उपहास शायद किसी पूँजीवादी देश में भी नहीं होगा, जितना हमारे यहाँ होता है ।"[1] ऐसी गिरी हुई स्थिति से देश के चारों ओर निराशा, अवसाद और हताशा से ग्रस्त व्यक्ति के चित्र उभरने लगे । इन व्यक्तियों ने अपने भविष्य को निराशा की काली रेखाओं से आच्छादित होते देखा । परिणामतः व्यक्ति की संवेदनशीलता जटिल होती गयी । "इस व्यक्ति ने सारी नैतिक मान्यताओं का खंडन और विघटन अपनी आँखों से देखा है और उनकी व्यर्थता का अनुभव भी किया है । यही कारण है कि इस व्यक्ति की मुद्रा सदैव कुंठा-बोध से ग्रस्त रही है ।

---

1. प्रह्लाद अग्रवाल - हिन्दी कहानी सातवाँ दशक, पृ.2।

ऐसा नहीं कि यह व्यक्ति बिलकुल ही जड़ बन गया है। बल्कि वह एक नयी नैतिकता के लिए छटपटा रहा है, एक ऐसी नैतिकता के लिए जो आधुनिक बोध के साथ समुचित व्यावहारिक सन्तुलन पैदा कर सके। किन्तु उसकी छटपटाहट निरर्थक होती जा रही है। बाह्यजगत उसके साथ नहीं, आधुनिक दृष्टि का वरदान उसके लिए भीषण संकट का अभिशाप बन गया। इस संक्रमण की प्रक्रिया से गुजरता यह मनुष्य संकट बोध के अन्तिम छोर पर खड़ा है चिंतातुर मुद्रा लिए।"[1]

स्वातन्त्र्योत्तर साहित्यकारों ने मूल्यच्युति की यातनाओं से गुजरते हुए व्यक्ति की विवशताओं को बड़ी खूबी के साथ रेखांकित किया है।

आधुनिक युग बोध एवं नैतिकता संबंधी नयी मान्यताओं के कारण धार्मिक व्यवस्था लगभग समाप्त सी हो गयी है। धर्म के नाम पर व्यक्ति व्यक्ति को लूट कर अपनी प्रगति करता है। धर्म का जो स्वरूप अब समाज में वर्तमान है वह बिखरता हुआ नजर आता है। क्यों कि धार्मिक व्यवस्था एक विशिष्ट वर्ग द्वारा नियन्त्रित है और यह वर्ग स्वयं पतन की ओर अग्रसर हो रहा है। परम्परागत नैतिक मान्यताओं के विघटन एवं नये युग बोध के जन्म के कारण जीवन और जीवन संबंधी व्याख्याएं अव्यावहारिक सिद्ध हो रही है।

जहाँ तक पारिवारिक संबंधों की बात है यह कहा जा सकता है कि पारिवारिक संबंध अब भारतीय परंपरा के अनुकूल नहीं रहे।

---

1. डा॰ भगवानदास वर्मा – कहानी की संवेदनशीलता सिद्धांत और प्रयोग – पृ॰204

अर्थ की मजबूरियाँ और अस्तित्व की जिजीविषा ने मानवीय संबंधों के परम्परागत रूप को खोखला कर दिया है । पिता-पुत्र, पति-पत्नी, भाई-बहन आदि के रिश्ते कच्चे धागों में बंधे हुए हैं ।

संबंधों के अन्तराल को लेखिकाओं ने तटस्थता के साथ स्पष्ट किया है । पिता-पुत्र के बीच अलगाव को चित्रित करनेवाली कहानियाँ हैं मृदुला गर्ग की "लौटना और लौटना", मेहरुन्निसा परवेज़ की "पितृशोक", "सुरबन" और उषा प्रियम्वदा की "वापसी"। "वापसी" कहानी नयी पीढ़ी के परम्परागत मूल्यों की पराजय को दर्शाने वाली श्रेष्ठ कहानी है । इसमें पिता गजाधर बाबू पराजय की यातना को सहनेवाले पात्र हैं ।

पति-पत्नी के बीच पड़नेवाली दरारों से टूटते रिश्तों की कहानियाँ हैं मन्नू भंडारी की बंद दराजों के साथ, शायद, तीसरा आदमी, नकली हीरे, कील और कसक, उषा प्रियम्वदा की "मोहबंध, जाले, कंटीली छाँह, दृष्टि-दोष, प्रतिध्वनियाँ, कितना बड़ा झूठ, ट्रिप, स्वीकृति, झूठा दर्पण, दीप्ति खंडेलवाल की वह तीसरा, जमीन, सहिष्णु, कायर, धोखा, नाटक, वह, एक अदद औरत, देहगंध, मृदुला गर्ग की अवकाश, यह मैं हूँ, उसकी कराह, मिली आँक दी तैली, सजावट, कितनी कैदें, निरुपमा सेवती की सुनहरे देवदार, खामोशी को पीते हुए, झूठ का सच, मेहरुन्निसा परवेज़ की खामोशी की आवाज, टहनियों पर धूप, और शिवानी की चील गाड़ी आदि ।

पति-पत्नी के संबंधों के विघटन का एक अनिवार्य परिणाम यह हुआ है कि विवाह संबंधी परम्परागत धारणाएं एवं मान्यताएं झूठी साबित हो रही हैं। "एक जमाना था, जब किसी पिता की पुत्री किसी पिता के पुत्र के साथ एक झटके के साथ जुड़ जाती थी । अग्नि और

ब्राह्मणों की लाश्यों में जाति के कुछ सदस्यों की उपस्थिति में लाल कैरे खा कर पुरुष के साथ अभिज्ञभाग्मत्र के लिए हो जाती थी । विवाह एक आकस्मिक घटना थी वह एक एक्सिडेंट मात्र था । अच्छा हो या बुरा, जुल्मी हो या दयालु, शराबी हो या जुआरी, पत्नी के साथ ईमानदार हो या न हो, स्त्री की जीवन-चर्या में ऐसे कोई फर्क नहीं पड़ता था । वह विवाह से पहले पिता की पुत्री विवाह के बाद पति की पत्नी और उसके बाद पुत्रों की माँ इन रूपों में जिंदगी भर गुलाम बन कर रहती थी ।[1]"

आज की स्थिति तो परिवर्तित हो गयी है । नारी पहले जैसे आज गुलामी की यातना नहीं सह सकती क्यों कि आज की नारी पहले की अपेक्षा आर्थिक रूप से सुरक्षित हो चुकी है । इस कारण उसे परम्परागत नारियों के समान दमन यंत्र में पिसा जाना स्वीकार नहीं । आधुनिक शिक्षित समाज में पति-पत्नी कोई एक दूसरे के अधीनस्त नहीं है और न ही उनका सहयोग एक तरफा होता है ।

<u>सती धर्म की मान्यताएं</u>

नये वैज्ञानिक दृष्टिकोण और विकसित बौद्धिक विचारों के कारण आधुनिक नारी परम्परागत मान्यताओं को बुद्धि की आँखों से परखने की आदी हो गयी है । इस कारण पुराने मूल्य और आचरण की पवित्रता उन्हें आधारहीन लगती है । ऐसे परम्परागत मान्यताओं की झूठी

---

1. डॉ. भगवानदास वर्मा - कहानी की संवेदनशीलता सिद्धान्त और प्रयोग - पृ.199

आड में सब अपनी स्वार्थ पूर्ति ही करते हैं । अतः विवाह और शास्त्रों के इस युग में पुरानी मान्यताएं विकृतियों का दूसरा नाम बन गयी हैं । आज की आधुनिक नारी विवाह की मान्यताओं को नकारती हुई एक ऐसी बिन्दु पर खड़ी है जहाँ वह आगत की समस्याओं से ग्रस्त नजर आती है । उसने जान लिया है कि कुछ सुविधा एवं निजी अधिकारों के लिए एक सीमित दायरे में हाथ तोड़ा मचाना व्यर्थ है अतः एक सामूहिक मंच तैयार कर नारी वर्ग अपने अधिकारों को पूर्ण रूप से प्राप्त करने के प्रयास में है । इसके लिए सर्वप्रथम वह परम्परागत जीर्ण मान्यताओं को आधारहीन साबित करती है । जन्मजन्मांतर के पतिव्रता-धर्म जैसी कोई गलतफहमी अब उसके मन में नहीं है इस कारण पतिव्रता धर्म की पाबन्दियाँ उसे अस्वीकार्य लगती हैं । और न ही वह पुरुष के लिए सिर्फ भोग की वस्तु बन कर अबला और कमजोर वर्ग के नाम से अभिहित होना चाहती है ।

इतनी प्रगति करने के बावजूद भी नारी पुरुष संस्कारों से अभिशप्त है । इसका प्रमुख कारण परम्परागत पुरुष सत्तात्मक समाज के संस्कार का प्रभाव हो सकता है । इस प्रभाव से पूर्ण रूप से मुक्ति पाना इस शताब्दी की स्त्रियों के लिए असंभव प्रतीत होता है, क्यों कि आधुनिक शिक्षित पुरुष सैद्धान्तिक रूप से "विमन-लिब" पर लम्बी चौड़ी भाषण देता जरूर है । लेकिन उसे व्यावहारिक रूप देने में वह असमर्थ है । स्त्रियों के प्रति पुरुषों का दृष्टिकोण आज भी बहुत संकीर्ण एवं रूढ़ीग्रस्त है । स्त्री को अब भी वह अपनी वासना विकृति और सुख का खिलौना मानता है । विवाह के पश्चात् भी पर स्त्री के साथ संबंध जोड़ने से वह हिचकता नहीं है। लेकिन अपनी पत्नी का किसी तीसरे के साथ संबंध को वह बर्दाश्त नहीं कर पा

आधुनिक शिक्षित स्त्रियाँ पुरुषों के इस दकियानूस विचारों का खंडन बड़े ही तर्कसंगत रूप से करती हैं । यदि पुरुष दूसरी स्त्री से संबंध जोड़ सकता है तो ? स्त्री भी इस अधिकार को अपना सकती है । स्त्रियों का यह दृष्टिकोण तर्कसंगत तो लगता है, लेकिन नैतिकता की दृष्टि से अनैतिक है ।

लेखिकाओं की कहानियों में ऐसे अनेक स्वतंत्र विचारों वाले नारी पात्र आये हैं जो परम्परागत मान्यताओं का खंडन कर नये सिरे से जीवन निर्वाह करने को सोचती हैं । ये नारी पात्र विवाहेत्तर संबंध को अवैध न मान कर सहज स्वभाविक एवं परिस्थिति जन्य मानती हैं । नारी वर्ग की नयी जीवन दृष्टि को उभारने वाली कुछ श्रेष्ठ कहानियाँ हैं उषा प्रियम्वदा की कितना बड़ा झूठ, ट्रिप, मोहबंध, जाले, मृदुला गर्ग की अवकाश, दीप्ति खंडेलवाल की वह, मोह इत्यादि कहानियाँ । इन कहानियों के नारी पात्र सेक्स को केवल शारीरिक आवश्यकता के रूप में देखती हैं, पाप-पुण्य की दृष्टि से नहीं । अतः ये नारी पात्र पारम्परिक पत्नी बोध से मुक्त होती जा रही हैं । उनके लिए पति और प्रेमी में कोई विशेष अन्तर नहीं है । पति के होते हुए किसी तीसरे से प्रेम संबंध रखना उनके लिए पतिव्रता धर्म का भंग भी नहीं है । ऐसे पात्र पति के प्रति पूर्ण रूप से प्रतिबद्ध नहीं रहते । इस कारण पति के लिए असंख्य कष्टों को सहन करती हुई आत्माहुति देने वाली पत्नी आज कम दिखायी पड़ती है । "कमिटमेंट" का यह अभाव ही स्त्रियों में पर पुरुष सम्पर्क का रास्ता खोल देता है कि स्त्री के मानस से "पति" और पुरुष के मानस से पत्नी के पारंपरिक रूप तहस नहस हो गये हैं .... दोनों के व्यक्तित्व पूर्णत्व की खोज में खंडित होते जा रहे हैं। फल यह हुआ है कि "पति और पत्नी की इकाई दो अर्द्ध इकाइयों में बदल गई है और अब ये अर्द्ध इकाइयाँ अपने परिवेश से जीवन के संगत मूल्यों और पद्धतियों को चुनकर साथ रहते हुए, स्वतंत्र और परिपूर्ण इकाई बन सकने की दिशा में अग्रसर है ।"[1]

---

1. कमलेश्वर - नयी कहानी की भूमिका - पृ.158

आधुनिक समाज में पति पत्नी दो ऐसे कोण है जिनके बीच कोई विशेष लगाव व संवेदनात्मक संबंध नहीं है। अतः "पति-पत्नी और वो" का एक नया त्रिकोण आज के समाज में उभर रहा है। "यहाँ भावनात्मक संकट आ खड़ा होता है, पति कहीं अन्यत्र अनुरक्त है, संबंध-विच्छेद होता है। पत्नी दूसरा विवाह करने का साहस रखती है।"[1] दोनों अपने पति-पत्नी के इस तरह के नये जीवन में दोनों अपने अपने स्थान पर अपने आप को सुरक्षित पाते हैं।

महान सन्धि खंड

बीसवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध एक ऐसा समय खंड है जिसकी गहराई में निहित संभावनाओं को परखना और पहचानना उतना आसान कार्य नहीं है। समूचे विश्व के लिए उत्तरार्द्ध का सामयिक महत्व इसलिए है कि वैज्ञानिक प्रगति और तकनीकि सम्पूर्णता ने जहाँ एक ओर मानव जीवन के विकास को आगत से बिल्कुल काट दिया है तो दूसरी ओर मानव मूल्यों की नयी व्याख्या प्रस्तुत करते हुए एक नया जीवन दर्शन उसने स्थिर भी कर लिया है। इस जीवन दर्शन की प्रासंगिकता इस बात पर आधारित है कि मनुष्य हर कीमत पर जीने के लिए अभिशप्त है और इस अभिशप्तता का भार चाहे सकारात्मक हो या नकारात्मक, उससे बाहर निकला नहीं जा सकता। अस्तित्ववादी विचार धाराएं और अन्य भौतिकवादी दृष्टियों ने विश्व के जीवन को उलट पलट दिया है।

---

1. हिन्दुस्तानी शोध पत्रिका - जनवरी-मार्च - पृ.14

भारतीय परिवेश में भी इन वैचारिक परिवर्तनों का प्रभाव परिलक्षित होता है। आर्थिक एवं भौतिक दायरों में आनेवाले परिवर्तनों में भारतीय जन मानस को अतीत से मुक्त करने का और आने वाले कल की एक उन्मुक्त परिकल्पना करने की प्रेरणा दी है। मूल्यबोध के क्षेत्र में आने वाले परिवर्तनों के कारण नयी पीढ़ी के सामने समस्याओं का एक ढेर खड़ा हो गया है जिसके बीच से मार्ग ढूंढ़ निकालना अपने आप में एक कठिन साधना है। रास्ते की खोज में परम्परागत मूल्यों को अपना सम्बल बनायें, या आधुनिक मूल्य बोध का सहारा लें, ये एक विकट सवाल है जिसका सही जवाब देने में नयी पीढ़ी असमर्थ है। इस लिए मूल्य संक्रमण के इस प्रभाव में एक ओर विगत मूल्यों की उपेक्षा हो गयी है तो दूसरी ओर नये मूल्यों की प्रतिष्ठा नहीं हो पायी है। मूल्यों की दृष्टि से एक "वैक्यूम" या एक "रिक्तता" का आभास नयी पीढ़ी को हो रहा है। यही कोई नयी बात कह कहने की आशा लिये उन्मुक्त क्षितिज की प्रतीक्षा में नयी पीढ़ी खड़ी है। प्रतिक्रिया नयी पीढ़ी की उलझन, संघर्ष, निराशा क्रोध आदि की कहानियां बड़ी मात्रा में मिलती है। परिवेश से कटे पात्र, नये परिवेश की खोज करने वाले पात्र, दिशाहीनता का एहसास करनेवाले पात्र और परिवर्तन के आयामों की खोज में डूबते उभरते पात्र ये सब इस मरीचिका के विभिन्न बिन्दुओं पर खड़े नजर आते हैं। आशा की जा सकती है कि यहाँ से एक नयी दिशा का प्रारंभ होगा और यह प्रारंभ नये मूल्यबोध के आरंभ का सूचक होगा।

मूल्यांकन

स्वातन्त्र्योत्तर कहानी साहित्य में, नारी के जीवन में आये अनेक नये मोड़ों को लेखिकाओं ने जीवन के यथार्थ पहलुओं से जोड़कर प्रस्तुत किया है। अस्तित्व की स्थापना के लिए संघर्षरत नारी, जीवन की विभिन्न भूमिकाओं को निभा रही है। परम्परागत सामीवादी-दीदीवादी

विकृत परम्परा से वह मुक्त है क्योंकि वह सहानुभूति की नहीं, संघर्ष की नयी भूमि चाहती है । अतः लेखिकाओं ने नारी को उस इकाई के रूप में प्रस्तुत किया है जिसे जीवन के अनेक नये सन्दर्भों, एवं नयी दिशाओं से गुजरना पड़ रहा है ।

नयी नारी का स्वरूप

कहानियों में आये प्रायः सभी नारी पात्र आर्थिक रूप से स्वतंत्र नजर आते हैं। शिक्षा के क्षेत्र में परिवर्तन की आहट से पता चलता है कि नारी की स्थिति में कुछ सुधार हुआ है । वह उच्च शिक्षा ग्रहण कर आत्मनिर्भर हो रही है । और उसे अपना जीवन सुरक्षित नजर आ रहा है । स्त्री की बढ़ती हुई स्वतंत्रता एवं उसके स्वतंत्र विचारों के कारण स्त्री पुरुष के संबंधों में दरारें पड़ने लगते हैं जिसका सार्थक चित्रण कहानियों में प्रस्तुत किया गया है ।

अत्यधिक आत्म विश्वास और स्वतंत्र बोध नारी को पथभ्रष्ट कर देता है । परिणामस्वरूप वह "मिसफिट" पात्र के रूप में परिवर्तित हो जाती है । ऐसे अनेक मिसफिट पात्रों का दर्शन हमें कहानियों में मिलता है ।

सेक्स के आधुनिक नये रूप को लेखिकाओं ने नये सिरे से प्रस्तुत किया है । "सेक्स" के प्रति उदात्त दृष्टिकोण लोगों को किस प्रकार अश्लीलता की ओर ले जा रहा है इस सत्य की ओर लेखिकाओं ने कहानियों द्वारा संकेत किया है ।

नैतिकता के परिवर्तित स्वरूप पर भी लेखिकाओं ने दृष्टि फेंकी है । आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में जिस नवीन नैतिकता को प्रश्रय मिल रहा है उसके परिणामस्वरूप परम्परागत नैतिक बोध मिटता जा रहा है । नयी पीढ़ी पूर्ण रूप से नयी नैतिक मान्यताओं को अपनाती हुई आधुनिक वातावरण में साँस ले रही है ।

दाम्पत्य जीवन के टूटते स्वरूप का चित्रण भी कहानियों में मिलता है । एक निष्ठा की माँग अब अर्थहीन सिद्ध हो चुकी है । नारी के लिए पति और प्रेमी पृथक पृथक सत्तायें हैं । वह दोनों के साथ एक साथ संबंध स्थापित कर पाती है । कभी वह पति को छोड़ कर प्रेमी की हो जाती है और कभी प्रेमी को छोड़ कर पति की । वैवाहिक जीवन के तनावों का सम्बन्ध-सापेक्ष चित्रण कहानियों की एक और विशेषता है ।

पुरातन के स्थान पर अद्यतन की स्थापना करते हुए आज के स्त्री-पुरुष एक महान मोड़ पर पहुँच चुके हैं, जहाँ वे संशय ग्रस्त दृष्टि से एक दूसरे को देखने लगते हैं । क्योंकि उनके सामने अनेक छोटे बड़े मोड़ हैं । किस मोड़ से मुड़ना है यह वे तय नहीं कर पा रहे हैं ।

ऽऽऽऽऽऽऽऽऽऽ

उपसंहार

नयी अस्मिता की खोज

नारी के बदलते स्वरूप और उसकी नयी अस्मिता जिस तरह लेखिकाओं की कहानियों में प्रतिबिम्बित हुई है वह अपने में एक महत्वपूर्ण विषय है । कहानियाँ एक ओर समसामयिक नारी के जज़्बातों को, उसके अस्तित्व की समस्याओं को, सकारात्मक स्थितियों से जोड़कर देखने की कोशिश करती है तो दूसरी ओर नकारात्मक स्थितियों से नारी की अवहेलना को मुक्त करने में स्वयं असमर्थ भी साबित होती हैं । प्रायः सभी लेखिकाओं ने नारी के आधुनिक स्वरूप को उभार कर समाज में स्त्री-पुरुष की समानता पर बल दिया है और आधुनिक नारी ने भी पुरुषों के समान्तर चल कर अपनी जागरूकता और प्रबुद्धता का परिचय दिया है । नारी वर्ग में नवोन्मेष व नयी जागृति का शुभारंभ स्वातन्त्र्योत्तर काल से ही होने लगा था ।

स्वातन्त्र्य संग्राम ने युगों से सुषुप्त नारी को जागृत कर उसे अपने अधिकारों के प्रति सचेत कराया । परिणामस्वरूप परतंत्रता की बेड़ियों को तोड़कर स्वतंत्र नारी आत्मनिर्भर बनने की आकांक्षा को संजोने लगी । आत्मनिर्भर बनने के लिए शिक्षा की अनिवार्यता को उसने महसूस किया । नारी को शिक्षित कर उसकी स्थिति को सुधारने के लिए तत्कालीन कई राजनेताओं ने महत्त्वपूर्ण कार्य किये।कई जगहों में शिक्षा की नई संस्थाओं की स्थापना हुई।सरकार ने भी इस क्षेत्र में अपना सम्पूर्ण योगदान दिया ।

स्वातंत्र्योत्तर कालीन परिस्थितियों में आये हुए परिवर्तनों के परिणामस्वरूप नारी का परम्परागत स्वरूप शनैःशनै क्षीण होता गया । नयी पीढ़ी की मान्यताएँ एक ऐसे स्त्री-समाज की परिकल्पना करती है, जहाँ स्त्री एक स्वतंत्र इकाई के रूप में अपनी अस्मिता की खोज करती है । समसामयिक बोध से प्रभावित इस विचारधारा की गहरी छाप लेखिकाओं की लेखनी में देखी जा सकती है । बदलती हुई मान्यताओं के आधार पर नारी का जो स्वरूप स्थापित होने लगा है वह एक ओर विवादास्पद है तो दूसरी ओर भारतीयता की सीमाओं से परे अन्तर्राष्ट्रीय भावधारा से प्रभावित भी है । इस कारण समसामयिक साहित्य में स्वातंत्र्योत्तर नारी की जो झलक मिलती है वह पूर्णतया नयी है, विवादास्पद है, और नारी चरित्र के नये विकास की ओर संकेत करती है ।

नारी का संघर्ष

नयी पीढ़ी की बदलती हुई आकांक्षाओं के अनुरूप लेखिकाओं ने नारी के संघर्षात्मक स्वरूप को, उसके आक्रोश के स्वर को और अधिकारों के प्रति उसकी सजगता को वाणी देने की कोशिश की है । समसामयिक साहित्य में आनेवाले नारी पात्रों को देखने से पता चलता है कि भारतीय नारी आज

नये तेवरों को ग्रहण कर चुकी है । जागरूक नारी की इस नयी भूमिका को भली-भांति प्रतिबिम्बित करनेवाली रचनाओं के माध्यम से लेखिकाओं ने नारी संबंधी नयी दृष्टि को स्वर देने का प्रयास किया है ।

जहाँ कहीं भी नारी के प्रति अन्याय हुआ है उसके प्रति आक्रोश प्रकट करने में ये लेखिकाएं नहीं चूकती । उच्च वर्ग, मध्य वर्ग व निम्न वर्ग की महिलाओं के जीवन की पीड़ा, कसक, टीस, कुंठा, सन्त्रास आदि को बड़े ही सशक्त ढंग से लेखिकाओं ने प्रस्तुत किया है । इसके माध्यम से लेखिकाओं ने यह सिद्ध करने की कोशिश की है कि मुक्ति के पथ पर संघर्ष करती हुई नारी को मंजिल की प्राप्ति के लिए कोसों दूर आगे बढ़ना है । इस संदर्भ में बनते बिगड़ते रिश्तों की अनेक कहानियाँ स्वयमेव स्थापित होने लगती हैं । इसके अतिरिक्त इन कहानियों में आर्थिक दबावों के चपेटों में आकर टूट कर बिखर जाने की व्यथा है।साथ-साथ प्राकृतिक एवं दैवी कारणों के निधान से उत्पन्न होनेवाले जीवन की विडम्बना है और इसी कारण लेखिकाओं की लेखनी अधिक वैविध्यपूर्ण एवं प्रभावात्मक लगती है ।

लेखिकाओं की लेखनी में जिन समस्याओं का प्रतिपादन हुआ है वे समस्याएं बड़ी सीमा तक स्वतंत्रता पूर्व की समस्याओं से भिन्न हैं । स्वतंत्रता पूर्व की नारी अंधविश्वास, रूढिवादिता, अशिक्षा आदि समस्याओं की शिकार बनी हुई थी । लेकिन स्वातंत्र्योत्तर काल की नारी स्वतंत्रचेता बनकर अधिकारों की रक्षा के लिए तुली हुई लगती है और कहानी की केन्द्र बिन्दु बन जाती है । इस कारण अधिकारों की मांग और उसकी प्राप्ति के लिए संघर्ष स्वातंत्र्योत्तर नारी की अस्मिता की सबसे प्रमुख पहचान बन जाती है । लेखिकाओं ने पाश्चात्य महिलाओं के समान अधिकारों के लिए संघर्ष करनेवाली इकाई के रूप में भारतीय नारी को भी देखने की कोशिश की है ।

लेकिन यह कोशिश पूर्ण रूप से यथार्थपरक है या नहीं यह विवादास्पद है। संघर्ष के पथ पर खड़ी होनेवाली नारी की आवाज एक सीमा तक आम भारतीय नारी की आवाज न होने पर भी आनेवाले कल की नयी पीढ़ी के स्वर की पूर्वध्वनि है। इस दृष्टि से लेखिकाएं कल की समस्याओं के प्रति जागरूक नजर आती हैं।

अभिव्यक्ति के नये आयाम

जहाँ तक अभिव्यक्ति की समस्या है नवलेखन के आयाम भाषागत एवं शैलीगत प्रयोगों से जुड़ने लगते हैं। ये प्रयोग परम्परागत न होकर समसामयिक जीवन बोध से उभरी हुई स्थितियों की अभिव्यक्ति की तलाश करते हैं। इस कारण भाषा के नये अर्थ और अर्थ की नयी भाषा, संकेत के अजनबी अर्थ, अजनबीपन से जुड़े संकेत आदि समूची कहानियों में उभर कर आने लगते हैं। कहीं कहीं लगता है कि नयी परिस्थितियों का, और मानसिक संघर्ष का, सही स्वरूप अभिव्यक्त करने में भाषा अक्षम बन गयी है और इस क्षमताहीनता से भाषा को उभारने की कोशिश में इतनी प्रयोगात्मक, वैविध्यता का चयन होने लगता है कि कहानियों का बहुत सारा हिस्सा मानसिक संवेदनाओं से जुड़ कर ही सम्पूर्णता ग्रहण कर सकता है। इसलिए कही हुई कहानी से अनकही कहानी ज्यादा महत्वपूर्ण बन जाती है।

निष्कर्ष

समूचे शोधात्मक अध्ययन के आधार पर जो पहलू उभर आये हैं, उनमें निम्नांकित सवालों का जवाब निहित है। इसलिए शोध के अन्त में ये सवाल और जवाब महत्वपूर्ण बन जाते हैं। प्रश्नों को निम्नांकित रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है।

1\. समूची कहानियों में आयी स्थितियाँ कहाँ तक वास्तविक लगती हैं ?
2\. अगर स्थितियाँ कल्पित हैं तो इन स्थितियों की सृष्टि में लेखिकाओं को कहाँ से प्रेरणा मिली है ?
3\. कहानियों में आये पात्र कहाँ तक सच्चे लगते हैं ?
4\. क्या ये कहानियाँ भारतीय परिवेश का उल्लंघन कर अभारतीय जीवन को महत्व देती हैं ? अगर हैं तो क्यों ?
5\. आत्यन्तिक रूप से लेखिकाओं ने नारी कीअस्मिता की तलाश में किन-किन तथ्यों को महत्वपूर्ण माना है ?
6\. क्या ये कहानियाँ आगामी साहित्य सर्जन की दिशा निर्धारित कर सकती हैं ?
7\. प्रतिबद्धात्मक साहित्य सर्जना से ये कहानियाँ कहाँ तक जुड़ी हैं ?
8\. लेखिकाओं की कहानियों में प्रतिबिम्बित नारी के बदलते स्वरूप कहाँ तक सच्चे हैं और कहाँ तक काल्पनिक ?

1\. समूची कहानियों में आयी स्थितियों पर विचार करने से पता चलता है कि जीवन के अनुकूल क्षणों के बहुविधीय पक्षों पर सूक्ष्म अन्तर्दृष्टि डालकर लेखिकाओं ने उन जीवनानुभवों को कहानी का रूप दिया है। इस कारण कहानियों में आयी अधिकांश स्थितियाँ जीवन्त लगती हैं इन कहानियों की गहराई में संवेदित नारी की चेतना का स्वर मुखरित होता है।

कहानियों में जिन "सिद्धान्तों" का विधान किया गया है वे इस बात को पुष्ट करनेवाली हैं कि स्वातन्त्र्योत्तर कालीन नारी का स्वरूप परिवर्तित हो गया है। घर की चारदीवारी के बाहर,

खुले आकाश के नीचे, बाहें फैलाई हुई गलियों के सायों में, गगनचुंबी अट्टालिकाओं की दफ़्तरनुमा कमरों में ज़िंदगी जीते जीते वह कहाँ तक पुरानी रही और कहाँ तक नयी । यह विचारणीय है ।

यहाँ कहानियों में प्रतिबिम्बित स्थितियाँ यह व्यक्त करती हैं कि शिक्षित और स्वावलम्बिनी बनने के बाद नयी पीढ़ी की नारी यह मानकर नहीं चलती है कि उसकी ज़िंदगी केवल एक पुरुष के लिए ही समर्पित है । कभी न आनेवाले पुरुष के इन्तज़ार में अपने यौवन को लुटाने के बजाय पल दो पल का साथ देनेवाले पुरुष की बाहों मे समा जाना ही उसे स्वीकार्य है । दोस्तीनुमा यह सम्बन्ध कोई शाश्वत रिश्ता न रहकर शारीरिक सम्बन्धों के स्तर पर रुककर वही "फुलफिल" हो जाता है । इस तरह का "फुलफिलमेन्ट" तात्कालिक होने पर भी, लेखिकाओं की आँखों में एक महज़ ज़रूरत है । सम्बन्धों के स्तर को निर्लिप्त भाव से देखने की यह क्षमता स्वातन्त्र्योत्तर लेखिकाओं की लेखनी की महत्वपूर्ण उपलब्धि है । कहानियों में उभर कर आई ऐसी स्थितियाँ न वैयक्तिक हैं न सामाजिक, परन्तु सूक्ष्म प्रतिक्रियाओं से जनित मानसिक कशमकशों से जन्म लेती हुई नज़र आती है । इसलिए वैयक्तिकता के स्तर पर भी पूर्ण रूप से उन्हें कसा नहीं जा सकता । सामाजिक स्तर पर इसीलिए नहीं कसा जा सकता, कि स्थितियों से जनित परिणाम कहीं कहीं सामाजिक प्रतिबद्धता के विरुद्ध खड़े हो जाते हैं । इस कारण आलोच्य कहानियों में आई हुई स्थितियाँ सामाजिक जीवन की बेतुकी विषमताओं से व्याप्त होकर नारी की संवेदनात्मक प्रतिक्रियाओं के बीच पनपती हुई दिखाई पड़ती है ।

2• अगर स्थितियाँ कल्पित है तो इन स्थितियों की दृष्टि में लेखिकाओं को कहाँ से प्रेरणा मिली है ?

कहानियों में दो प्रकार की स्थितियाँ उभर आयी हैं। एक वे स्थितियाँ हैं जो आज के भारतीय समाज में वैयक्तिक एवं पारिवारिक जीवन के हर मोड पर दिखायी पडती है। दूसरी वे स्थितियाँ हैं जो सामान्य परिस्थितियों में घटित न होकर असाधारण परिस्थितियों में वैयक्तिक सीमाओं में घटित होती हैं। प्रथम प्रकार की स्थितियाँ सामान्य जीवन से जुड़कर जीवन में आये परिवर्तनों की झलक प्रस्तुत करती है तो दूसरी प्रकार की स्थितियाँ वैयक्तिकता के पुट को लिए भोगे हुए यथार्थ को सूचित करती हैं।

वैयक्तिक यथार्थ सामाजिक यथार्थ नहीं बन सकता। इस कारण इन स्थितियों में काल्पनिकता और अतिरंजना का आरोप किया जाना स्वाभाविक ही है। फिर भी इन स्थितियों के माध्यम से परिवर्तित जीवन बोध की ओर, नये वर्ग की चिन्तन प्रणाली की ओर, आने वाली नयी पीढी की ओर मूल्यवान संकेत मिलता है। इन कल्पित परिस्थितियों में मिलनेवाली जीवन की झाँकी यथार्थ से दूर होने पर भी यथार्थ से जुडी हुई लगती है।

वैसे यथार्थपूर्ण स्थितियाँ तो समाज के सत्य को उभार कर सकती है। और प्रतिबद्ध लेखन को जन्म देती है। परन्तु मात्र समाज में घटित होनेवाली स्थितियों के आधार पर, सत्य का पूरा स्वरूप आँका नहीं जा सकता। कहीं-कहीं इसलिए पूरक स्थितियों की भी कल्पना

करनी पड़ती है । इस तरह संभावित स्थितियां जन्म लेती हैं । इन संभावित स्थितियों के चित्रण के माध्यम से लेखिकाओं ने पाठक के मन में, आने वाले कल की परिस्थितियों के प्रति अभी से जागरूकता उत्पन्न करने की कोशिश की है । अतः कल्पित स्थितियों के चित्रण में भी कल की पीढ़ी के प्रति प्रतिबद्धता ही नजर आती है । वास्तव में यह एक ऐसा महत्वपूर्ण पक्ष है जो लेखिकाओं की प्रतिबद्धता को बहुत ऊंचा उठा देता है । कहानियों में आयी हुई कल्पित स्थितियां इसलिए उतनी ही महत्वपूर्ण हैं जितनी जीवन की यथार्थपूर्ण स्थितियां ।

3. कहानियों में आये पात्र कहाँ तक सच्चे लगते हैं ?

जिस तरह कहानियों में कल्पित एवं अतिरंजित स्थितियों का वर्णन हुआ है वैसे ही पात्र भी इन कल्पित एवं अतिरंजित स्थितियों के तेज रफ्तार से उत्पन्न हुए लगते हैं । विभिन्न वर्गों के पात्रों के जरिये लेखिकाओं ने जीवन के सच्चाईयों पर प्रकाश डाला है ।

नारी पात्रों के माध्यम से लेखिकाओं ने नारी जीवन मे उभर कर आनेवाले व्यक्तिगत एवं पारिवारिक समस्याओं को चित्रित किया है । आलोच्य कहानियों में आने वाले पात्र समसामयिक जीवन बोध से इतने प्रभावित हैं कि कहीं वे दोहरी जिंदगी जीने को मजबूर हो गये हैं । आदर्शों के खण्डहरों पर चमलोटने की बजाय जीवन की यथार्थता को सही मायनों में समझते हुए संघर्षरत होना उन्हें स्वीकार्य है । इस कारण लेखिकाओं ने आदर्श,सत्य, साहस, उदारता जैसे परम्परागत गुणों की कहानी न कह कर स्वार्थ, झूठ और फरेब के शिकन्जों में फंसे हुए बौने मनुष्यों की कहानी कही है । शायद इसी वजह से उनका जीवन बोध और संवेदनाएं अधिक स्वाभाविक एवं यथार्थ परक लगती हैं ।

जहाँ तक नारी पात्रों का संबंध है, उन पर भी आधुनिक जालसाजी का नकाब गिरा हुआ है । शहरों में जीने वाली आधुनिकाओं की जिंदगी में इस तरह का फरेबी व्यक्तित्व अधिक ही झलकता है । विदेशी सभ्यता से जुड़ी हुई ऐसी भी नारी पात्र कहानियों में उभर आयी हैं जो पुरुष के समकक्ष खड़े होने में सक्षम है । वे ऐसे कार्य करती है जो एक स्त्री होने के नाते उन्हें नहीं करना चाहिये । इस तरह अधिकांश पात्र बीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध की विसंगतियों से जुड़े हुए लगते हैं ।

परन्तु भारतीय परम्परा को मान्यता देने वाले आदर्श पात्रों की भी झलक मिल जाती हैं, लेकिन बहुत कम । अधिकतर ऐसे पात्र निम्न व मध्य वर्ग में ही पाये जाते हैं । शायद अशिक्षा और अंधविश्वास ही इसकी वजह हो सकती है ।

जहाँ तक पात्रों की स्वाभाविकता और यथार्थता का सवाल है यह कहना पड़ता है कि यथार्थ के धरातल से जुड़े होने पर भी उनका चारित्रिक विधान कहीं - कहीं कल्पित और अतिरंजित सा लगता है । खास कर आधुनिकाओं के कारनामों को पारिवारिक एवं वैयक्तिक पृष्ठभूमि में आकलन करते समय लेखिकाएं कभी-कभी अतिरंजित होती दिखायी पड़ती हैं । काल्पनिक घटनाओं के माध्यम से पात्रों का चरित्र चित्रण करना, अभारतीय परिवेश में लेखक के संबंधों की व्याख्या करना, रिश्ते नातों को केवल भौतिक साधनों के माध्यम से आंकना आदि इसके उदाहरण हैं । वैसे भारतीय समाज भौतिकता की ओर उन्मुख हो रहा है परन्तु सौ फीसदी पाश्चात्यों के समान वह भौतिकान्ध हो गया है, यह नहीं कहा जा सकता है । कुछ कहानियों को पढ़ने के बाद यह आभास होने लगता है कि हमारे समाज में

रिश्ते नाते सब टूट गये हैं । केवल भौतिक सभ्यता ही हर बात का संचालन कर रही है । वास्तव में पात्र चित्रकी स्वाभाविकता पर प्रश्न चिन्ह लगानेवाले ये तमाम लेखिकाओं के चरित्र-चित्रण संबंधी दृष्टिकोण पर आँच लगानेवाले हैं। लेकिन यह मान कर इन सब बातों को मान्यता दी जाती है कि अतिरंजना और काल्पनिक उड़ान एक सीमा तक कलात्मक दृष्टि में आ ही जाते हैं और उनको उसी दृष्टि से देखना उचित होगा ।

4• क्या ये कहानियाँ भारतीय परिवेश का उल्लंघन कर अभारतीय जीवन को महत्व देती है ? अगर है तो क्यों ?

कहानियों में भारतीय परिवेश और अभारतीय परिवेश दोनों का सम्मिश्रित रूप स्पष्ट हुआ है । क्यों कि आज के भारतीय समाज में पूरब और पश्चिम की मिली-जुली सभ्यता का नया रूप देखा जा सकता है । हमारी यह विवशता है कि न तो हम पूर्ण रूप से पाश्चात्य सभ्यता को अपना पाते हैं, न ही भारतीय सभ्यता को । अत: कहानियों में लेखिकाओं ने ऐसी स्थितियों का वर्णन किया है जिसे न हम भारतीय कह सकते हैं न अभारतीय । सेक्स का उन्मुक्त प्रदर्शन, गैर स्त्री पुरुष-संबंध, वैवाहिक जीवन की असफलता, अवैध संबंधों की संकीर्णता आदि अपने देश के बड़े-बड़े शहरों में बड़े बड़े लोगों के बीच सामान्य रूप से देखा जा सकता है।लेकिन आज के "आधुनिक लोग" इसे "आधुनिकता" के अन्तर्गत मानकर चलते हैं और उच्छृंखल जीवन बिताते हैं । इसके फलस्वरूप उनका वैवाहिक एवं पारिवारिक जीवन तितर-बितर हो जाता है । पहले तो उन्हें घर टूटने का अथवा जीवन के बिखरने का गम नहीं होता, लेकिन कुछ समय के बाद वे हताशग्रस्त होकर मानसिक सन्तुलन खो बैठते हैं। लेखिकाओं ने मिली-जुली सभ्यता के रंग में रंगे आधुनिक मानव के टूटते-बिखरते जीवन का जीवन्त चित्रण प्रस्तुत किया है ।

उषा प्रियम्वदा की कई कहानियाँ विदेशी परिवेश में लिखी हुई हैं, जिस कारण कहानी की घटनाएं पात्र एवं परिस्थितियाँ भारतीय परिवेश के अनुकूल नहीं लगतीं। कहानियों में ऐसी कई प्रवासिनी भारतीय महिलाएं है जो पाश्चात्य जीवन की रंगीनियों और महत्वाकांक्षा की खातिर अपने देश और देश की मान्यताओं को ठुकरा कर विदेशी माहौल में इतनी घुल मिल जाती हैं कि उनका व्यक्तित्व न विदेशी का होता है। और न भारतीय का। परन्तु उनके जीवन में ऐसा भी समय आता है जब उन्हें अपने उच्छृंखल जीवन से घुटन होने लगती है। तब वे पुनः अपनी परम्परा से जुड़ने की कोशिश करती हैं। ऐसे पात्रों के माध्यम से लेखिका ने यह स्पष्ट करने का प्रयास किया है कि भारतीय चाहे कितना भी पाश्चात्य सभ्यता का अनुकरण करें, उनके मन के किसी कोने में भारतीय आदर्शों के प्रति श्रद्धा एवं आकर्षण के भाव विद्यमान रहते हैं।

पाश्चात्य सभ्यता से प्रभावित पात्रों के कार्य-कलापों के माध्यम से उषा प्रियम्वदा जैसी कुछ लेखिकाओं ने यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि ऐसे लोग अन्तर्राष्ट्रीय मानव समुदाय के अंग हैं कहानी का यह अन्तर्राष्ट्रीयकरण और अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टि से समस्याओं का आकलन देसे भारतीय दृष्टि से अस्वाभाविक लगता है, परन्तु उसका परिणाम यह होता है कि हिन्दी कहानी अन्तर्राष्ट्रीय स्थितियों से जुड़ने लगती है। अस्तित्ववादी विचार फ्री सेक्स ('Free sex') की समस्याएं, रिश्ते-नातों का यान्त्रिकीकरण आदि से प्रभावित अन्तर्राष्ट्रीय समाज के पात्रों को इसी दृष्टि से ही कहानी में प्रतिष्ठित किया जा सकता है। इस लिए उषा प्रियम्वदा जैसी लेखिकाओं का प्रयास हिन्दी कहानी को अत्यन्त आधुनिक पाश्चात्य चिन्तन प्रणाली एवं जीवन्त परिस्थितियों से जोड़ने की दिशा में रहा है।

हिन्दी कहानी को एक नया आयाम प्रदान करना इस प्रयास का सराहनीय पक्ष है । अत्यधिक रूप से लेखिकाओं ने नारी की अस्मिता की तलाश में भिन्न भिन्न तथ्यों को महत्वपूर्ण माना है ।

मूल्यांकन के विविध आयामों पर विचार करते समय पता चलता है कि आलोच्य कहानियों की गहराई में कुछ ऐसे तत्व विद्यमान हैं जो सामाजिक परिवर्तन की सूचना देते हुए नारी की बदलती भूमिका के नये सन्दर्भों को वाणी देते हैं । अधिकतर लेखिकाओं ने स्वातंत्र्योत्तर नारी की अनगिनत समस्याओं को उभारने के साथ साथ उसके अस्तित्व को विभिन्न कोणों से देखने का प्रयास किया है । बदलते हुए नारी चरित्र की रूप-रेखा प्रस्तुत करते हुए नारी की उस स्वतंत्र आत्मसत्ता की तलाश भी लेखिकाओं ने की है जो समाज सापेक्ष और समाज निरपेक्ष दोनों परिस्थितियों से जुड़ती और बिगड़ती है ।

ऐसे आलोच्य कहानियों के माध्यम से लेखिकाओं ने नारी की उस अस्मिता की खोज की है जो समसामयिक बोधों से जुड़ते हुए भी एक स्वतंत्र इकाई के रूप में अपना स्थान बनाये रखना चाहती है । लेखिकाओं ने नारी को उस भाव-भूमि पर खड़ा कर दिया है जहाँ से वह समूचे समाज को पूर्व आग्रहों से रहित होकर देखने में सक्षम बन गयी है । आधुनिक भारतीय नारी का यह प्रतीकात्मक रूप है और यही प्रतीकात्मक नारी कल के लिए यथार्थ बन सकती है । खोई हुई शक्ति को समेटती हुई, पुरुष के बराबर खड़े होने के आत्मविश्वास को सहेजती हुई, अपनी क्षमता का विकास करनेवाली यह नारी वास्तव में यह घोषित करती है कि वह पुरुष की दासी नहीं सहभागिनी है । समाज के लिए भार नहीं है वरन् समाज के तानेबानों को जोड़नेवाली प्रमुख कड़ी है ।

कहानियाँ इस सत्य को उजागर करती हैं कि नारी को अपनी अस्मिता को बनाये रखने में पुरुष समाज से संघर्ष अवश्य करना है। यह संघर्ष शारीरिक और भौतिक सीमाओं को लाँघता हुआ नैतिक एवं मानसिक धरातलों की ओर नारी के प्रस्थान को आवश्यक समझता है। स्वतंत्र चेतना का विकास कर शिक्षा की प्राप्ति के माध्यम से अगर इन सोपानों को पार करने में वह सफल हो जाती है तो नारी पुरुष शक्ति को भी पराजित करनेवाली महाशक्ति के रूप में अपनी अस्मिता को कायम कर सकती है। क्यों कि उसमें वे सारी क्षमताएँ विद्यमान हैं जो पुरुष में नहीं है।

9. क्या ये कहानियाँ आगामी साहित्य सर्जन की दिशा निर्धारित कर सकती है?

वैसे हर काल का साहित्य भविष्य के लेखन की दिशा को निर्धारित करने में अपना योगदान देता ही रहता है। इस दृष्टि से किसी भी कालखंड के साहित्य को आगामी लेखन का पूर्वगामी कहा जा सकता है। यहाँ सवाल नारियों के लेखन का है और नारी लेखिकाओं ने महिलाओं की समस्याओं को, परेशानियों को समझने और समझाने का सशक्त प्रयत्न किया है। इस कारण उनका कथ्य विषयगत सीमाओं से मुक्त नहीं है। स्वातन्त्र्योत्तर कालीन नारी के जीवन की विडम्बनात्मक स्थितियों का वर्णन कहाँ तक पुरुष समाज के लिए रोचक बन सकता है, यह एक सवाल है। लेकिन यहाँ यह भी याद रखना है कि स्त्री समाज का अस्तित्व पुरुष समाज से अलग होकर नहीं होता। इस कारण महिलाओं की समस्याएं परोक्ष रूप से पुरुषों की भी समस्याएं हैं अतः इन पर विचार करते समय नयी दिशाओं का निर्धारण करना समूचे साहित्यकार का धर्म हो जाता है।

उधर कहानियाँ राष्ट्रीय स्तर से ऊपर उठ कर कभी कभी अन्तर्राष्ट्रीय स्थितियों से अपना संबंध जोड़ बैठती है । ऐसे सन्दर्भ में कहानियों में आनेवाले पात्र सार्वलौकिक परिवेश से जुड़ने लगते हैं । इस अवसर पर ऐसा आभासित होता है कि लेखिकाओं ने विश्व नारी के स्वर को उभारा है । विषय की सीमाओं को इतना व्यापक बनाने की कोशिश वास्तव में मानवतावादी दृष्टि का ही परिचायक है । पाश्चात्य परिस्थितियों में जो भी पात्र दिखायी पड़ते हैं वे अपने परिवेशों से जुड़ कर पूर्णतया मानवता वादी बन जाते हैं ।

लेखिकाओं ने संघर्षरत महिलाओं के जीवन की झाँकियाँ प्रस्तुत कर आगे की दिशा को तय करने का प्रयास किया है । इस कारण महिलाओं की लेखनी समकालीन पाश्चात्य साहित्य से अवश्य कदम मिला सकती है । हीन ग्रन्थियों से, "अस्तित्व के अभिशाप" से एवं विकृतियों से मुक्त होने की प्रवृत्ति वास्तव में साहित्य की सर्जनात्मक प्रेरणा को प्रतिबद्धात्मकता के धरातल से जोड़ कर सकारात्मक बना देती है.। इस दृष्टि से ये कहानियाँ आगामी लेखन के लिए दिशा निर्धारित करती हुई स्वस्थ परम्परा की ओर बढ़ने की आवश्यकता पर ज़ोर देती है । इस लिए हम अवश्य यह कह सकते हैं कि लेखिकाओं ने अपने लेखन के माध्यम से हिन्दी कहानी के सामने स्वस्थ एवं प्रतिबद्ध लेखन परम्परा का दिशा-निर्देशन किया है ।

7· प्रतिबद्धात्मक साहित्य सर्जना से ये कहानियाँ कहाँ तक जुड़ी है ।

सर्जनात्मक क्षेत्र में "प्रतिबद्धता" एक ऐसा शब्द है जो हमेशा विवादों को खड़ा कर देता है । साहित्य सर्जना में लेखक कहाँ तक प्रतिबद्ध हो सकता है और कहाँ तक नहीं, इस पर अन्तिम रूप से कोई

निर्णय नहीं किया जा सकता । आलोच्य कहानियाँ विविध लेखिकाओं द्वारा लिखी गयी हैं और इस कारण प्रतिबद्धता की दृष्टि से सर्वमान्य निष्कर्ष लेना कठिन बन जाता है । फिर भी लेखिकाओं ने अधिकतर कहानियों में समाज सापेक्ष दृष्टिकोण को अपनाने का प्रयास किया है । सामाजिक संवेदना को लेखकीय प्रतिबद्धता की सीमाओं से जोड़ कर देखते समय पता चलता है कि प्रतिबद्धता लेखन को इन कहानियों में प्रमुखता प्राप्त हुई है ।

वैसे कहानियों में आयी हुई स्थितियों के आधार पर प्रतिबद्धता की मात्रा में असमानता हो सकती है। इसका कारण यह है कि पात्रों या चरित्रों को स्थापित करते समय लेखिकाओं की दृष्टि कहीं काल्पनिक स्थितियों से जुड़ गयी थी तो कहीं अतियथार्थ से । परन्तु जो भी हो, दोनों स्थितियों में, आधुनिक नारियों के प्रति लेखिकाओं की जो समर्थन भावना है उसको नकारा नहीं जा सकता । नारी की पीड़ा और उसकी आह, कराह को वाणी देते समय चाहे काल्पनिक स्थितियाँ ही क्यों न हो, लेखिकाओं की अन्तर्दृष्टि सम्पूर्ण रूप से नारी के प्रति प्रतिबद्ध हो जाती है । जहाँ परम्परावादी नारी का स्वरूप उभारा गया है वहाँ भी शोषण ग्रस्त नारी सहानुभूति का पात्र बन जाती है । विद्रोह करने वाली नारियों का चरित्र जहाँ दिखायी देता है, वहाँ एक ऐसा स्वर मुखरित होता है जो समाज में छाये हुए रंगीन असत्य को चुनौती देता हुआ नजर आता है । नारी के संबंध में जो अधूरी अवधारणाएं समाज में विद्यमान है उनका अन्त करके पुरुष के समान नारी का भी स्थान निर्धारित करना इस प्रतिबद्ध लेखन का एक और सत्य है ।

विवाहेतर संबंध, पर पुरुष से प्रेम आदि समाज की नकारात्मक प्रवृत्तियाँ, प्रतिबद्धता के सवालों को यद्यपि चुनौती देने वाली लगती हैं फिर भी समसामयिक बोध के प्रकाश में सुधारात्मक प्रवृत्तियों को जन्म देने के

मध्य में लेखिकाओं ने इस अंश को अंकित दिखाया है । इन्हीं कारणों से उच्छृंखलता के विचार के अन्दर भी नारी के प्रति आक्रोश का ही स्वर मुखरित होता है । समाज के लिए लेखिकाएं इस तरह से चेतावनी देती हैं कि नारी के प्रति पुरुष समाज यदि अपनी दृष्टि नहीं बदलेगा तो नारियों के उच्छृंखल होने की ओर परिवार के टूट कर बिखरने की संभावना अधिक है । इस दृष्टि से ये कहानियां उचित और प्रतिबद्धता की सीमाओं के अन्दर आ जाती हैं ।

8· लेखिकाओं की कहानियों में प्रतिबिम्बित नारी के बदलते स्वरूप कहां तक सच्चे हैं और कहां तक काल्पनिक ?

प्रतिबद्धतात्मक साहित्य सर्जना, साहित्यकार की उस सर्जनात्मक क्षमता पर आधारित होती है जिससे वह व्यक्ति और परिवेश को अपने अन्दर समा सकता है और पुनर्सर्जना के माध्यम से उनको विविध आयामों में जोड़कर प्रस्तुत करने लगता है । इस प्रयास में व्यक्ति ही नहीं परिवेश भी परिवर्तित परिस्थितियों के थपेड़ों में आकर अपना पूर्व निर्धारित स्वरूप खो देता है । परन्तु सर्जना के क्षणों में पुनःस्थापित होने वाली स्थितियां परिवर्तनोन्मुखता की सूचना तो अवश्य देती हैं लेकिन पूर्ण रूप से समाज की यथार्थता से तादात्म्य नहीं स्थापित कर पाती हैं । क्योंकि लेखिका के विविध इतने विधान हैं कि उनमें फेंका जाने वाला रंग कभी गहरा होता है तो कभी फीका । इस कारण आलोच्य कहानियों में प्रतिबिम्बित नारी का बदलता स्वरूप कहीं इतना सार्थक है कि वह नयी पीढ़ी का स्वर बन जाता है तो कहीं इतना उथला है कि कोई भी प्रभाव पाठक पर वह नहीं छोड़ पाता । रंगों की यह गहराई और फीकापन विविधात्मक परिस्थितियों से जुड़ कर आये हैं । इसलिए उनको पूर्ण रूप से स्वीकारना और पूर्ण रूप से नकारना कठिन बात लगती है ।

फिर भी आलोच्य कहानियों में नारी का जो बदलता स्वरूप प्रतिबिम्बित होता है वह वास्तव में बहुत ही आकर्षक एवं वैविध्यपूर्ण है। परम्परा की सीमाओं को तोड़ कर स्वतंत्र अस्मिता की खोज करनेवाली नारी का नया स्वरूप यद्यपि समूचे भारतीय नारी चेतना का प्रतिनिधित्व नहीं करता। फिर भी आंशिक रूप से यह सिद्ध करता है कि एक ऐसी पीढ़ी का अभी उदय हो रहा है जो पूर्व धारणाओं को उखाड़ फेंकने के लिए कटिबद्ध है। इस प्रयास में संघर्षरत नारी कहीं दायित्वों से लद कर पुरुष की दमन नीति से जूझ कर स्वतंत्र व्यक्तित्व की स्थापना करती है तो कहीं अपनी नारीगत सीमाओं में आबद्ध हो कर घुटन की जिंदगी बिताने को मजबूर हो जाती है। नारी का एक और स्वरूप उसकी उच्छृंखलता का द्योतक बन कर आता है जो नयी पीढ़ी की विशेषता के रूप में स्वीकारा जा सकता है।

नगरीय परिवेश में जीनेवाली नारियों के, परम्परा से भिन्न स्वरूप को कहानियों के माध्यम से उभार कर लेखिकाओं ने यह सिद्ध किया है कि आज की नारियों की युवापीढ़ी पूर्वाग्रहों से मुक्त होकर पुरुष से समानता स्थापित कर अपनी नयी अस्मिता की तलाश में लगी हुई है। ऐसी महिलाओं का वर्ग संख्या में शायद बहुत ही कम हो। फिर भी यह वर्ग तो अवश्य नगरों में दिखायी पड़ने लगा है।

वैसे नगर की समूची स्त्रियों की भावनाओं को ये कहानियाँ प्रतिबिम्बित नहीं करती। इसका अर्थ यह नहीं है कि समाज में परम्परावादी नारियों का अस्तित्व नहीं रहा। उनकी कहानी इसलिए नहीं कहीं गई है कि उनमें कोई नयापन नहीं है। परम्परा ग्रंथी नारी एक ढलती सभ्यता की अन्तिम कड़ी के रूप में लेखिकाओं के सामने उभरती है।

उधर लेखिकाओं ने भारतीयेतर परिस्थितियों में जीने वाली महिलाओं के रूप को भी दिखाया है जो पाश्चात्य संस्कृति से अत्यधिक प्रभावित हो। सेक्स की सीमाओं को लाँघती हुई, संबंधों को भौतिक मानती हुई, पाप और पुण्य की परवाह किये बगैर आगे बढ़ने वाली इन नयी नारियों की कहानी अजीब तो लगती है। परन्तु सत्य से दूर नहीं लगती। इसलिए नारी का उपर्युक्त स्वरूप स्वाभाविक ही जान पड़ता है।

लेखिकाओं ने एक ओर पाश्चात्य सभ्यता से प्रभावित नारी के स्वरूप को खूब उभारा है तो दूसरी ओर भारतीय नारी के त्याग, प्रेम और बलिदान को भी कहीं अनदेखा नहीं किया है। इन सभी तथ्यों को इकट्ठा करने पर भारतीय नारी का एक नया स्वरूप उभरता हुआ नज़र आता है। परम्परा की महान विशेषताओं से आबद्ध नारी को बदलते हुए परिवेश ने किस तरह आक्रोश और कुंठा की ज़िंदगी की ओर अग्रसर किया है, यह सबसे महत्त्वपूर्ण तथ्य लगता है। लेखकीय प्रतिबद्धता यहाँ यह दिखाने की कोशिश करती है कि नारी के स्वरूप को अगर सुरक्षित नहीं रखा गया तो आगामी पीढ़ी में आनेवाली नारी प्रेम और बलिदान की मूर्ति न बन कर स्पर्धा, प्रतिहिंसा और उच्छृंखलता को प्रश्रय देने वाली चंडी ही बन सकती है। समाज को चेतावनी देकर नारी की परिस्थितियों को सुधारने का आह्वान कहानियों के अन्तर्कोणों में मुखरित होता है।

इस अध्ययन के अन्त में, निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते हैं कि लेखिकाओं ने बड़े ही साहस और आत्मविश्वास के साथ स्वातन्त्र्योत्तर कालीन नारी के बदलते स्वरूप को भली भाँति चित्रित किया है। गाँव, कस्बे, शहरों और विदेशों से चुन कर उन्होंने जिन नारियों की कहानी प्रस्तुत की है उनके माध्यम से नारी का वैविध्यात्मक एवं आकर्षक स्वरूप हमारे सामने उभरने लगता है। वैसे इन कहानियों में आने वाले पात्र समूचे नारी पात्र का

प्रतिनिधित्व तो नहीं करते फिर भी समूची भारतीयता को प्रकट करनेवाली कल्पना भी तो होगी और आधारहीन लगती है । क्यों कि वर्गगत भेदों में आबद्ध होकर आर्थिक सीमाओं में बंधित होकर रहने वाली भारतीय नारी का आखिर कौन सा आदर्शात्मक रूप हो सकता है। इस लिए एक "रैनडम सेलेक्शन" के रूप में लेखिकाओं ने विभिन्न वर्गों से नारियों को चुना है और उनकी संवेदनाओं को स्वरबद्ध किया है । इन समूची संवेदनाओं की गहराई में नारी का वह स्वरूप झलकता है जो परम्परागत होते हुए भी परम्परागत नहीं रहा, जो प्रेम से सिंचित होने पर प्रेम पूर्ण नहीं रहा, जो त्याग और बलिदान की लहर से ओतप्रोत होने पर भी आत्मसमर्पण के लिए संयत नहीं रहा । क्योंकि अस्तित्व की विडम्बना आज की नारी को नारी रहने नहीं देती । यह एक महान सत्य है जिसको प्राय: सभी कहानियाँ उभार कर सामने रखती हैं । नारी के बदलते रूपों का आरम्भ और अन्त इसी बिन्दु पर होने लगता है ।

****

ग्रन्थ सूची

क्र.सं.	लेखक का नाम	पुस्तक तथा प्रकाशक का नाम
1.	अज्ञेय	आत्मनेपद भारतीय, वाराणसी, 1960
2.	अज्ञेय	स्रोत और सेतु राजकमल प्रकाशन, दिल्ली
3.	आशा रानी व्होरा	नारी शोषण आईने और आयाम नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली
44.	आशा रानी व्होरा	भारतीय नारी दशा : दिशा नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 1983
5.	इन्द्रनाथ मदान	हिन्दी कहानी अपनी जबानी राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 1968
6.	इन्द्रनाथ मदान	हिन्दी कहानी पहचान और परख लिपि प्रकाशन, दिल्ली, 1973
7.	उपेन्द्रनाथ अश्क	हिन्दी कहानी:एक अंतरंग परिचय नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद, 1967
8.	उर्मिला गुप्ता	स्वातन्त्र्योत्तर कथा लेखिकाएं राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली
9.	उषा प्रियंवदा	मेरी प्रिय कहानियाँ राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, 1974

10. उषा प्रियंवदा — जिंदगी और गुलाब के फूल
भारतीय, वाराणसी, 1961

11. उषा प्रियंवदा — कितना बड़ा झूठ
राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 1972

12. ओंकार शरद — महादेवी साहित्य
सेतु प्रकाशन, झाँसी ।

13. कमलेश्वर — नयी कहानी की भूमिका
अक्षर प्रकाशन, दिल्ली, 1966

14. कुमार विमल — सौन्दर्य शास्त्र के तत्त्व
राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली-2, 1981

15. कृष्णा सोबती — बादलों के घेरे
राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली ।

16. कृष्ण बिहारी मिश्र — आधुनिक सामाजिक आन्दोलन और आधुनिक हिन्दी साहित्य
आर्य बुक डिपो, नई दिल्ली, 1980

17. गंगा प्रसाद विमल — समकालीन कहानी का रचना-विधान
मुकुल पुस्तकालय, दिल्ली, 1967

18. गजानन माधव मुक्तिबोध — नये साहित्य का सौन्दर्य शास्त्र
राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 1971

19. चन्द्रकला पाण्डे — भारतीय समाज में नारी आदर्शों का विकास
राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली

20. चिरंजीलाल पराशर — नारी और समाज
राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली ।

21. जगदीश नारायण श्रीवास्तव — समकालीन कहानी दिशा और दृष्टि
राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली

22. जैनेन्द्र कुमार — समय, समस्या और सिद्धान्त
पूर्वोदय प्रकाशन, दिल्ली, 1971

23. देवेश ठाकुर — प्रसाद के नारी चरित्र
मलयज प्रकाशन, दिल्ली ।

24. देवीशंकर अवस्थी — नयी कहानी संदर्भ और प्रकृति
राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 1973

25. दीप्ति खंडेलवाल — वह तीसरा
राजपाल एण्ड संस, दिल्ली, 1976

26. दीप्ति खंडेलवाल — सलीब पर
राजपाल एण्ड संस, दिल्ली, 1976

27. दीप्ति खंडेलवाल — दो पल की छाँव
राजपाल एण्ड संस, दिल्ली, 1976

28. डॉ० धनंजय (संपादक) — समकालीन कहानी दिशा और दृष्टि
अभिव्यक्ति प्रकाशन, इलाहाबाद, 1970

29. डॉ० धनंजय — आज की हिन्दी कहानी
अभिव्यक्ति प्रकाशन, इलाहाबाद, 1969

30. नगेन्द्र — समस्या और समाधान
नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 1971

31. नगेन्द्र — काव्य बिंब
नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 1967

32. नवल किशोर — मार्क्सवाद और साहित्य
राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 1972

33. नामवर सिंह — कहानी : नयी कहानी
लोकभारती, इलाहाबाद, 1966

34. नित्यानंद शर्मा — आधुनिक हिन्दी काव्य में प्रतीक विधान
साहित्य सदन, देहरादून, 1966

35. निरूपमा सेवती — खामोशी को पीते हुए
नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 1972

36. पद्मा अग्रवाल — प्रतीकवाद
नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली,

37. परमानंद श्रीवास्तव — हिन्दी कहानी की रचना प्रक्रिया
ग्रन्थम, कानपुर, 1965

38. पाण्डेय शशिभूषण शीतांशु — नयी कहानी के विविध प्रयोग
लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1972

39. प्रह्लाद अग्रवाल — हिन्दी कहानी सातवाँ दशक
मैकमिलन, 1975

40. प्रमिला कपूर — भारत में विवाह और कामकाजी महिलाएं
राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 1976

41. प्रेमचंद नारायण सिन्हा — आधुनिक कहानी साहित्य में समकालीन जीवन की अभिव्यक्ति
अनुपम प्रकाशन, पटना ।

42. बटरोही — कहानी रचना प्रक्रिया और स्वरूप
अक्षर प्रकाशन, दिल्ली, 1973

43. डॉ० बंसीधर, डॉ० राजेन्द्र मिश्र — मन्नू भण्डारी का श्रेष्ठ सर्जनात्मक साहित्य
नटराज पब्लिशिंग हाउस, हरियाणा, 1983

44. डॉ० बालकृष्ण गुप्त — हिन्दी उपन्यास सामाजिक सन्दर्भ
अभिलाषा प्रकाशन, कानपुर, 1978

45. बिन्दु अग्रवाल — हिन्दी उपन्यास में नारी चित्रण
राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 1968

46. भगवान दास वर्मा — कहानी की संवेदनशीलता सिद्धांत और प्रयोग
ग्रन्थम, रामबाग, कानपुर, 1972

47. मन्नू भण्डारी — मैं हार गई
अक्षर प्रकाशन, नई दिल्ली, 1957

48. मन्नू भण्डारी — यही सच है और अन्य कहानियाँ
अक्षर प्रकाशन, नई दिल्ली, 1972

49. मन्नू भण्डारी — श्रेष्ठ कहानियाँ

50. मन्नू भंडारी — त्रिशंकु
अक्षर प्रकाशन, नई दिल्ली, 1981

51. मधुरेश — आज की हिन्दी कहानी विचार और प्रक्रिया
ग्रन्थ निकेतन, रानीघाट, पटना, 1971

52. मेहरुन्निसा परवेज़ — टहनियों पर धूप
नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1977

53. मोहनलाल "जिज्ञासु" — कहानी और कहानीकार
आत्माराम एंड सन्स, दिल्ली, 1963

54. मृदुला गर्ग — कितनी कैदें
इन्द्रप्रस्थ प्रकाशन, 1975

55. मृदुला गर्ग — टुकड़ा-टुकड़ा आदमी
नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1977

56. रघुवीर सिन्हा — आधुनिक हिन्दी कहानी समाजशास्त्रीय दृष्टि
अक्षर प्रकाशन, दिल्ली, 1977

57. रघुवर दयाल वार्ष्णेय — हिन्दी कहानी के बदलते प्रतिमान
पांडुलिपि प्रकाशन, दिल्ली, 1975

58. रमेशकुन्तल मेघ — क्योंकि समय एक शब्द है
लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद

59. रमेश चन्द्र लवानिया — हिन्दी कहानी में जीवन मूल्य
अमित प्रकाशन, गाज़ियाबाद, 1973

60• रामधारी सिंह दिनकर — धर्म, नैतिकता और विज्ञान
उदयाचल, पटना, 1969

61• रामधारी सिंह दिनकर — संस्कृति के चार अध्याय
राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 1956

62• रामचन्द्र वर्मा (अनु•) — नारी का मूल्य
हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर, बम्बई, 1955

63• रामस्वरूप चतुर्वेदी — भाषा और संवेदना
ज्ञानपीठ, वाराणसी

64• रामस्वरूप चतुर्वेदी — सर्जन और भाषिक संरचना
लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।

65• राजेन्द्र यादव — कहानी स्वरूप और संवेदना
नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 1968

66• राजेन्द्र यादव — एक दुनिया समानान्तर
अक्षर प्रकाशन, दिल्ली, 1970

67• लक्ष्मी कांत वर्मा — नये प्रतिमान पुराने निकष
भारतीय वाराणसी, 1966

68• लक्ष्मीदत्त गौतम — आधुनिक हिन्दी कहानी में प्रगति चेतना
कोणार्क प्रकाशन, दिल्ली, 1972

69• डॉ• लक्ष्मीनारायण लाल — हिन्दी कहानियों में शिल्प विधान का विकास [illegible]
साहित्य भवन, इलाहाबाद, 1965

70· डॉ॰ लालचन्द्र गुप्त मंगल — अस्तित्ववाद और हिन्दी कहानी
शोध प्रबन्ध प्रकाशक, दिल्ली, 1975

71· प्रोफेसर वासुदेव — हिन्दी कहानी और कहानीकार
वाणी-विहार, वाराणसी, 1961

72· विमल सहस्र बुद्धे — हिन्दी उपन्यासों में नारी का मनोवैज्ञानिक
पुस्तक संस्थान, कानपुर, 1974

73· डा॰ विनय — समकालीन कहानी समांतर कहानी
मैकमिलन कंपनी आफ इण्डिया लिमिटेड, 1977

74· विद्याधर शुक्ल [सं॰] — हिन्दी आलोचना और आज की कहानी
चित्रलेखा, प्रकाशन, इलाहाबाद, 1978

75· विश्वेश्वर प्रसाद वर्मा — नैतिकता का अन्वेषण
एस॰एस॰ प्रकाशन, पटना, 1955

76· वीरेन्द्र सक्सेना — काम संबंधों का यथार्थ और समकालीन हिन्दी कहानी
साहित्य भारती, दिल्ली, 1975

77· डॉ॰ शिवप्रसाद सिंह — आधुनिक परिवेश और नवलेखन
लोकभारती प्रकाशन, दिल्ली, 1977

78· डॉ॰ शंकर प्रसाद — सामाजिक उपन्यास और नारी मनोविज्ञान
अनुपम प्रकाशन, पटना, 1978

79· [illegible] — [illegible]

80. शिवानी — मेरी प्रिय कहानियाँ
राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, 1978

81. शैल कुमारी — आधुनिक हिन्दी काव्य में नारी भावना
हिन्दुस्तानी एकादमी, इलाहाबाद, 195

82. सत्यपाल सक्सेना — सामाजिक सर्वेक्षण और अनुसंधान
विकास पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 1970

83. डॉ. सत्येन्द्र त्रिपाठी — सामाजिक विघटन
उत्तर प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, 1973

84. सन्त बख्श सिंह — नयी कहानी कथ्य और शिल्प
आर्य बुक डिपो

85. सरनाम सिंह शर्मा "अरुण" — कृति और कृतिकार
विजय बुक डिपो, जयपुर, 1968

86. सरला दुआ — आधुनिक हिन्दी साहित्य में नारी
साहित्य निकेतन, कानपुर, 1965

87. सावित्री डागा — आधुनिक हिन्दी मुक्तक काव्य में नारी
देवनागर प्रकाशन, जयपुर, 1971

88. सीता राम "झा" — भारतीय समाज का स्वरूप
बिहार हिन्दी अकादमी, 1974

89. सुरेन्द्र तिवारी — प्रेमचंद और शरतचन्द्र के उपन्यास में मनुष्य के बिम्ब
सुषमा पुस्तकालय, दिल्ली-51, 1969

90.	सुरेश सिन्हा	हिन्दी उपन्यासों में नायिका की परिकल्पना अशोक प्रकाशन, दिल्ली, 1964
91.	सुरेश सिन्हा	हिन्दी कहानी उद्भव और विकास अशोक प्रकाशन, दिल्ली
92.	सुरेश धींगड़ा	हिन्दी कहानी दो दशक अभिनव प्रकाशन, नयी दिल्ली, 1978
93.	सुशीला मीतल	आधुनिक हिन्दी कहानी में नारी की भूमिकाएँ अनुपमा प्रकाशन, बम्बई, 1974
94.	श्री० सुरेन्द्र [सं०]	नयी कहानी दशा:दिशा संभावना अपोलो प्रकाशन, दिल्ली, 1966
95.	श्री० सुरेन्द्र [सं०]	नयी कहानी प्रकृति और पाठ परिवेश प्रकाशन, जयपुर, 1968
96.	हेमेन्द्र कुमार पानेरी	स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी कहानी कथ्य और शिल्प आलेख प्रकाशन, दिल्ली, 1978

97. Akhileswar Jha — Modernisation And the Hindu socio-culture
B.R. Publishing corporation, Delhi, 1978

98. Altakar, A.S. — The posision of Womenin Hindu civilisatio
-----

99. Doranne Jacobson
Susan Swadley — Women in India Two perspective
Manhar Book Service, New Delhi, 1979

100. Hale, C.A. — Changing status of Women
Allied publishers, Bombay, 1969

101. Hav elock Ellis — Studies in the psychology of sex Vol.II
William Heinemann Medical Books Ltd.,
London, 1937

102. Jessie Bernard — Women, Mothers, Volumes and Opinion
Allied publishing comany, Chicago

103. Kala Rani — Role Conflict in working Women
Chetan Publications, New Delhi, 1976

104. Kupuswamy, B. — A Study of pinion regarding marrieage and Divorce.
Asia ublishing House, Bombay, 1957

105. Lucas, F.L. — Style
Cassel & Co., London

106. Mahendra Kulasresta, Maheep
Singh, Devendra issar, — Modern Hindi short story
Kripa shekar Singh-Editions — Arnold Heinemann Publishers,197

107.	Mary Frances Billington	Women in India Amarko Book Agency, New Delhi, 1973
108.	Mill, J.S.	The Subjective of Women The M.I.I. Press Manachusens, 1976
109.	Patel, M.S.	The Educational Philosophy of Mahatma Gandhi. Navajivan Publishing House, Ahemedabad,19
110.	Pramila Kapur	Love Maggiage and Sex Vikas publications, Delhi, 1973
111.	Pramila Kapur	Marriage and working women in India Vikas publications, Delhi.
112.	Pratima Asthana	Women's Movement in India Vikas publishing House Private Ltd.,Delhi
113.	Raj Mohini Sethi	Modernisation ofworking women National publishing House, New Delhi, 197
114.	Sir, A.K.	Sex Marriage in India Allied Publishers, Calcutta, 1973
115.	Tara Ali, Baig	India's Women Power S. Chand and Co.(Pvt.) Ltd.
116.	Wadia, A.M.	The Ethics of Feminism Asian Publications Services.

117. Bertrand Russell — Human Society in Ethics and politics
George Allen And Unwinner Ltd., London, 3

118. Pushpendra Kumar Sharma - Hindu Religion and Ethics
(Editor) — Asian Publication Service, New Delhi

119. Radhakrishnan, S — Religion and Society
George Allen And Unwinner Ltd., London, 56

120. Suchil Kumar Maitra — The Ethics of Hindu
Asian Publications service, New Delhi

(क) हिन्दी कोश तथा अन्य सहायक ग्रन्थ

धीरेन्द्र वर्मा — हिन्दी साहित्य कोश
ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी ।

(ख) अंग्रेजी

Henry Vidoff — The Pocket Book of Quotations
Pocket Books, INC, New York

Inc. E.B. — Encyclopaedia Britanica
William Bothman Publisher

पत्र-पत्रिकाएं

1. आजकल	2. कल्पना	3. ज्योत्सना
4. प्रकर	5. भाषा (त्रैमासिक)	6. लहर
7. वातायन	8. विकल्प तथा साहित्य विशेषांक	
9. विचार मासिक	10. संचेतना	
11. समीक्षा	12. सारिका	13. हिन्दुस्तानी त्रैमासिक

****